अल्लाह के साथ किसी और को मत पुकारो

क़ब्रपरस्ती

एक वास्तविक अवलोकन

लेखक

हाफिज़ सलाहउददीन यूसुफ़

प्रकाशक

अल किताब इंटरनेशनल

मुरादी रोड बटला हाउस जामिया नगर

नई दिल्ली-25

Www.IslamicBooks.Website

क़ब्र परस्ती

एक तथ्य पूर्ण अवलोकन

लेखक

हाफ़िज़ सलाहुद्दीन यूसुफ़

प्रकाशक

अल किताब इन्टर नेशनल

मुरादी रोड, बटला हाउस,

जामिया नगर, नई दिल्ली–25

फ़ोन– 26316973, 26925534

Www.IslamicBooks.Website

सर्वाधिकार प्रकाशकाधीन

नाम पुस्तक	:	क़ब्र परस्ती
लेखक	:	हाफ़िज़ सलाहुद्दीन यूसुफ़
ज़ेरे निगरानी	:	स0 शौकत सलीम
प्रकाशन	:	2012
संख्या	:	1000
मुल्य	:	Rs. 120
प्रकाशक	:	अल किताब इन्टर नेशनल,नई दिल्ली–25

मिलने का पता:

1–इस्लामिक पब्लिशिंग हाऊस, उर्दू बाज़ार, दिल्ली–6

2–मक्तबा तर्जुमान 4116 उर्दू बाज़ार दिल्ली–6

3–दारुल मआ़रिफ़ मुहम्मद अली रोड बम्बई

अल किताब इन्टर नेशनल

मुरादी रोड, बटला हाउस,

जामिया नगर, नई दिल्ली–25

Www.IslamicBooks.Website

इन्तिसाब

❍ तौहीद के उन मतवालों के नाम जो इस्लाम का कलिमा तो पढ़ते हैं लेकिन उसमें मौजूद तौहीद की हक़ीक़त से परिचित नहीं।

❍ नबी करीम सल्ल0 से आस्था एवं मुहब्बत तो रखते हैं लेकिन आप पर उतारी गई इस्लामी शरीअत की बजाए धर्म के नाम पर अपने आप से गढ़ी हुई रस्मों ही को दीन समझे बैठे हैं।

❍ जो उलमा, मशाइख़ और खानक़ाही बुजुर्गों से हार्दिक लगाव रखते हैं लेकिन इन दीन के वारिसों और मिम्बर व मेहराब के नाम लेने वालों ने अपनी गिरोह बन्दियों को सुरक्षा पहुंचाने के लिए दीन से अनभिज्ञ लोगों को अंध विश्वास और बिदअतों में उलझाया हुआ है।

❍ इस पुस्तक को हर प्रकार के पक्षपात से हट कर और सच्चे तालिबे हक़ बनकर पढ़िए तो निश्चय ही अल्लाह आपको तौहीद की हक़ीक़त, सुन्नत के महत्व और सहाबा के तौर तरीक़ों को समझने और उनको अपनाने का सौभाग्य प्रदान करेगा।

(लेखक)

Www.IslamicBooks.Website

मैं गिरायी हुई पक्की क़ब्रों को सोने चांदी से दोबारा निर्माण कराने के लिए तैयार हूं बशर्ते कि .....

सुलतान अब्दुल अज़ीज़ नजद व हिजाज़ के शासक का आदेश

हिन्दुस्तानी प्रतिनिधि मंडल के इस सवाल पर कि उन्होंने पक्की क़ब्रें और मज़ार क्यों गिराए, सुलतान अब्दुल अज़ीज़ (नजद एवं हिजाज़ के शासक) ने निम्न जवाब दिया——

क़ब्रों और कुब्बों का तत्काल इस प्रकार सुधार करा दिया जाएगा कि उनका सम्मान बराबर बना रहे और यह सुरक्षित रहें, लेकिन उनके दोबारा निर्माण के बारे में उन्होंने साफ़ साफ़ फ़रमाया कि पवित्र मक़ामात में केवल इस्लामी शरीअत ही के अनुसार फ़ैसला किया जएगा और यही शरअी क़ानून यहां लागू होगा जिसकी व्याख्या सल्फ़ सालिहीन और चारों इमामों ने की है। यदि दुनिया के शोध कर्त्ता उलमा इसका फ़ैसला कर दें कि दोबारा इन क़ब्रों का निर्माण करना अवश्यक है तो मैं सोने चांदी से इनको निर्माण कराने के लिए तैयार हूं।

- रसूल सल्ल0 के रोज़े के बारे में किसी बहस की ज़रूरत नहीं इसकी सुरक्षा और इसके अस्तित्व को बाक़ी रखना हर मुसलमान का फर्ज़ है और इसकी रक्षा के लिए मैं यह ऐलान करता हूं कि मैं अपनी जान और सारे परिवार को इसपर कुरबान कर दूंगा।

Www.IslamicBooks.Website

बिस्मिल्लाहिर्रहमानिर्रहीम

मुक़द्दमा

इस किताब में मेरे कुछ वे लेख शामिल हैं जो क़ब्र परस्ती के विरोध में लिखे गए थे और "अलऐतिसाम" में यदा कदा प्रकाशित हो चुके हैं।

इन लेखों में उन "तर्कों" का सार में अवलोकन किया गया है जो क़ब्र परस्ती जैसे खुले शिर्क के हक़ में मुख्य रूप से बरेली उलमा या उनके समर्थक लेखकों की ओर से प्रस्तुत किए जाते हैं। जिन लोगों ने इन लेखों को पढ़ा था उनकी इच्छा थी कि इन्हें पुस्तक का रूप दिया जाए ताकि इनसे अधिक से अधिक लाभ उठाया जा सके।

इन्हीं दोस्तों और बुजुर्गों की इच्छा पर यह पुस्तक प्रकाशित की गयी। अल्लाह की ज़ात से संभव है कि वह इसके द्वारा भटके हुए लोगों को तौहीद और सुन्नत के सीधे रास्ते पर चलने का सौ भाग्य प्रदान करे। और शिर्क व बिदअत से तौबा करने की हिदायत दे। ये लेख चूंकि विभिन्न समयों में लिखे गए हैं और इनका विषय सबका लग–भग एक ही है इसलिए कुछ स्थानों पर तकरार की सूरत बन गयी है लेकिन इसे इसलिए रहने दिया गया कि तकरार भी बात को मस्तिष्क में बैठाने के लिए लाभकारी है।

किताब का यह दूसरा एडीशन है जो अत्यन्त अच्छी छपाई, और कुछ संशोधनों के साथ प्रकाशित किया जा रहा है जिसके लिए हम चौधरी मुहम्मद सिद्दीक़ साहब के विशेष रूप से आभारी हैं जिनके ख़ास सहयोग से यह उच्च एडीशन तैयार हुआ।

सलाहुद्दीन यूसुफ़

सम्पादक "अल ऐतिसाम" लाहौर

रबीउस्सानी 1412हि0 (अक्टूबर 1991ई0)

Www.IslamicBooks.Website

विषय सूची

1– ग़ैरुल्लाह को मदद के लिए पुकारना शिर्क है या नहीं 9
2– दुआ (पुकारना) इबादत है या नहीं? 10
3– सहाबा व ताबअीन ने किसी भी मृत व्यक्ति को कभी नहीं पुकारा 12
4– इमाम अबु हनीफ़ा की एक घटना 15
5– मूर्ति पूजक मुश्रिकीन भी पालन कर्त्ता अल्लाह ही को मानते थे 17
6– क़ौमे नूह के पांच बुत 19
7– क़ब्र परस्त मुसलमानों का शिर्क 20
8– हनफ़ी फ़िक़्ह का स्पष्टीकरण 22
9– अल्लाह के सिवा किसी और को आलिमुल ग़ैब (ग़ैब का जानने वाला) समझना कुफ्र है 24
10–या शैख अब्दुल क़ादिर शैअन लिल्लाह क्यों नाजायज़ है? 25
11– क़ब्र परस्तों का खुला शिर्क– एक नमूना 27
12– तौहीद की दावत 31
13– क़ब्र परस्ती की एक वकालत का अवलोकन 34
14– शहीदों की बरज़ख़ी ज़िन्दगी से ग़लत विवेचन 39
15– मुर्दे से कल्पना में बातें करना व मदद मांगना अलग अलग है 40
16– अत्तहियात में सलाम का पढ़ना 42
17– अल्लाह के साथ दूसरों को पुकारना शिर्क व बिदअत है या नहीं? 43

Www.IslamicBooks.Website

18– एक अज्ञात व्यक्ति के सपने से विवेचन 45
19– अदबुल मुफ़रद की रिवायत से विवेचन 48
20– एक स्टीकर का अवलोकन 58
21– या सारियतुल जबल की तहक़ीक़ 63
22– अल्लाह को छोड़कर दूसरों से मदद मांगना शिर्क है 69
23– रज़ाए मुस्तफ़ा के सवालों के जवाब 76
24–सम्पादक रज़ाए मुस्तफ़ा की परेशानी 92
25– क्या यह हनफ़ी फ़िक़्ह से साबित है? 93
26– प्रौ0 ताहिरुल क़ादरी की सेवा में 97
27– बुजुर्गाने दीन की क़ब्रों पर मेले 99
28– उर्स के स्वीकरण में एक डाक्टर की दलीलें 106
29– दलीलों का सारांश 107
30– इन दलीलों की हक़ीक़त 109
31– मरने वाला क़दमों की आहट सुनता है 112
32– "दुल्हन की तरह सो जा" से उस का स्वीकरण 113
33– डा. साहब का ज्ञान भंडार? शफ़ा अत का मसला 115
34– क्या हर क़ब्र में नबी सल्ल0 हाज़िर होते हैं? 117
35– उर्स की असल हक़ीक़त 120
36– क़ब्र परस्ती के नाम पर मुर्दों की हडडियां बेचने का कारोबार 122
37– मासिक "अलबर्र" के सम्पादकीय का सारांश 123
38– क़ब्रों में दफ़न बुजुर्ग और शाह वलीउल्लाह 137
39– औक़ाफ़ विभाग की आय के साधन 144
40– नवाए वक़्त के जवाब में 150

Www.IslamicBooks.Website

41– ग़लत अनुवाद व टीका करने पर रोक लगाने के क़ानून की मन्ज़ूरी 174
42– हज़रत बिलाल से संबंधित घटना की हक़ीक़त 183
43– नबी की वफ़ात पर मिन्हाजुल कुरआन की रिवायत 189
44– कौन कहता है कि अम्बिया और औलिया मरे नहीं? 194
45– निराधार हिकायतें 200
46– हमारा मत 207
47– पक्की क़ब्रों की मनाही पर हदीस 210
48– कुछ आवशयक स्पष्टीकरण 212
49– हनफ़ी फ़िक़्ह और पक्की क़ब्रें 213
50– एक अवश्यक स्पष्टी करण 214
51– क़ब्रों की ज़ियारत और दुआ 216
52– तौहीद की तीन क़िसमें 219
53– नबी की क़ब्र की ज़ियारत की शरअी हैसियत 222
54– सुलतान बिन अब्दुल अज़ीज़ और क़ब्रों का ध्वस्त किया जाना 228
55– सऊदी अरब का महान एतिहासिक कारनामा 234
56– सार्वजनिक घोषणा 237
57– खिलाफ़त कमेटी के तीन प्रतिनिधि मंडल 241
58– मौलाना सैयद सुलेमान नदवी का स्पष्टी करण 243
59 मौलाना अबुल कलाम आज़ाद का स्पष्टी करण 244
60– मौलाना ज़फ़र अली खां का नार–ए हक़ 251
61– ततहीरे यसरिब 255
62– अमीरुल मोमिनीन इब्न सऊद 257

Www.IslamicBooks.Website

(1)

ग़ैरुल्लाह को मदद के लिए पुकारना शिर्क है या नहीं?

दैनिक "जंग" लाहौर की अनेक क़िस्तों में "रिज़वान" लाहौर के सम्पादक मौलाना महमूद अहमद रिज़वी का एक लेख प्रकाशित हुआ जिसमें कहा गया है कि ग़ैरुल्लाह को मदद के लिए पुकारना शिर्क नहीं है क्योंकि.....

" ग़ैरुल्लाह को मदद के लिए पुकारना शिर्क है तो मालूम होना चाहिए कि सहाबा किराम से लेकर अब तक मुसलमानों की इस पर सहमति रही है कि अल्लाह को प्रभावी, वास्तविक स्वामी व पालन कर्त्ता मानते हुए और बुजुर्गाने दीन को मदद के लिए वसीला बनाना और उनको पुकारते हुए उनसे मांगना और उनको मदद के लिए पुकारना जायज़ है। अतएव फ़तावा की किताबों में से मशहूर फ़तावा ख़ैरियह में है। या शैख़ अब्दुल क़ादिर "शैअन लिल्लाह" कहना जायज़ है। क्योंकि यह मात्र पुकार है और अल्लाह के लिए उनसे सवाल है। इसी प्रकार इमाम शमसुद्दीन रमली शाफ़ओ अपने फ़तावा में फ़रमाते हैं " नबियों, रसूलों, औलिया, उलमा से न्याय याचना करना (उनको मदद के लिए पुकारना) जायज़ है। अल्लाह के रसूल व पैग़म्बर और औलिया मरने के बाद भी मदद कर सकते हैं।"

(यही लेख रिज़वी साहब की मासिक पत्रिका " रिज़वान" लाहौर (जुलाई 1982) में प्रकाशित हुआ है।

Www.IslamicBooks.Website

पुकारना (दुआ करना) इबादत है

अब हम सार में उपरोक्त समाचार पत्रों के तर्कों की हैसियत स्पष्ट करते हैं। सबसे पहले तो यह कहा गया है कि ग़रुल्लाह को मात्र पुकारना शिर्क नहीं है अलबत्ता ग़ैरुल्लाह की उपासना करना शिर्क है।

बेशक मात्र पुकारना शिर्क नहीं है। हम अपने बच्चे को पुकार कर बुलाते हैं किसी मित्र को आवाज़ देते हैं तो यह शिर्क नहीं है न यह पुकारना विवाद का विषय है। आपत्ति जनक यह है जैसे " या शैख़ अब्दुल क़ादिर शैअन लिल्लाह" या रसूलुल्लाह अग़सिना, या अली मदद, आदि। यह पुकारना शिर्क ही के अन्तर्गत आता है क्योंकि पुकारने वाला इनके बारे में यह विश्वास रखता है कि हज़ारों मील की दूरी के बावजूद यह मृत बुजुर्ग मेरी आवाज़ सुनता है, मेरे हालात से अवगत है। वह हाज़िर नाज़िर है और कायनात में सब कुछ करने की ताक़त रखता है इसी लिए यह व्यक्ति उस बुजुर्ग की प्रसन्नता हासिल करने के लिए उसके नाम की नज़्र व नियाज़ देता है। उसके नाम पर जानवर कुरबान करता है। उसकी क़ब्र पर चादर चढ़ाता है और उसकी नाराज़ी से डरता है।

उसका विश्वास होता है कि यदि मैंने ग्यारहवीं न दी तो वे मुझसे नाराज़ हो जाएंगे मेरे कारोबार को हानि पहुंचाएंगे। जबकि ग़ैब को जानने वाला, लाभ व हानि देने वाला, सारे कामों को करने की ताक़त रखने वाला केवल अल्लाह है और ये सारे गुण अल्लाह ही के लिए हैं जिनमें उसका कोई भागीदार नहीं लेकिन "या अली" या शैख़ अब्दुल क़ादिर शैअन लिल्लाह" आदि पुकारने वाला ये सारे गुण उस मृत बुजुर्ग में मानता है।

इस विश्वास के साथ किसी भी मृत व्यक्ति को पुकारना ही

Www.IslamicBooks.Website

उसकी उपासना है। इसी को कुरआन ने "यद अून" के शब्द से पुकारा है जिसका अर्थ " जंग" के लेखक ने स्वंय ही उपासना व पूजा किया है। शायद लेखक समझते हैं कि लोगों को इस तरह धोखा देना आसान है कि हम तो बुजुर्गों को केवल पुकारते हैं उनकी उपासना नहीं करते यद्यपि इस तरीक़े से किसी को पुकारना ही उसकी उपासना करना है। इसी लिए दुआ (पुकारना) भी बिना किसी मतभेद उपासना ही समझी जाती है। नबी सल्ल0 का फ़रमान है।

"पुकारना (दुआ करना) यही उपासना है। (मिश्कात पृ0 194)

एक दूसरी रिवायत में फ़रमाया....

" दुआ (पुकारना) उपासना का मग़ज़ है। (मिश्कात–पृ0 194)

और कुरआन ने भी दुआ को उपासना ही कहा है। फ़रमाया.....

"और तुम्हारे पालनहार ने फ़रमाया– मुझे पुकारो, मैं तुम्हारी पुकार को कुबूल करूंगा, बेशक़ जो लोग मेरी उपासना (अर्थात मुझे पुकारने और मुझसे दुआएं करने) से इन्कार करते है शीघ्र ही वे जहन्नम में अपमानित होकर दाख़िल होंगे।"

यहां यसतकबिरू न अन दअवती की जगह अल्लाह ने फ़रमाया अन इबादती। और कुरआन का यह संदर्भ साफ़ बता रहा है कि अलौकिक तरीक़े से किसी को पुकारना और मुश्किल कुशा समझ कर उससे दुआ करना उसकी उपासना करना ही है। इसलिए मुर्दा बुजुर्गों को मदद के लिए पुकारना और उनसे मदद मांगना और "या शैख़ अब्दुल क़ादिर शैअन लिल्लाह या " या अली मदद" आदि कहना उनकी उपासना करना ही है। क़ियामत के दिन ये बुजुर्ग अपनी इस उपासना का इन्कार कर देंगे और अल्लाह से कहेंगे ऐ

Www.IslamicBooks.Website

अल्लाह! हम इनकी इस पूजा से (जो ये दुआ और मदद की सूरत में हमारी करते थे) बिल्कुल अनभिज्ञ थे। (यूनुस–29)

यहां भी मुर्दा बुजुर्गों से दुआ को उनकी उपासना ही कहा गया है जिससे वे क़ियामत के दिन इन्कार करेंगे और कहेंगे कि हमें तो इनकी उपासना (दुआ व पुकार) का कोई पता ही नहीं। मतलब यह है कि इस प्रकार किसी से दुआ करना उसकी उपासना करना ही है इसे ग़लत और टीका के ख़िलाफ़ कहना स्वंय ग़लत बल्कि धोखा बाज़ी है।

"देते हैं धोखा ये बाज़ीगर खुला"

सहाबा व ताबओन ने किसी भी मृत व्यक्ति को कभी नहीं पुकारा

यह दावा करना कि ..... " सहाबा किराम (रज़ि0) से लेकर अब तक मुसलमानों की इस पर सहमति रही है कि अल्लाह को प्रभावी, वास्तविक स्वामी मानते हुए मृत बुज़ुर्गों को वसीले के रूप में पुकारना, उनसे मदद मांगना और उनको पुकारना जायज़ है" असल में सहाबा किराम (रज़ि0) और मुस्लिम समुदाय पर यह बहुत बड़ा बोहतान और झूठ है। यदि ऐसा होता तो सहाबा के दौर की कोई दलील पेश करनी चाहिए थी। तबअ ताबओन की कोई घटना पेश करनी चाहिए थी और कुछ नहीं तो अपने इमाम अबू हनीफ़ा की प्रसिद्ध किताब का कोई हवाला दिया होता। दावा तो लेखक ने इतना बड़ा किया लेकिन यदि हवाला वे दे सके हैं तो केवल दो अपरिचित किताबों का जिनमें से एक ग्यारहवीं सदी हिजरी के एक शाफ़ओ फ़तावा की है न सहाबा (रज़ि0) व तबअ ताबओन (रहिम0) का कोई मुसतनद या ग़ैर मुसतनद हवाला चारों इमामों में से किसी का इर्शाद और न फ़िक्ह से कोई दलील। यह बड़ी विचित्र सहमति है।

Www.IslamicBooks.Website

बात यह है कि सहाबा किराम और इमामों और फ़ुक़हाए अहनाफ़ इनमें से किसी ने भी किसी मुर्दा को मदद के लिए नहीं पुकारा कभी इनसे मदद नहीं मांगी क्योंकि उनका विश्वास यही था कि मरने के बाद कोई मुर्दा किसी की फ़रियाद नहीं सुन सकता जिस का स्पष्टी करण कुअआन ने किया है।

" ऐ पैग़म्बर! तू क़ब्र वालों को कोई बात नहीं सुना सकता।"

(सूरह फ़ातिर– 22)

मृत बुजुर्गों से मदद मांगना और उनको वसीला बनाना जायज़ नहीं

इसके तर्क सुनिए.....

सही बुख़ारी में हदीस मौजूद है

" हज़रत अनस रज़ि0 रिवायत करते हैं कि हज़रत उमर फ़ारूक़ रज़ि0 के दौर में जब भी अकाल पड़ता तो हज़रत उमर हज़रत अब्बास से बारिश की दुआ करवाते और फ़रमाते...ऐ अल्लाह! पहले हम तेरे नबी से बारिश के लिए दुआ कराते (जब वे हम में जीवित मौजूद थे) तू हमें वर्षा से लाभान्वित करता। अब (जब कि नबी सल्ल0 हम में मौजूद नहीं हैं) तेरे नबी के चचा को हम तेरे समक्ष वसीले के रूप में (अर्थात दुआ कराने के लिए) पेश करके दुआ कर रहे हैं या अल्लाह इस दुआ को कुबूल फ़रमा। हम पर वर्षा कर। (रावी कहता है) कि इस पर वर्षा हो जाती।

(सही बुखारी 1– 137)

और फ़तहुल बारी में हज़रत अब्बास रज़ि0 की दुआ इस प्रकार है।

"या अल्लाह! बलाएं गुनाह के कारण आती हैं और तौबा के द्वारा दूर हो जाती हैं। या अल्लाह! तेरे नबी के साथ मुझे निकटतम

Www.IslamicBooks.Website

संबंध और निसबत के कारण जो सम्मान हासिल है उसको देखते हुए इन्होंने मुझे तेरे समक्ष वसीला बनाया है (अर्थात दुआ के लिए लाए हैं) या अल्लाह! ये गुनाह से भरे हाथ तेरी तरफ़ फ़ैले हुए हैं और हमारी पेशानियां तौबा के लिए तेरी तरफ़ झुकी हुई हैं। या अल्लाह! हम पर वर्षा भेज। (फ़तहुल बारी 2– 497)

इस दुआ के बाद आसमान ने पहाड़ों जैसे दहाने खोल दिए। ज़मीन शादाब हो गयी और लोगों में जीवन की लहर दौड़ गयी।

इस घटना से सहाबा किराम रज़ि0 का तरीक़ा स्पष्ट हो जाता है कि उन्होंने किसी मुर्दा व्यक्ति से दुआ नहीं करायी यहां तक कि नबी सल्ल0 से भी न्याय याचना नहीं की, उनको मदद के लिए नहीं पुकारा और उनका वास्ता देकर दुआ नहीं मांगी, बल्कि नबी सल्ल0 की बजाए आपके चचा हज़रत अब्बास रज़ि0 से विनती की कि वे अल्लाह से दुआ करें। इस्तिसक़ा की दुआ और नमाज़ सार्वजनिक स्थान पर होती है तो सहाबा किराम रज़ि0 ने ऐसा ही किया यही उनका तरीक़ा ठहरा। जब नबी सल्ल0 की वफ़ात के बाद आप तक से दुआ करानी जायज़ नहीं तो आपसे ज्यादा फ़ज़ीलत वाला कौन है कि जिस से अब दुआ करायी जाए।

सहाबा के दौर ही की एक और घटना है जिसे मुल्ला अली क़ारी हनफ़ी (रह0) ने मिरक़ात शरह मिश्कात में दसवीं सदी हिजरी के शाफ़ओ फ़क़ीह इब्ने हजर मक्की के हवाले से नक़ल की है।

" इब्ने हजर (मक्की) कहते हैं कि हज़रत मुआवियह (रज़ि0) ने यज़ीद बिन असवद रज़ि0 को साथ लेकर बारिश के लिए दुआ करायी और फ़रमाया– ऐ अल्लाह! हम में जो अफ़ज़ल और बेहतर है उसके वसीले से हम तेरी बारगाह में वर्षा की दुआ करते हैं। ऐ अल्लाह! हम यज़ीद बिन असवद (रज़ि0) को साथ लाए हैं और

Www.IslamicBooks.Website

इस्तिसक़ा कर रहे हैं। (फिर हज़रत मुआवियह रज़ि0 ने कहा) ऐ यज़ीद! अल्लाह की बारगाह में दुआ के लिए हाथ उठाइए। उन्होंने हाथ उठाए और लोगों ने भी हाथ उठाए। अतः पश्चिम की ओर से ढाल की तरह एक घटा उठी और हवा चली और उनके लिए वर्षा का इस प्रकार आना हुआ कि क़रीब था कि लोग अपने घरों को न पहुंच सकें। (मिरक़ात 2– 288)

इस घटना से पता चला कि सहाबा किराम रज़ि0 का तरीक़ा ज़िन्दों से दुआ कराने का था लेकिन मृत से दुआ कराने की उनके यहां कोई धारणा न थी। अतएव शाह वलीउल्लाह मुहद्दिस देहलवी (रहिम0) हज़रत अब्बास रज़ि0 से वर्षा के लिए दुआ कराने की हदीस का उल्लेख करके फ़रमाते हैं।

इससे मालूम हुआ कि सहाबा किराम रज़ि0 गुज़रे हुए (मृत) और ग़ायब लोगों का वसीला पकड़ना जायज़ नहीं समझते थे वर्ना हज़रत अब्बास रज़ि0 नबी सल्ल0 से बेहतर न थे (यदि मृत लोगों से दुआ कराना जायज़ होता) तो उन्होंने क्यों न कहा कि ऐ अल्लाह। पहले हम तेरे नबी के साथ वसीला पकड़ते थे अब हम तेरे नबी की रूह के साथ वसीला पकड़ते हैं।

इमाम अबु हनीफ़ा की घटना

ये तो सहाबा रज़ि0, तबअ ताबओन रह0 के दौर की घटनाएं थीं अब ख़ास इमाम अबु हनीफ़ा की एक घटना देखें जिसे शाह मुहम्मद इसहाक़ देहलवी के एक शिष्य मौलाना मुहम्मद बशीरुद्दीन क़न्नौजी (वफ़ात 1296 हि0) ने फ़िक़्ह की एक किताब "ग़राइब फ़ी तहकीकुल मज़ाहिब" के हवाले से लिखा है।

" इमाम अबु हनीफा ने एक व्यक्ति को देखा कि वह कुछ लोगों की क़ब्रों के पास आकर उनसे कह रहा था...."ऐ क़ब्र वालों! क्या

Www.IslamicBooks.Website

तुम्हें कुछ ख़बर भी है? क्या तुम्हारे पास कुछ असर भी है। मैं तुम्हारे पास कई महीनों से आ रहा हूं और तुम्हें पुकार रहा हूं। तुम से मेरा सवाल दुआ कराने के सिवा कुछ नहीं। तुम मेरे हाल को जानते हो या मेरे हाल से बे ख़बर हो?" इमाम अबु हनीफा ने उसकी यह बात सुनकर उससे पूछा क्या (इन क़ब्र वालों ने) तेरी बात का जवाब दिया? वह कहने लगा– नहीं। तो आपने फ़रमाया– तुझ पर फटकार हो, तेरे हाथ धूल मिट्टी से अटे हों तू ऐसे (मुर्दा) शरीरों से बात करता है जो न जवाब देने की ताक़त रखते हैं न किसी चीज़ का अख़्तियार रखते हैं और न किसी की आवाज़ (फ़रियाद) सुन सकते हैं। फिर इमाम साहब ने यह आयत पढ़ी " ऐ पैग़म्बर! तू उनको नहीं सुना सकता जो क़ब्रों में हैं।

(फ़ातिर–22) (तफ़हीमुल मसाइल)

अल्लामां आलूसी बग़दादी का स्पष्टी करण

अल्लामां आलूसी हनफ़ी बग़दादी अपनी टीका रूहुल मआनी में लिखते हैं.....

" किसी व्यक्ति से विनती करना और उसको इस मायना में वसीला बनाना कि वह उसके हक़ में दुआ करे इसके जवाज़ में कोई शक नहीं बशर्ते कि जिससे विनती की जाए वह जीवित हो। लेकिन यदि वह व्यक्ति जिससे विनती की जाए मुर्दा हो या ग़ायब हो तो ऐसी विनती के नाजायज़ होने में किसी विद्वान को शक नहीं और मुर्दो से मांगना उन बिदअतों में से है जिनको बुजुर्गों में से किसी ने नहीं किया।" (2–297)

1– मौलाना मु0 इसहाक़ देहलवी की किताब मसाइल के जवाब में एक किताब तसहीहुल मसाइल मौलवी फ़जले रसूल बदायूंनी ने लिखी थी उसका जवाब मौलाना मु0 बशीरुद्दीन कन्नौजी ने तफ़हीमुल मसाइल के नाम से दिया था बड़ी दलीलों वाली किताब है 1296 हि0 में पहली बार शाहजहां पुर से छपी फिर दूसरी बार मुहम्मदी प्रेस लाहौर में छपी। तारीख़ मालूम नहीं।

Www.IslamicBooks.Website

इससे मालूम हुआ कि सहाबा (रज़ि0) तबअ ताबअी (रह0) इमाम और तमाम बुजुर्ग ज़िन्दा और नेक लोगों से तो दुआ कराने के क़ायल थे लेकिन किसी मुर्दा को उन्होंने मदद के लिए नहीं पुकारा यहां तक कि नबी स्ल्ल0 तक से मदद न मांगी। अब आपके बाद और कौन सी ऐसी हस्ती है जो आप से अधिक फ़ज़ीलत रखती हो कि उसे मदद के लिए पुकारा जाए और उससे मदद ली जाए।

मूर्ति पूजक और मुश्रिकीन भी पालन कर्त्ता अल्लाह ही को मानते थे

यह कहना कि अल्लाह को पालन कर्त्ता मानते हुए किसी को मदद के लिए पुकारा जाए तो यह शिर्क नहीं। इस संबंध में कहना है कि ऐसी सूरत में मानना पड़ेगा कि दुनिया में शिर्क का वजूद कभी रहा ही नहीं है और कुरआन करीम में (अल्लाह क्षमा करे) अल्लाह ने खाम ख़ाह लोगों को मुश्रिक क़रार दिया है।

कुरआन में बड़े स्पष्टीकरण के साथ बार बार यह बात बयान की गयी है कि अरब के मुश्रिक जो तौहीद की दावत के सबसे पहले सम्बोधित किए जाने वाले थे वे यह मानते थे कि ज़मीन व आसमान और कायनात का ख़ालिक़ व मालिक और पालन कर्त्ता केवल अल्लाह है और वही एक मात्र हस्ती है जिसके हाथ में कायनात की सारी बाग डोर है लेकिन इसके बावजूद कुरआन ने उन अरबों को मुश्रिक कहा। सवाल यह है कि अल्लाह को मानने के बावजूद वे मुश्रिक क्यों ठहराए गए?

यही वह नुक्ता है जिस पर सोच विचार करने से शिर्क की हक़ीक़त स्पष्ट होती है। बात यह है कि मुश्रिकीने अरब ने खुदा के सिवा जिन हस्तियों को उपास्य और देवता मान रखा था वह उनको अल्लाह की मख़लूक़ और उसका बन्दा ही जानते थे लेकिन इसी

Www.IslamicBooks.Website

के साथ उनका दावा यह था कि चूंकि ये लोग अपने अपने समयों में अल्लाह के नेक बन्दे और उसके चहीते थे अल्लाह के यहां उन्हें ख़ास स्थान व दर्जा प्राप्त था। इस आधार पर वे भी कुछ अख्तियारात अपने पास रखते हैं। हम उनकी उपासना इसलिए नहीं करते कि ये अल्लाह के जैसे अख्तियारात रखते हैं हम तो उनके द्वारा अल्लाह की सममीपता हासिल करते हैं। और वसीले के तौर पर और सिफ़ारिश के लिए उनको पुकारते हैं और उनसे न्याय याचना करते हैं। स्वंय कुरआन में मुश्रिकों के ये कथन नक़ल किए गए हैं।

" और वे (अरब के मुश्रिक) अल्लाह के सिवा ऐसी चीज़ों की उपासना करते हैं जो उनको हानि पहुंचा सकें और न लाभ। और कहते (यह) हैं कि ये तो हमारे सिफ़ारिशी हैं अल्लाह के पास।

(युनुस– 18)

दूसरे स्थान पर फ़रमाया....

"जिन लोगों ने अल्लाह के सिवा अपने हिमायती पकड़ रखे हैं (उनका कहना है) कि हम तो उनकी केवल इस लिए उपासना करते है कि हमें ये अल्लाह के निकट पहुंचा दें।" जुमर–2)

और सही हदीस में आता है कि अरब के मुश्रिक हज में यह तलबियह पढ़ा करते थे।

लब्बैक ला शरीक ल क इल्ला शरीकन हुवा ल क तमलि कु हु व मा म ल क

" ऐ अल्लाह! हम तेरे समक्ष हाज़िर हैं तेरा कोई साझी नहीं सिवाए उस साझी के जो तेरा ही है। तू उसका मालिक है जिन पर उसको मिलकियत और हुकूमत है उनका मालिक भी तू ही है।"

(सही मुस्लिम किताबुल हज)

Www.IslamicBooks.Website

क़ौमे नूह के पांच बुत

और सही बुख़ारी में हज़रत इब्ने अब्बास रज़ि0 की व्याख्या मौजूद है कि नूह की क़ौम के वे पांच बुत जिनका उल्लेख कुरआन मजीद (सूरह जिन्न) में किया है जिन की वे पूजा करते थे अल्लाह के नेक बन्दों के बुत थे।

" नूह की क़ौम के पांच बुत असल में नूह की क़ौम के नेक लोगों के नाम थे। जब वे मर गए तो शैतान ने उनके मानने वालों को कहा कि (उनकी याद ताज़ा रखने के लिए) उनके मुजस्समें बनाकर अपनी बैठकों में रख लो। उन्होंने ऐसा ही किया। लेकिन (ये मुजस्समे बनाने वाले) मर गए तो उनकी बाद की नस्ल ने उनकी तस्वीरों, और मुजस्समों की पूजा आरंभ कर दी।"

(सही बुख़ारी 2– 732 सूरह जिन्न)

मतलब यह है कि कुरआन व हदीस और सहाबा की व्याख्याओं से यह बात स्पष्ट हो जाती है कि मुश्रिकीने अरब का शिर्क भी यही था कि उन्होंने अल्लाह के नेक बन्दों को उनके मरने के बाद अपना हाजत रवा और मुश्किल कुशा समझा । उनके नाम की नज़्र व नियाज़ दी और उनके आसतानों पर सालाना मेलों ठेलों की व्यवस्था की। वर्ना असल स्वामी वे भी अल्लाह ही को मानते थे और जब अधिक परेशानी का शिकार हो जाते थे तो फिर उन मर्दों को छोड़ कर केवल एक अल्लाह ही की ओर पलटते थे जिसकी गवाही स्वयं कुरआन मजीद ने दी है जैसे समुन्दर में जहां कोई ज़ाहिरी व भौतिक सहारा उन्हें नज़र न आया तो वहां केवल अल्लाह रब्बुल आलमीन को पुकारते और अपने स्वयं के गढ़े हुए बुजुर्गों और उपास्यों को छोड़ देते।

" जब ये मुश्रिक (दरिया के सफ़र में) कश्ती में सवार होते तो

Www.IslamicBooks.Website

(ख़तरे के समय) पक्का विश्वास करते हुए अल्लाह ही को पुकारते हैं।" (अनकबूत– 65)

दूसरी जगह फ़रमाया–

"जब तुम दरिया में (तूफ़ान आदि की)मुसीबत में घिर जाते हो तो तुम्हारे वे देवता जिनको तुम पुकारा करते हो ग़ायब और गुम हो जाते हैं। उस समय तुम बस अल्लाह ही को पुकारते हो।"

(बनी इसराईल–67)

क़ब्र परस्त मुसलमानों का शिर्क

ठीक यही शिर्क उन मुसलमानों में पाया जाता है जो क़ब्र परस्त हैं और जिनकी वकालत "रिज़वान" के सम्पादक ने की है। तनिक बताइए कि मुश्रिकीने अरब और मौजूदा क़ब्र परस्त मुसलमानों के शिर्क में क्या अन्तर है? यदि अब भी रिजवान के सम्पादक महोदय को शक हो तो उलमा की व्याख्याएं देख लें जिनको वे भी भरोसेमन्द मानते हैं।

उन हनफ़ी उलमा और बुजुर्गों ने भी स्पष्टीकरण किया है कि मुसलमान जाहिल लोग क़ब्रों के साथ जो कुछ करते हैं वह खुला शिर्क है।

हज़रत मुजद्दिद अल्फ़ सानी रह0

अतएव हज़रत मुजद्दिद अल्फ़ सानी रह0 लिखते हैं–

" और ये लोग बुजुर्गों के लिए जो हैवानात (मुर्गो, बकरों आदि) की नज़्र मानते हैं और फिर उनकी क़ब्रों पर ले जाकर उनको ज़ब्ह करते हैं तो फ़िक़्ही रिवायतों में इस काम को भी शिर्क में दाखिल किया गया है और फ़ुक़्हा ने इस बारे में पूरी सख्ती से काम लिया है और उन क़ुरबानियों को जिन्नों (देवताओं और देवियों) की क़ुरबानी की तरह ठहराया है जो शरअी रूप से मना है और शिर्क में दाखिल

Www.IslamicBooks.Website

है।" (मक्तूब इमाम रब्बानी 3– 41)

इस मकतूब में आगे चल कर वे उन जाहिल मुसलमान औरतों के बारे में लिखते हैं जो पीरों और बीबियों को राज़ी करने की नीयत से उनके नाम के रोज़े रखती हैं और उन रोजों के वसीले से उन पीरों, और बीवियों से अपनी हाजतें तलब करती हैं और समझती है कि वे हमारी हाजतें पूरी करेंगी उनके बारे में हज़रत मुजद्दिद अल्फ़ सानी रह0 फ़रमाते हैं–

" इन जाहिल औरतों का यह काम शिर्क फ़िल इबादत है।"

हज़रत शाह वली उल्लाह रह0

शाह वली अल्लाह मुहदिस रह0 फ़रमाते हैं–

" यदि अरब के मुश्रिकों के हालात एवं कर्मों की सही धारणा तुम्हारे लिए मुशिकल हो और उसमें कुछ विलम्ब हो तो अपने ज़माने के पेशावर लोग विशेषरूप से वे जो दारुल इस्लाम के आस पास रहते है उनका हाल देखलो। वे क़ब्रों, आसतानों और दरगाहों पर जाते हैं और तरह तरह के शिर्क के काम करते रहते हैं।"

और "हुज्ज़ातुल्लाहुल बालिग़ा" में शिर्क की विभिन्न शकलें बयान करके लिखते हैं।

" और शिर्क की यह वह बीमारी है जिसमें यहूदी, ईसाई और मुश्रिक सामान्य रूप से और हमारे इस ज़माने कें मुसलमानों में से कुछ पक्के कपटी शिकार हैं।" (हक़ीक़तुल शिर्क– 61)

शाह अब्दुल अज़ीज़ मुहद्दिस देहलवी रह0

शाह अब्दुल अज़ीज मुहद्दिस देहलवी रह0 सूरह मुज्ज़म्मिल की टीका में लिखते हैं कि यह शान केवल अल्लाह की है कि जो उसको जब और जहां से याद करे, अल्लाह को उसका पता हो जाए और

Www.IslamicBooks.Website

यह शान भी उसी की है कि वह उस बन्दे की ज्ञान शक्ति में आ जाए जिसे शरीअत की ख़ास ज़बान में दुन्नू महल्ली और कुर्ब व नुजूल कहा जाता है। इसके बाद फ़रमाते हैं।

" और ये दोनों विशेषताएं अल्लाह की पाक ज़ात का हिस्सा है ये किसी मख़लूक़ को हासिल नहीं हैं हां कुछ काफ़िर अपने कुछ उपास्यों और देवताओं के बारे में और मुसलमानों में से कुछ पीर परस्त अपने पीरों के बारे में उनसे पहली चीज़ साबित करते हैं और अपनी हाजतों के समय इसी विश्वास के आधार पर उनसे मदद चाहते हैं और मदद के लिए उनको पुकारते हैं।"

(टीका अज़ीजी सूरह मुज़्ज़मिल– 181)

अपने फ़तावा में एक सवाल के जवाब में हिन्दुस्तान के हिन्दुओं के शिर्क का हाल यूं बयान करके अन्त में फ़रमाते हैं।

" यही हाल है बहुत से मुसलमान सम्प्रदायों का जैसे ताज़िया बनाने वाले, क़ब्रों के मुजाबिरों और जलालियों मदारियों का।

(फ़तावा अज़ीज़ी 1– 134)

और इसी फ़तावा में एक स्थान पर लिखते हैं – " पाक रूहों (नेक लोगों की रूहों) से मदद तलब करने के मामले में इस उम्मत के जाहिल और आम लोग जो कुछ करते है और हर काम में बुजुर्गाने दीन को पूरी तरह मालिक व मुख़्तार समझते हैं यह बेशक जली शिर्क है। इसी प्रकार और भी कई बुजुर्गों ने इसकी व्याख्या की है कि क़ब्र परस्त मुसलमानों के कर्म एवं विश्वास खुले तौर पर मुश्रिकाना हैं।

फ़िक़्ह हनफ़ी का स्पष्टी करण

यह बात भी दिलचस्पी से ख़ाली नहीं कि सारे क़ब्र परस्त अपने आपको फ़िक़्ह हनफ़ी का अनुयायी कहते हैं यद्यपि फ़िक़्ह

Www.IslamicBooks.Website

हनफ़ी में भी उन मामलों को, जिनको क़ब्र परस्त करते हैं हराम व असत्य और कुफ़्र व शिर्क बताया गया है अतएव फ़िक़्ह हनफ़ी की मशहूर किताब " दुर्रे मुख़्तार" में है।

"मालूम होना चाहिए कि अधिकांश लोग मुर्दों के नाम पर जो नज़्रें व नियाज़ें देते हैं चढ़ावे चढ़ाते हैं औलिया किराम की समीपता हासिल करते हैं और इसके लिए माली नज़राने पेश करते हैं और उनकी क़ब्रों पर चराग़ जलाते हैं आदि। ये सारी चीज़ें आम सहमति से असत्य और हराम हैं।" (किताबुस्सोम)

दुर्रे मुख्तार की मशहूर शरह रद्दुल मोहतार (अल मारूफ़ फ़तावा शामी) में इसकी शरह यूं की गयी है।

"इस नज़्र बिना अल्लाह के असत्य और हराम होने के कई कारण है जिनमें से एक यह है कि....

❍ यह क़ब्रों के चढ़ावे आदि मख़लूक़ के नाम की नज़्र हैं और मख़लूक के नाम की नज़्र जायज़ ही नहीं इसलिए कि (नज़्र भी) उपासना है और उपासना किसी मख़लूक़ की जायज़ नहीं।

❍ और इसका कारण यह है कि जिसके नाम की नज़्र दी जाती है वह मुर्दा है और मुर्दा किसी चीज़ का अख्तियार नहीं रखता।

❍ और एक कारण यह है कि नज़्र देने वाला व्यक्ति मुर्दों के बारे में यह विश्वास रखता है कि वह अल्लाह के सिवा कायनात में तसर्रुफ़ करने का अख्तियार रखते हैं यद्यपि मुर्दों के बारे में ऐसा अक़ीदा रखना भी कुफ़्र है।"

फ़तावा आलम गीरी का फ़तवा

इसी प्रकार फ़तावा आलम गीरी में जिसके बारे में कहा जाता है कि उसे पांच सौ हनफ़ी उलमा ने तैयार किया है उसमें लिखा है।

Www.IslamicBooks.Website

" अधिकांश लोगों में जो यह रिवाज है कि वे किसी नेक आदमी की क़ब्र पर जाकर नज़्र मानते हैं कि ऐ अमुक बुजूर्ग! यदि मेरी यह हाजत पूरी हो गयी तो इतना सोना (या कोई और वस्तु) तुम्हारी क़ब्र पर चढ़ाऊंगा। यह नज़्र आम सहमति से असत्य है।

फिर लिखा है– " अतः जो दीनार व दिरहम या और चीज़ें औलिया किराम की क़ब्रों पर उनकी समीमता हासिल करने (उनको राज़ी करने) के लिए ली जाती हैं वह सब आम सहमति से हराम हैं।" (अलमारूफ़ फ़तावा आलम गीरी– 1– 216)

अल्लाह के सिवा किसी और को आलिमुल ग़ैब (ग़ैब का जानने वाला) समझना कुफ़्र है

मुर्दो से मदद एवं न्याय याचना करने वाले का यह अक़ीदा होता है कि वह मेरे हाल से परिचित है और वह ग़ैब का हाल जानता है क्योंकि इस विश्वास के बिना हज़ारों मील की दूरी से किसी मुर्दा बुजुर्ग को पुकारने का कोई मतलब ही नहीं रहता और अल्लाह के सिवा किसी और को आलिमुल ग़ैब समझने वाले की भी हनफ़ी फ़िक़्ह में तकफ़ीर की गयी है।

अतएव मुल्ला अली क़ारी फ़िक़्ह अक्बरी की व्याख्या में लिखते हैं।

"मालूम होना चाहिए कि अम्बिया अलैहि0 ग़ैब की केवल उन्हीं बातों को जानते हैं जो अल्लाह यदा कदा उनको बता दे और हनफ़ी फ़ुक़्हा (धर्म शास्त्री) ने इस अक़ीदे को (कि नबी सल्ल0 को ग़ैब का ज्ञान था" खुले रूप से कुफ़्र ठहरा दिया है। क्योंकि यह अक़ीदा अल्लाह के फ़रमान..... कुल्ला याअलमु मन फ़िस्समावाति वल अर्ज़िल ग़ैब इल्लल्लाहु का विरोधी है। यही बात शैख इब्नुल हुमाम ने मुसातरा में उल्लेख की है। (शरह फ़िक़्ह अक्बर– 182)

Www.IslamicBooks.Website

फ़िक़्ह हनफ़ी की एक और मशहूर किताब फ़तावा क़ाज़ी खां में है।

" किसी व्यक्ति ने किसी औरत से बिना गवाहों के निकाह किया अलबत्ता मर्द और औरत ने यह कहा कि हम अल्लाह और उसके रसूल को गवाह बनाते हैं, हनफ़ी धर्म शास्त्री कहते हैं कि ऐसा कहना कुफ़्र है इसलिए कि उसका विश्वास यह है कि नबी सल्ल0 ग़ैब जानते हैं यद्यपि आप अपने जीवन में ग़ैब का ज्ञान न जानते थे, दुनिया से तशरीफ़ ले जाने के बाद आप अलिमुल ग़ैब क्यों कर हो सकते हैं?" (फ़तावा क़ाज़ी खां)

और फ़तावा बज़ाज़िया में है–

" हमारे (हनफ़ी) फ़ुक़्हा ने कहा है कि जो व्यक्ति यह विश्वास रखे कि बुज़ुर्गों की रूहें हाज़िर होती हैं और ग़ैब जानती हैं वह काफ़िर हैं। (फ़तावा अज़ीज़िया पृ0 336)

इसी प्रकार फ़िक़्ह हनफ़ी में क़ब्रों की परिक्रमा, क़ब्रों को चूमना, उनके सम्मान के लिए झुकना और वहां हाथ बांधे खड़े रहना आदि ये सारे काम नाजायज़ और हराम लिखे हैं और क़ब्रों पर सजदा करने को कुफ़्र तक कहा गया है।

क़ब्रों के पुजारी आम तौर पर और उनके वकील और हिमायती ख़ास कर इस आइने में अपना रूप देखकर फ़ैसला कर लें कि स्वयं फ़िक़्ह हनफ़ी उनके बारे में क्या फ़ैसला करता है। हम यहां नबी करीम सल्ल0 के वे आदेश नक़ल नहीं कर रहे हैं जिनमें यहूदी और ईसाइयों को इसी लिए फटकारे हुए क़रार दिया गया है कि उन्होंने अपने नेक लोगों और नबियों की क़ब्रों को सज्दा गाह बना लिया।

या शैख़ अब्दुल क़ादिर शैअन लिल्लाह क्यों नजायज़ है?

इस स्पष्टी करण से मालूम हो गया कि या अली मदद,

Www.IslamicBooks.Website

अग़सिनी या रसूलल्लाह और " या शैख़ अब्दुल क़ादिर शैअन लिल्लाह आदि जैसे शब्दों और वज़ीफ़ों से मुर्दा व्यक्तियों से मदद तलब करना हराम, नजायज़ और मुश्रिकाना काम है क्योंकि ऐसा करने वाले का अक़ीदा यही होता है कि जिसे वह मदद के लिए पुकार रहा है वह उसकी फ़रियाद सुनने पर समर्थ है वह ग़ैब की बातों का ज्ञाता है वह कायनात में सब कुछ करने की ताक़त रखता है यद्यपि ये सारे गुण अल्लाह के हैं जो केवल उसी के साथ ख़ास हैं। इसी लिए फ़िक़्ह हनफ़ी में इस काम को शिर्क व कुफ़्र का नाम दिया गया है और हनफ़ी बुजुर्गों ने इसी आधर पर " या शैख़ अब्दुल क़ादिर शैअन लिल्लाह को नाजायज़ और कुफ़्र व शिर्क लिखा है।

अतएव क़ाज़ी सनाउल्लाह हनफ़ी पानीपती लिखते हैं–

" जो जाहिल व्यक्ति या शैख़ अब्दुल क़ादिर जीलानी शैअन लिल्लाह या ख्वाजा शमसुद्दीन पानीपती शैअन लिल्लाह कहता है शिर्क और कुफ़्र करता है।" (इर्शादु त्तालिबीन– 18)

और मौलाना अब्दुल हई हनफ़ी लखनवी लिखते हैं कि इस वज़ीफ़े से आदर सम्मान करना अनिवार्य है कुछ फ़ुक़्हा ने इस पर कुफ़्र तक की बात कही है और इस वज़ीफ़े के पढ़ने वाले के दिल में यह अक़ीदा होता है कि बुजुर्ग आलिमुल ग़ैब (ग़ैब की बातें जानने वाले) हैं और साहिबे अख्तियार हैं और यह अक़ीदा शिर्क है।

शाह वलीअल्लाह मुहद्दिस देहलवी रह0 लिखते हैं:

"जानना चाहिए यह बहुत से लोगों के फिसल जाने की जगह है। उन्होंने सिफ़ारिश करने वाले और जिसकी ओर सिफ़ारिश की जाए इन दोनों में फ़र्क़ नहीं समझा। कहते हैं: यह शैख अब्दुल क़ादिर शैअन लिल्लाह (अर्थात अल्लाह के लिए कुछ दे) इस कलाम में उन्होंने अल्लाह को सिफ़ारिशी बनाया है और हज़रत

Www.IslamicBooks.Website

शैख़ को देने वाला। यद्यपि हक़ीक़त इसके विपरीत मालूम होती है।" (अल बलागुल मुबीन–112)

इस प्रकार की मदद को जो शैअन लिल्लाह में की गयी है हज़रत शाह वली उल्लाह रहिम0 ने अल्लाह का अपमान ठहराया है। अतएव वे इसके बाद लिखते हैं।

"इससे साबित हुआ कि ज़िन्दा व ग़ैर ज़िन्दा मख़लूक़ के पास अल्लाह को सिफ़ारिशी बना कर लाना, उसका वास्ता देकर मख़लूक से हाजत पूरी कराना मानो अल्लाह को विवश समझना और मख़लूक़ को शक्तिशाली जानना है।

(अलबलागुल मुबीन फ़ारसी– 115)

क़ब्र परस्तों का खुला शिर्क–एक नमूना

यदि यह कहा जाए कि हम लोग तो उनको केवल वसीले के तौर पर पुकारते हैं हमारा अक़ीदा यह नहीं होता कि वे अल्लाह के गुण रखते हैं लेकिन बात यह है कि यह मात्र तकल्लुफ़ है अल्लाह के गुणों को माने बिना उनको अलौकिक तरीक़े से पुकारने का कोई मतलब नहीं रहता फिर भी बात को उन तक पहुंचाने के तौर पर हम मुख़ातिबीन के एक मशहूर रिसाले से एक नज़्म (कविता) प्रस्तुत करते हैं जिसमें शैख अब्दुल क़ादिर जीलानी के अन्दर सारे खुदाई गुणों का इक़रार किया गया है जिससे स्पष्ट हो जाता है कि क़ब्र परस्त चाहे तावीलों के कितने ही सुन्दर पर्दे चढ़ा लें, शब्दों के खूब मीना बाज़ार सजा लें और कैसे ही खुशी से भरपूर शीर्षक अख्तियार कर लें लेकिन उनका विश्वास व कर्म खुले तौर पर शिर्क है।.....

लीजिए थोड़ा दिल पर हाथ रखकर नज़्म पढ़ लें–

खुदा के फ़ज़्ल से हम पर है साया ग़ौसे आज़म का

Www.IslamicBooks.Website

हमें दोनों जहां में है सहारा ग़ौसे आज़म का
हमारी लाज किसके हाथ है बग़दाद वाले के
बलाएं टाल देना काम किस का ग़ौसे आज़म का
जहाज़े ताजिरां गरदाब से फ़ौरन निकल आया
वज़ीफ़ा जब उन्होंने पढ़ लिया या ग़ौसे आज़म का
गए एक वक़्त में सत्तर मुरीदों के यहां आक़ा
समझ में आ नहीं सकता मुअम्मा ग़ौसे आज़म का
शिफ़ा पाते हैं सदहा जां बलब इमराज़े मोहलिक से
अजब दारे शिफ़ा है आसतांना ग़ौसे आज़म का
बिलादुल्लाहे मुल्की तहते हुक्मी से यह ज़ाहिर है
कि आलम में हरेक शै पर है क़ब्ज़ा ग़ौसे आज़म का
फ़ हुक्मी नाफ़िज़ फ़ी कुल्लि हाल से हुआ ज़ाहिर
तसर्रुफ़ इन्सो जिन्न सब पर है आक़ा ग़ौसे आज़म का
हुआ मौक़ूफ़ फ़ौरन ही बरसना अहले महफ़िल पर
जो पाया अबरे बारां ने इशारा ग़ौसे आज़म का
जो हक़ चाहे वह यह चाहें जो यह चाहें वह हक़ चाहें
तो मिट सकता है फिर किस तरह चाहा ग़ौसे आज़म का
फ़क़ीहों के दिलों से धो दिया उनके सवालों को
दिलों पर है बनी आदम के क़ब्ज़ा ग़ौसे आज़म का
वे कह के कुम बिइज़्निल्लाह जिला देते थे मुर्दों को
बहुत मशहूर है अहया ए मौता ग़ौसे आज़म का
फ़रिश्ते मदरसे तक पहुंचाने को जाते थे
यह दरबारे इलाही में है रुतबा ग़ौसे आज़म का
लुआब अपना चटाया अहमदे मुखतार ने उनको

Www.IslamicBooks.Website

तो फिर कैसे न होता बोल बाला ग़ौसे आज़म का
हमारा ज़ाहिर व बातिन है उनके आगे आइना
किसी शै से नहीं आलम में परदा ग़ौसे आज़म का
(मासिक "रज़ाए मुस्तफ़ा" अंक मई 1973)

इस नज़्म का एक एक शेअ़र पढ़ लीजिए कि कितनी उदारता के साथ सारे खुदाई गुणों को ग़ौसे आज़म में पाये जाने का इक़रार किया जा रहा है ख़ास तौर से इसके ये अशआ़र जिनमें कहा गया है.....

- बलाएं टाल देना ग़ौसे आज़म का काम है।
- दोनों जहानों में हमें उन्हीं का सहारा है।
- आलम में हर वस्तु पर ग़ौसे आज़म का क़ब्ज़ा है।
- सब जिन्नों व इन्सानों पर उनका तसर्रुफ़ है।
- हमारा ज़ाहिर व बातिन उनके आगे आइना है।
- उनका मुर्दों को ज़िन्दा करना बहुत मशहूर है।
- आलम में किसी वस्तु का उनसे पर्दा नहीं, आदि।

इतने सारे खुदाई गुणों का ग़ौसे आज़म में होने का इक़रार तो आज तक किसी बरेलवी ने नबी करीम सल्ल0 तक के लिए भी नहीं किया अर्थात उनके ग़ौसे आज़म नबी करीम सल्ल0 से भी बढ़ गए हैं। हम मासिक "रिज़वान" के सम्पादक से पूछेंगे कि यह बुज़ुर्गो को वसीले के रूप में पकड़ना है या बजाए स्वयं उनको खुदार्ह के तख़्त पर बिठाना है? फिर उन्होंने केवल पीर जीलानी ही को खुदाई मन्सब नहीं दिया बल्कि हर गुम्बद नुमा पक्की क़ब्र में दफ़न व्यक्ति उनके निकट खुदाई अख्तियारात रखता है चाहे उसमें दफ़न व्यक्ति उम्र भर नमाज़ व पाकी से भी महरूम रहा हो। इसके अनेक

Www.IslamicBooks.Website

उदाहरण मौजूद हैं लेकिन उनकी क़ब्रें बहुत धड़ल्ले से पूजी जा रही हैं वे हाजतें पूरी करने वाले, मुश्किलें दूर करने वाले बने हुए हैं, क्या बुजुर्गों की मुहब्बत और आस्था के नाम पर यह क़ब्र परस्ती और मुर्दा परस्ती खुला हुआ शिर्क नहीं है? आह मौलाना अलताफ़ हुसैन हाली ने खूब कहा.....

करे ग़ैर बुत की पूजा तो काफ़िर
जो ठहराए बेटा खुदा का तो काफ़िर
कहे आग को अपना क़िब्ला तो काफ़िर
कवाकिब में माने करिश्मा तो काफ़िर
मगर मोमिनों पर कुशादा हैं राहें
परसतिश करें शौक़ से जिसकी चाहें
नबी को जो चाहें खुदा कर दिखाएं
इमामों का रुतबा नबी से बढ़ाएं
मज़ारों पे दिन रात नज़रें चढ़ाऐं
शहीदों से जा जा के मांगें दुआएं
न तौहीद में कुछ ख़लल इससे आए
न इस्लाम बिगड़े न ईमान जाए
वह दीं जिससे तौहीद फैली जहां में
हुआ जलवा गर हक़ ज़मीनों ज़मां में
रहा शिर्क बाक़ी न वहम और गुमां में
वह बदला गया आके हिन्दोस्तां में
हमेंशा से इस्लाम था जिस पे नाज़ां
वह दौलत भी खो बैठे आखिर मुसलमां

(मुसद्दस हाली– 120–121)

Www.IslamicBooks.Website

तौहीद की दावत

हम अपने इस लेख को मौलाना खुर्रम अली मरहूम (वफ़ात 1271 हि0) की इस मशहूर नज़्म पर ख़त्म करते हैं जिसमें बड़ी खूबसूरती और निष्ठा व दर्दमन्दी के साथ जाहिल मुसलमानों की शिर्क परस्ती का खंडन किया गया है और उनको तौहीद की दावत दी गयी है और तौहीद वालों पर औलिया की दुश्मनी का जो आरोप धरा जाता है उसका स्पष्टीकरण किया गया है। फ़रमाते हैं।

खुदा फ़रमा चुका कुरआन के अन्दर
मेरे मोहताज हैं पीरो पयम्बर
नहीं ताक़त सिवा मेरे किसी में
कि काम आए तुम्हारी बेकसी में
जो खुद मोहताज होवे दूसरे का
भला उससे मदद का मांगना क्या
खुदा से और बुजूर्गों से भी कहना
यही है शिर्क यारों इससे बचना
ख़बर कुरआन में है यह मुहक्क़क़
न बख्शेगा खुदा मुश्रिक को मुतलक़
मआज़ल्लाह जिसे उसने न बख़्शा
सरासर वह जहन्नम में पड़ेगा
अगर कुरआन को सच जानते हो
तो फिर तुम मन्नतें कयों मानते हो
तुम्हें यह तूरे बद किसने सिखाया
मुहम्मद ने कहां है यह बताया
है शैतान दुश्मनें औलादे आदम

Www.IslamicBooks.Website

सिखाती है वही राहे जहन्नम
किसी को बुत परस्ती है सिखाता
किसी को है वह क़ब्रों पर झुकाता
ग़रज़ अल्लाह से दोनों को रोका
भुला कर राह जा खंदक़ में फेंका
मुसलमानों ज़रा सोचो तो दिल में
फंसे हो किस तरह तुम आबो गिल में
बहुत ग़फ़लत में सोए अब तो जागो
खुदा के होते बन्दों से न मांगो
वह मालिक है सब आगे उसके लाचार
नहीं है कोई उसके घर का मुख्तार
वह क्या है जो नहीं होता खुदा से
जिसे तुम मांगते हो औलिया से
बयाने शिर्क सुन कहते हैं मर्दक
कि मुन्कर है बुजुर्गों के बिला शक
अरे लोगो! ज़बां अपनी को रोको
बुजुगों से नहीं इन्कार हम को
खुदा लानत करे उस रू सियाह पर
कि जिसके दिल में हो बुग़्ज़े पयम्बर
जिसे हो बुग़्ज़ आले मुस्तुफ़ा का
खुदा उसको करे जहन्नम का कुन्दा
जिसे असहाबे हज़रत से हो इन्कार
रहे हर दम खुदा की उस पे फटकार
जिसे कुछ बुग़्ज़ होवे औलिया से

Www.IslamicBooks.Website

हमेशा अब्रे लानत उस पे बरसे
अब इतना और भी सुन रखिए हजरत
जो हक़ पर न चले उस पर भी लानत
हमारा काम समझाना है यारो
अब आगे चाहो तुम मानो ना मानो
तू अपने हाल में ही सोच खुर्रम
ज़बां अब बन्द कर वल्लाह आलम

(साप्ताहिक अल ऐतिसाम लाहौर)
(18 नवम्बर से 9 दिसम्बर 1983 ई0)

Www.IslamicBooks.Website

(2)

क़ब्र परस्ती की एक वकालत का अवलोकन

एक मार्च 1979ई0 के " नवाए वक़्त" लाहौर में डा0 गुलाम जीलानी बर्क़ साहब का लेख " फ़रोई मत भेद, उलमाए किराम से अपील" के शीर्षक से प्रकाशित हुआ। लेखक हमारे देश के एक विशिष्ठ व्यक्ति और देश व मुस्लिम समुदाय के सुधार की भावना से ओत प्रोत है। यह लेख भी सुधार करने की नीयत से ही उन्होंने लिखा है जो निश्चय ही सराहनीय है लेकिन अफ़सोस कि लेख में उन्होंने अपनी इस हैसियत को अपने समक्ष नहीं रखा जिसको उन्होंने लेख क प्रारंभ में व्यक्त किया था और शीर्षक से भी ऐसा ही लगता है।

बेशक लेखक की यह भावना सराहनीय है कि उलमाए किराम फ़रोअी मत भेद को लोगों के सामने पेश करने से बचें कि एक दूसरे के विरुद्ध सार्वजनिक भीड़ वाले स्थानों पर लान तान व छींटा कशी से इस्लाम के ही ख़िलाफ़ नफ़रत पैदा हो रही है। यह लेख इस अपील की हद तक रहता तो निश्चय ही उनके उद्देश्यों के अनुसार होता जो उनको मतलूब थे लेकिन वे एक अपील करने वाले से आगे बढ़कर एक पक्ष के वकील सफ़ाई बन गए और कब्र परस्ती को उचित ठहराना शुरू कर दिया। इस प्रकार निश्चय ही वे निष्पक्ष नहीं रहे बल्कि उसी पक्षपात का प्रदर्शन किया है जिसकी शिकायत उन्होंने उलमा से की है। हम यह समझने से विवश हैं कि इसके बाद उनकी अपील को किस तरह निष्ठा वान और हमदर्दाना मानें? फिर भी लेख का अंदाज़ चूंकि नेकनीयती पर आधारित है इसलिए बहुत

Www.IslamicBooks.Website

से लोगों की ग़लत फ़हमी का कारण बन सकता है। इसके अलावा कुछ बातें प्रस्तुत करते हैं इससे हमारा उद्देश्य किसी अप्रिय बहस का छेड़ना नहीं, केवल हक़ीक़त का स्पष्टी करण है।

बात यह है कि इस समय कुछ बुजुर्गों की असली या नक़ली क़ब्रों पर जो कुछ हो रहा है इस्लाम में इसकी कोई गुंजाइश नहीं। मालूम ऐसा होता है कि या तो लेखक महोदय कभी किसी ऐसी क़ब्र पर गए ही नहीं जो आम व ख़ास लोगों के लिए आकर्षक हैं या फिर उन्हें प्रत्यक्ष रूप से किसी क़ब्र परस्त की ज़बान से दफ़न शुदा औलिया अल्लाह के बारे में उसके विचार सुनने का अवसर नहीं मिला। यदि इन दोनों बातों में से एक बात भी होती तो वे निश्वय ही क़ब्र परस्ती को उचित न ठहराते। बर्क़ साहब फ़रमाते हैं।....

" यदि लोग इन महान व पवित्र निशानात के सरहाने खड़े होकर उनके कारनामों का बखान करें, कुरआन पढ़कर उनकी रूह को सवाब पहुंचाएं तो क्या हरज है। यदि लोग मोहन जोदड़ा और टैक्सला के खंडरात इसलिए देखने जाते हैं कि वहां सदियों पहले की सभ्यताएं अपनी दास्तानें सुना रही होती हैं तो, फिर हम इन बुजुर्गों के मज़ारों पर क्यों न जाएं जिनका जीवन अल्लाह के सन्देश और एक नयी सभ्यता फैलाने में गुज़रा था ?"

इस समय हम इस बहस को छोड़ कर कि किसी बुजुर्ग की क़ब्र पर खड़े होकर उसके कारनामों का ज़िक्र या कुरआन पढ़कर उसकी रूह को सवाब पहुंचाने की धारणा इस्लाम में है भी? और इसका कोई सबूत हदीसे नबवी और सहाबा रज़ि0 और तबअ ताबअीन के दौर में मिलता भी है या नहीं? हम लेखक महोदय से बड़े अदब के साथ यह सवाल करेंगें कि क्या आम लोग वास्तव में बुजुर्गों की क़ब्रों पर केवल उनके कारनामों का ज़िक्र करने या

Www.IslamicBooks.Website

कुरआन पढ़ने या मोहन जोदड़ा आदि के एतिहासिक चिन्ह देखने ही जाते हैं? हमारा अनुभव तो यह है कि लोग क़ब्र में दफ़न शुदा बुजुर्गों को हाजत पूरा करने वाले, लाभ व हानि पहुंचाने वाले, ग़ैब की बातों को जानने वाले, सुनने व देखने वाले समझकर जाते हैं,

यही कारण है कि वहां लोग वे तमाम काम करते हैं जो मूर्ति पूजनें वाले बुतों और मूर्तियों के सामने करते हैं और जो पूजा और उपासना के मायना में आते हैं।

○ इसी प्रकार रोते गिड़ गिड़ाते हुए उनके सामने मुनाजात करते हैं जिस तरह अल्लाह के सामने की जाती है।

○ इसी तरह क़ब्र की ओर रुख़ करके हाथ बांध कर और सर झुकाकर खड़े होते हैं जिस तरह नमाज़ में मुसलमान क़िब्ला रुख़ हाथ बांध कर खड़ा होता है।

○ क़ब्र के तावीज़ या डेवढी पर इसी तरह माथा रगड़ते हैं जिस तरह सज्दे में पेशानी ज़मीन पर रखने का हुक्म है जो निश्चय ही सज्दे ही की एक शक्ल है।

○ यहां तक कि क़ब्रों की काबा की तरह परिक्रमा की जाती है और काबा ही की तरह क़ब्रों को गुस्ल दिया जाता है।

○ उनके नाम नज़्र व नियाज़ दी जाती है, चढ़ावे चढ़ाए जाते हैं और उन क़ब्रों के आस पास उनकी खुशनूदी हासिल करने के लिए उनके नाम की देगें बांटी जाती हैं।

○ मुश्किलात के समय इसी तरह उनको मदद के लिए पुकारा जाता है जिस तरह अल्लाह को मदद के लिए पुकारा जाता है, उनसे सन्तान मांगी जाती है बीमारी से स्वास्थ्य मांगा जाता है और कारोबारी उन्नति के लिए उनसे फ़रियादें की जाती हैं।

बताइए क्या ये मुश्रिकाना काम नहीं? क्या इस्लाम में इन

Www.IslamicBooks.Website

चीज़ों की कोई अनुमति मौजूद है? क्या ये वे उपासना की बातें नहीं जो केवल अल्लाह ही के लिए खास हैं?

डा0 बर्क साहब फरमाते हैं--

"हो सकता है कुछ हाजत मन्द उन्हें वसीला और वास्ता बना कर अल्लाह से दुआ मांगते हों, ऐसे लोगों को मुश्रिक कहने से पहले शिर्क की हक़ीक़त को समझना ज़रूरी है। शिर्क का मफ़हूम है किसी को अल्लाह का साझी ठहराना। स्वयं मांगने वाले से पूछें कि उसकी नीयत क्या है? उसने तो वली को खुदा का मुक़र्रब और प्रिय समझ कर वास्ता बनाया होगा न कि खुदाई में शरीक व साझी जानकर।"

इस वाक्य में भी बर्क़ साहब की बे ख़बरी पर दया आती है अर्थात एक तो वे इस बात ही का इन्कार करतें हैं कि क़ब्रों पर जाकर लोग फ़िरियाद पेश करते हैं इसलिए वे कहते हैं "हो सकता है कि कुछ हाजत मन्द उन्हें वसीला बनाकर दुआ मांगते हों।" यद्यपि सत्य तो यह है कि लोग जाते ही वहां दुआ के लिए हैं। जुमरात को तो ख़ास तौर से ऐसी क़ब्रों पर औरतों की भीड़ लगी होती है और सबका उद्देश्य क़ब्र में दफ़न वाले की खुशनूदी,और अपना हाल बताने और हाजत पूरी कराना होता है। लोग अल्लाह को तो बिल्कुल भूल गए हैं मस्जिदों का रुख़ कोई नहीं करता अलबत्ता क़ब्रों पर खूब मेले लगे रहते हैं।

फिर यह भी ग़लत फ़हमी है कि लोग उन्हें वसीला और वास्ता बनाकर अल्लाह से दुआ मांगते हैं, ऐसे लोग उनको अल्लाह का साझी नहीं ठहराते इसलिए उनको मुश्रिक नहीं कहा जा सकता ठीक है किसी मुसलमान को मुश्रिक कहना ठीक नहीं, लेकिन यदि मुसलमान वास्तव में मुश्रिकाना अक़ीदे और कार्यों का शिकार हो

Www.IslamicBooks.Website

तो फिर उनको क्या कहा जाए? और शिर्क व तौहीद के फ़र्क़ को किस प्रकार स्पष्ट किया जाए? यही वास्ता और वसीला का मसला ले लीजिए कि किसी मुर्दा बुजुर्ग को वसीला बनाना इस्लाम में जायज़ है? नबी करीम सल्ल0 से बढ़कर तो कायनात में कोई बुजुर्ग और श्रेष्ठ नहीं हो सकता लेकिन किसी सहाबी ने कभी आपकी क़ब्र पर जाकर आपके वसीले और वास्ते से दुआ नहीं मांगी,

जब सहाबा किराम रज़ि0 ने नबी करीम सल्ल0 तक को वसीला नहीं बनाया तो और कौन है जिसे वास्ता और वसीला बनाया जा सके? किसी ज़िन्दा बुजुर्ग के द्वारा दुआ कराना, इसका सबूत तो सहाबा किसम रजि0 से मिलता है लेकिन किसी मुर्दा बुजुर्ग बल्कि नबी यहां तक कि नबी करीम सल्ल0 तक की क़ब्र पर जाकर हाल बयान करना या उनको वसीला बनाकर दुआ करना, इसका भी कोई सबूत नहीं, हज़रत उमर रज़ि0 के कार्यकाल में अकाल पड़ा तो सही बुख़ारी में आता है कि उन्होंने नबी करीम सल्ल0 के चचा हज़रत अब्बास रजि0 से बारिश की दुआ करायी और हज़रत अब्बास रज़ि0 का वसीला पकड़कर अल्लाह की बारगाह में दुआ मांगी।

यदि मुर्दा बुजुर्गों की क़ब्रों पर जाकर और उन्हें वसीला बना कर दुआ का मांगना जायज़ होता तो कया हज़रत उमर रज़ि0 नबी करीम सल्ल0 की क़ब्र मुबारक पर जाकर दुआ न करते? लेकिन हज़रत उमर रज़ि0 ने ऐसा नहीं किया बल्कि ज़िन्दा बुजुर्ग द्वारा दुआ करायी। इसी तरह किसी भी सहाबी ने किसी अवसर पर भी नबी करीम सल्ल0 की मुबारक क़ब्र पर जाकर उनको वसीला नहीं बनाया। इससे मालूम हुआ कि वसीला यदि पकड़ा जा सकता है तो वह केवल ज़िन्दा और नेक लोगों का न कि मरने के बाद क़ब्रों में

Www.IslamicBooks.Website

दफ़न हुए लोगों का।

क़ब्रों में दफ़न बुजुर्गों को वसीला बनाने का मतलब ही यह है कि वसीला बनाने वाला उस मृत व्यक्ति को न केवल ज़िन्दा जानता है बल्कि उसे अल्लाह की तरह सुनने और देखने वाला और ग़ैब की बातों को जानने वाला भी समझता है। इसीलिए तो उसकी क़ब्र पर जाकर या उसका नाम जप कर उससे हाल बयान करता है। स्पष्ट है कि अल्लाह के सिवा किसी भी नबी वली बुजुर्ग को सुनने व देखने वाला, ग़ैब का जानने वाला और हाज़िर नाज़िर जानना ही तो शिर्क है। यदि यह शिर्क नहीं तो फिर मक्का के मुशिरकों को मुशिरक क्यों कहा जाता है? वे भी तो अपने उपास्यों को ख़ालिक़ व राज़िक़ नहीं समझते थे। वे भी आजकल के क़ब्र परस्तों की ही तरह उनको अल्लाह के यहां सिफ़ारिशी समझते थे जिसका स्पष्टीकरण स्वयं कुरआन मजीद में मौजूद है। वे कहते थे।

" ये अल्लाह के यहां हमारे सिफ़ारिशी हैं"

अर्थात उनके वास्ते और वसीले से हम अपनी दुआएं अल्लाह की बारगाह में पहुंचते हैं। दूसरे स्थान पर कुरआन ने मक्का के मुश्रिकों का यह कथन नक़्ल किया है।

" हम उनकी पूजा (अर्थात नज़्र व नियाज़, चढ़ावे और परिक्रमा व सज्दे आदि) इसलिए करते हैं ताकि ये हमें अल्लाह के निकट कर दें।

(ज़ुमर–3)

अर्थात उनके द्वारा और उनके वसीले से हम अल्लाह तक रसाई हासिल करते हैं। बताइए यदि वसीला शिर्क नहीं तो फिर दुनिया में मुश्रिक कौन है?

शहीदों की बरज़ख़ी ज़िन्दगी से ग़लत विवेचन

डाक्टर बर्क साहब ने अपनी पुष्टि में कुछ दलीलें भी दी हैं

Www.IslamicBooks.Website

उचित मालूम होता है कि उनका भी स्पष्टी करण कर दिया जाए।

एक दलील उन्होंने यह दी है कि शहीदों को कुरआन ने ज़िन्दा कहा है चूंकि औलिया के दर्जे बहुत बुलन्द हैं इसलिए निश्चय ही वे भी ज़िन्दा हैं।

हम कहते हैं बेशक कुरआन में शहीदों को ज़िन्दा कहा गया है लेकिन यह जीवन कौन सा जीवन है? बरज़ख का जीवन है जिसकी हमें समझ बूझ ही नहीं है कि वह जीवन किस प्रकार का है, कुरआन में भी शहीदों के बारे में कहा गया है.... " वे अपने पालनहार के पास ज़िदा हैं। (आले इमरान–169) कुरआन ने यह नहीं कहा कि वे अपनी क़बों में ज़िन्दा हैं इसलिए सांसारिक दृष्टि से वे मुर्दा ही हैं। यदि शहीदों के बरज़ख़ी जीवन अर्थात अपने पालन हार के पास वाले जीवन का मतलब यह होता कि वे हमारी फ़रियादें सुनते हैं हमारी हाजतें पूरी करते हैं और हमारे हालात से अवगत हैं तो निश्चय ही सहाबा रज़ि0 के दौर और तबअ ताबअीन के दौर में शहीदों और वलियों और नबी करीम सल्ल0 की क़ब्रों पर जाकर लोग वे कुछ अवश्य करते जो आजकल असली या नकली बुजुर्ग की क़ब्र पर किया जा रहा है।

मुर्दे से कल्पना में बातें करना और परेशानी में किसी मुर्दे से मदद मांगना अलग अलग चीज़ें हैं

दूसरी दलील यह दी है कि " मरे हुए की कल्पना से बातें करना मानव प्रकृति का नियम है इससे उसे शान्ति मिलती है।" तो जनाब इस मानव प्रकृति के नियम से इन्कार नहीं लेकिन इससे यह कहां साबित होता है कि मरे हुए व्यक्ति को ग़ैब की बातों का ज्ञान, हाज़िर व नाज़िर और वह देखने व सुनने वाला समझना ठीक है जिस तरह कि मुर्दा बुजुर्गों के बारे में यह अक़ीदा रख कर ही

Www.IslamicBooks.Website

उनको पुकारा जाता है और उनसे फ़रियादें की जाती हैं।

एक बूढ़े व्यक्ति का जवान बेटा मर जाए, वह बूढ़ा बाप बेटे की लाश को सम्बोधित करते हुए कहे.....

" बेटे! इस बुढ़ापे की हालत में मुझे अकेला छोड़ कर चले गए। इस बुढ़ापे का सहारा समझते हुए तो तुम्हें पाला पोसा था अब कौन मेरा सहारा बनेगा?" आदि आदि।

एक दूसरा व्यकित है वह किसी परेशानी का शिकार होता है वह अल्लाह के सामने सज्दे में गिरने की बजाए किसी क़ब्र का रुख़ करता है वहां माथा रगड़ता है अपनी तकलीफ़ क़ब्र में दफ़न मुर्दे के सामने प्रस्तुत करता है और रोते गिड़गिड़ाते परेशानी को दूर करने की विनती करता है।

पहली वाली सूरत निश्चय ही मानव प्रकृति के नियम वाली सूरत है इससे उसे शान्ति व कुछ सुख मिलता है लेकिन सवाल यह है कि क्या दूसरी सूरत भी ऐसी ही है। निश्चय ही नहीं। दोनों में ज़मीन आसमान का फ़र्क़ है। इन दोनों को एक दूसरे पर कल्पित कर लेना सही नहीं है यदि ऐसा किया गया तो यह क़यासे फ़ासिद ही कहा जाएगा।

इसी प्रकार बर्क़ साहब का मर्सिया अशाआर में मुर्दा के सम्बोधन से विवेचन करना बिल्कुल बे जोड़ सी बात है। यदि कोई शायर अपने मुर्दे को सम्बोधित करके उसकी कुछ विशेषताओं को व्यक्त करता है तो शायर यह नहीं समझता कि मुर्दा उसकी बातें सुन रहा है या उसकी वह फ़रियाद सुनकर उसका काम कर सकता है बल्कि यह वही सूरत है जिसे डाक्टर साहब मानव प्रकृति का नियम कहते हैं जैसा कि हमने भी पहली मिसाल में बाप बेटे की बातों को इसका मज़हर क़रार दिया है।

Www.IslamicBooks.Website

अत्तहियात में सलाम का पढ़ना

इसी तरह नमाज़ में अस्सलामु अलै का अय्युहन्नबिय्यु जो पढ़ा जाता है जो प्रत्यक्ष में सम्बोधन है लेकिन इस में नबी सल्ल0 से सम्बोधन का अक़ीदा नहीं होता बल्कि यह हिकायतन पढ़ा जाता है। स्वयं नबी सल्ल0 भी नमाज़ में ये शब्द उसी तरह पढ़ा करते थे साफ सी बात है कि अल्लाह का हुक्म पाकर आप अत्तहियात में ये शब्द पढ़ा करते थे वर्ना आपका ख़िताब किससे होता था?

यदि यह सलाम सम्बोधन के रूप में होता तो इस का जवाब भी अवश्य होता लेकिन साफ़ सी बात है कि नबी करीम सल्ल0 के जीवन मे जब सहाबा किराम रज़ि0 अत्तहियात में यह सलाम पढ़ते थे तो आप जवाब नहीं देते थे क्योंकि आप न सुनते थे न सहाबा किराम रज़ि0 का सुनाने का अक़ीदा ही होता था। अब आप की वफ़ात के बाद यह अक़ीदा कैसे सही हो सकता है कि आप हमारा अत्तहियात वाला सलाम सुनते हैं और मुसलमान आपको सुनाने के लिए ही यह सलाम पढ़ते हैं।

मतलब यह कि यह सलाम मात्र दुआ है जिसका उद्देश्य नबी करीम सल्ल0 के लिए दुआ है और दुआ का यह तरीका भी वह है जो स्वयं नबी करीम सल्ल0 ने हमें सिखाया है। हमारा स्वयं का गढ़ा हुआ तरीक़ा नहीं है इसलिए इस मसनून सलाम से न तो स्वयं का गढ़े हुए सलाम का जवाज़ मिल सकता है और न मुर्दो से मदद व सहयोग मिलने का इक़रार।

(साप्ताहिक " अल ऐतिसाम" 16 मार्च 1979)

Www.IslamicBooks.Website

(3)

अल्लाह के साथ दूसरों को पुकारना शिर्क व बिदअ़त है या नहीं?

बरेलवी सम्प्रदाय के एक मुख पत्र मासिक "सीधा रास्ता" जून 1991 में प्रकाशित एक लेख में लेखक ने साम्प्रदायिक्ता का प्रदर्शन करते हुए कुरआन की तौहीद की दावत को धूमिल करने की नाकाम सी कोशिश की है और यह बताना चाहा है कि अल्लाह के साथ दूसरों को पुकारना जायज़ है यह शिर्क नहीं है। अपने इस मुश्रिकाना अक़ीदे के इक़रार के लिए लेखक ने जो भ्रम पैदा किए हैं वे निम्न हैं–

1– पहला भ्रम लेखक ने यह दिया है कि मात्र किसी को पुकारना शिर्क नहीं है। केवल वह पुकारना शिर्क है जो किसी को उपास्य समझ कर पुकारा जाए। यह बात इस हद तक तो सही है कि जब हम आपस में ज़ाहिरी असबाब के अनुसार एक दूसरे को पुकारते या बुलाते या मदद तलब करते हैं तो हम एक दूसरे को उपास्य या हाजतें पूरी करने वाला और मुश्किल कुशा नहीं समझते इसलिए यह निश्चय ही शिर्क नहीं है न इसे आज तक किसी ने शिर्क का नाम दिया है। असल पुकारना वह है जो किसी को यह समझ कर पुकारे कि वह मेरी फ़रियाद सुने। मतलब यह कि दूर या निकट से यह समझ कर पुकारना कि वह मेरी फ़रियाद सुनने पर और उसके अनुसार उसे पूरी करने पर समर्थ है जबकि वह मुर्दा है। यह पुकारना शिर्क है। जिस प्रकार लोग " या अली मदद" कह कर

Www.IslamicBooks.Website

हज़रत अली को, कुछ लोग " या रसूलुल्लाह मदद" कह कर नबी सल्ल0 को और कुछ लोग " या शैख़ अब्दुल क़ादिर शैअन लिल्लाह कह कर पीर जीलानी को मदद के लिए पुकारते हैं यह पुकारना ज़ाहिर बात है अलौकिक रूप से है क्योंकि इनमें से कोई भी पुकारने वाले के सामने ज़िन्दा मौजूद नहीं है अर्थात पुकारने वाला यह अक़ीदा रखता है कि यद्यपि उनको मरे हुए सदियां गुज़र गयी हैं उनकी क़ब्रें भी हज़ारों मील के फ़ासले पर हैं लेकिन इन सबके बावजूद अल्लाह की तरह मेरी फ़रियाद सुन सकते हैं उनको मदद के लिए पुकारता है। हाजतों के लिए उनसे दुआएं करता है और उनकी खुशनूदी के लिए उनके नाम की नज़्र व नियाज़ देता है यह भी यदि शिर्क नहीं तो फिर कहना चाहिए कि दुनिया में शिर्क का वजूद ही कभी नहीं रहा है और न अब है।

2– दूसरा भ्रम यह कि लेखक लिखता है कि यह कहना हाज़िर ग़ायब को और ज़िन्दा मुर्दा को नहीं पुकार सकता यदि पुकारेगा तो शिर्क व बिदअत होगा। यह फ़तवा कुरआन और हदीस पर नज़र की कमी से पैदा हुआ है। ग़ायब को पुकारना यदि शिर्क व बिदअत होता तो हज़रत उमर फ़ारूक़ रज़ि0 हज़रत सरिया को न पुकारते जो ईरान में नहावन्द के इलाक़े में लड़ रहे थे।"

(मासिक " सीधा रास्ता" 24)

लेकिन हम कहेंगे कि मुर्दा के पुकारने को शिर्क का नाम देना कुरआन व हदीस के ठीक ठीक अनुसार है। यह फ़तवा कुरआन और हदीस पर नज़र की कमी का नहीं बल्कि कुछ कुरआन मजीद की सही समझ और हदीस के गहरे अध्ययन का नतीजा है जिस पर बीसों आयतें और हदीसें प्रस्तुत की जा सकती हैं।

जहां तक हज़रत उमर रज़ि0 की घटना या सारियतुल जबल

Www.IslamicBooks.Website

की बात है यह घटना सनद के अनुसार बेशक स्वीकार्य है लेकिन यह क़रायन के रूप में है जिससे किसी मसले के इक़रार के लिए विवेचन नहीं किया जा सकता क्योंकि मोजिज़ा और करामत यह मनुष्य के अपनी पसन्द व ताक़त के कार्य नहीं, यह अल्लाह की मर्ज़ी के तहत होते हैं इसी लिए कोई नबी मात्र अपने अख्तियार से अल्लाह की मर्ज़ी के बिना मोजिज़ा नहीं दिखा सकता और कोई वली किसी करामात को नहीं दिखा सकता और यही कारण है कि अहले सुन्नत के यहां यह उसूल है कि मोजिज़ा और करामात से विवेचन जायज़ नहीं। इसलिए लेखक का सारियतु जबल की घटना से विवेचन बड़ा विचित्र और अहले सुन्नत के जाने माने उसूल के विरुद्ध है। अलबत्ता हज़रत सारिया रहिम0 की घटना में यदि सोच विचार किया जाए तो इससे यह पहलू और अधिक स्पष्ट हो जाता है कि उस आदर्श समाज में मुसीबत के समय मुर्दों या नज़रों से ग़ायब बुजुर्गों को मदद के लिए पुकारने की कोई धारणा नहीं थी वर्ना हज़रत सारिया जो दुश्मन के घेरे में फंस गए थे नबी सल्ल0 को या हज़रत उमर रज़ि0 को मदद के लिए अवश्य पुकारते मगर उन्होंने ऐसा नहीं किया क्योंकि उस दौर में इस शिर्क की कल्पना भी नहीं की जा सकती थी। वह तो अल्लाह ने मुसलमानों के उस लश्कर की मदद करनी थी जो नहावन्द में हज़रत सारिया की अगुवाई में काफ़रों से लड़ रहा था इसलिए हज़रत उमर रज़ि0 की ज़ुबान से या सारियतुल जबल (ऐ सारिया पहाड़ के दामन में पनाह लो) के शब्द न केवल कहलवाए बल्कि चमत्कारिक रूप से ये शब्द सैंकड़ों मील की दूरी के बावजूद हज़रत सारिया के कानों तक पहुंचा दिए।

एक अज्ञात व्यक्ति के सपने से विवेचन

इसके बाद लेखक ने "मृत लोगों को पुकारना क़ुरआन व

Www.IslamicBooks.Website

हदीस से साबित है " का शीर्षक देकर कुछ विचित्र दलीलें और कुछ अप्रमाणित रिवायतों को प्रस्तुत किया है। हम यहां उनकी हक़ीकत भी स्पष्ट करते हैं–

1– एक दलील यह दी है कि हज़रत उमर फ़ारूक़ रज़ि0 के कार्य काल में अकाल हो गया। एक साहब हज़रत बिलाल बिन हारिस रज़ि0 नबी सल्ल0 के मज़ार पर हाज़िर हुए और कहा– या रसूलल्लाह! अपनी उम्मत के लिए पानी मांगिए क्योंकि वह नष्ट होती जा रही है तो एक मर्द उन (हज़रत बिलाल बिन हारिस रज़ि0) के सपने में आए (और अल इस्ती आब के शब्द ये हैं कि) सपने में नबी सल्ल0 उनके पास आए और फ़रमाया कि (हज़रत) उमर रज़ि0 के पास जाओ और उनसे कहो कि लोगों के लिए बारिश की दुआ करें।

उन्हें बारिश दी जाएगी और उनसे कहो कि सावधानी का दामन मज़बूती से पकड़े रहो। वे साहब हज़रत उमर रज़ि0 के पास आए और हाल बयान किया। रावी कहते हैं कि (हज़रत) उमर (रज़ि0) रो दिए। कहा " ऐ अल्लाह, मैं अपनी ताक़त भर कोताही नहीं करता।" (मासिक सीधा रास्ता पू 25– जून 1991 ई0)

यह घटना बेशक हदीस की एक किताब लेखक इब्न अबी शीबा (12–32 और फ़तहुल बारी 2– 495) किताबुल इस्तिसक़ा तीसरे अध्याय में दर्ज है। हाफ़िज़ इब्ने हजर रह0 ने इसकी बाबत कहा है....." इस रिवायत को इब्न अबी शीबा ने सही सनद के साथ अबू सालेह अस्समान अन मालिकुद्दार के हवाले से बयान किया है।"

लेकिन तीन कारणों से यह घटना विवेचन योग्य नहीं है।

1– यह क़िस्सा सही नहीं है इसलिए कि घटना का असल रावी मालिकुद्दार है जो अज्ञात है जब तक उसकी सही पहचान या

Www.IslamicBooks.Website

हैसियत का पता नहीं होगा यह घटना अविश्वसनीय होगी।

हाफिज इब्ने हजर ने जो कहा है उसका मतलब यह है कि सनद के हिसाब से अबु सालेह अस्स्मान तक यह रिरवायत सही है। मालिकुद्दार के हालात का चूंकि हाफ़िज़ इब्ने हजर को पता नहीं चल सका था इसलिए उन्होंने इस बारे में ख़ामोंश रह कर अबु सालेह अस्समान तक सनद के सिलसिले को सही ठहरा दिया। मक़्सद यह था कि मालिकुद्दार की पहचान और हैसियत की बात की यदि पुष्टि हो जाए तो यह रिवायत बिल्कुल सही होगी दूसरी सूरत में सही नहीं। इनके सही होने का मतलब पूरी सनद का सही होना नहीं। यदि पूरी सनद उनके निकट सही होती तो वे इसे कुछ दूसरी तरह कहते लेकिन हाफ़िज साहब ने इस तरह नहीं कहा इसलिए जब तक घटना के असल रावी मालिकुद्दार की पुष्टि साबित नहीं होगी यह घटना भरोसे योग्य नहीं होगी।

2– यह क़िसी सनद की दृष्टि से सही हो तब भी दलील नहीं। इस लिए कि लेखक इब्न अबी शीबा की रिवायत का एक आदमी पर आधार है जो अज्ञात है और हाफ़िज़ इब्ने हजर ने सैफ़ बिन उमर के हवाले से उस अज्ञात व्यक्ति का नाम बिलाल बिन हारिस (सहाबी) बताया है यद्यपि सैफ़ बिन उमर स्वयं मुहद्दिसीन के निकट सर्व सहमति से ज़ईफ है बल्कि उसके बारे में यहां तक कहा गया है कि वह सिक़ह रावियों के नाम से मन गढ़त हदीसें बयान करता था।

ऐसे झूठे रावी के बयान पर यह किस प्रकार माना जा सकता है कि नबी सल्ल0 की क़ब्र पर जाकर विनती करने वाले एक सहाबी बिलाल बिन हारिस थे।

3– मुख्य रूप से जबकि मुसतनद और सही रिवायतों से अकाबिर सहाबा का तरीक़ा साबित है कि उन्होंने अकाल के अवसर

Www.IslamicBooks.Website

पर नबी करीम सल्ल0 की क़ब्र मुबारक पर जाकर मदद नहीं मांगी बल्कि खुले मैदान में इस्तिसक़ा की नमाज़ की व्यवस्था की जो मसनून अमल है और इसमें ज़िन्दा बुजुर्ग आप (सल्ल0) के चचा हज़रत अब्बास रज़ि0 से दुआ करायी। यह घटना हज़रत उमर रज़ि0 के ज़माने की है इसी तरह हज़रत मुआवियह रज़ि0 के ज़माने में अकाल पड़ा तो उन्होंने भी एक सहाबी रसूल से दुआ करायी।

इन प्रमाणिक घटनाओं और चोटी के सहाबा के तरीकों के मुक़ाबले में एक अ प्रमाणिक रिवायत और वह भी सपने पर आधारित और अज्ञात व्यक्ति के बयान को किस प्रकार माना जा सकता है।

उपरोक्त तीन कारणों से लेखक इब्न अबी शीबा की यह रिवायत किसी तरह भी विवेचन योग्य नहीं रहती फिर भी यदि इसे किसी दर्जे में दलील योग्य मान लिया जाए तब भी इस रिवायत से यही बात साबित होती है कि नबी सल्ल0 ने उस व्यक्ति को यही हिदायत की कि हज़रत उमर रज़ि0 के पास जाकर कहो कि वे लोगों को साथ ले जाकर दुआ करें अर्थात इस्तिसक़ा की नमाज़ की व्यवस्था करें। अतएव हज़रत उमर रज़ि0 ने ऐसा ही किया। नबी सल्ल0 ने क़ब्र पर आने वाले व्यक्ति को यह नहीं कहा कि अच्छा मैं तुम्हारे लिए दुआ करता हूं या करूंगा या तुम लोग मेरी क़ब्र पर जमा होकर आओ बल्कि आपने दुआ का मसनून तरीक़ा अपनाने की नसीहत की।

"अदबुल मुफ़रद" की रिवायत से विवेचन

एक दलील लेखक ने यह प्रस्तुत की है...

" इसी प्रकार मुसीबत और तकलीफ़ के समय पुकारने के बारे में अदबुल मुफ़रद (142) में लिखा है कि हज़रत अब्दुल्लाह बिन

Www.IslamicBooks.Website

उमर रज़ि0 का पांव सुन्न हो गया तो एक आदमी ने उन्हें कहा किसी ऐसे मनुष्य को याद कीजिए जिसके साथ आपको सबसे अधिक मुहब्बत है तो उन्होंने पुकारा " या मुहम्मद (सल्ल0)" और उनकी तकलीफ़ दूर हो गयी। लेकिन कितना विचित्र वह कलिमा गो व्यक्ति है जिसको मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैक व सल्लम कहने में कष्ट होता है।" (सीधा रास्ता– 25–26)

सनद की दृष्टि से यह घटना भी सही नहीं है फिर भी इस समय इसकी सनद की बहस से हटकर असल मसले से इस घटना का कोई संबंध नहीं क्योंकि बहस तो है मुर्दा लोगों को मदद के लिए पुकारना जायज़ है या नहीं? जबकि उल्लिखित घटना में शारीरिक कष्ट का एक मनोवैज्ञानिक इलाज बताया गया है जिसे हज़रत अब्दुल्लाह बिन उमर ने अख्तियार किया। उन्होंने "मुहम्मद" या मुहम्मद" इस अक़ीदे के तहत नहीं पुकारा कि आप उनकी फ़रियाद सुन लेंगे और फिर मदद करेंगे बल्कि किसी ने पांव के सुन्न हो जाने का यह इलाज बताया कि अपने सब से अधिक प्रिय व्यक्ति का नाम लो तो तक्लीफ़ दूर हो जाएगी।

इसका कारण यह बताया गया है कि महबूब के ज़िक्र से मनुष्य के दिल में गर्मी और हर्ष व आनन्द की कैफ़ियत पैदा हो जाती है जिससे जमा हुआ खून रगों में दौड़ना आरंभ कर देता है और इस सरह सुन्न वाली हालत समाप्त हो जाती है। यही कारण है कि कुछ और घटनाएं भी ऐसी मिलती हैं जिनमें लोगों ने अपने किसी महबूब या महबूबा का नाम लिया तो उनके पैरों की सुन्न की बीमारी ख़त्म हो गयी।

इसका मतलब यह हुआ कि पैर सुन्न होने की सूरत में अपने किसी महबूब का नाम लेना और उसे मुहब्बत से याद करना, यह

Www.IslamicBooks.Website

इस बीमारी का मनो वैज्ञानिक इलाज है। इसका कोई संबंध मृत लोगों से मदद मांगने से नहीं जैसा कि लेखक ने समझा और दूसरों को समझाया है।

दूसरी बात यह है कि पुकार के लिए यह आवश्यक नहीं होता कि पुकार सुनने वाला अवश्य सामने हो या वह पुकार को सुने बल्कि कई बार अपनी भावनाओं को व्यक्त करने और दिल का बोझ हल्का करने के लिए भी पुकार सुनने वाले की अपने ज़हन में कल्पना करके ख़िताब कर लिया जाता है। यहां भी यही सूरत है।

लेखक की दो और दलीलें देखिए जिनसे उसने मुर्दों से मदद मांगने के जवाज़ पर विवेचन किया है लिखता है–

हज़रत इज़राईल अलै0 मुर्दों को पुकारेंगे। हज़रत इबराहीम अलै0 ने मुर्दा परिन्दों को पुकारा (मासिक सीधा रास्ता–25)

ज़रा सोचिए ये क्या दलीलें हुई? इनको दलील कहा जा सकता है? भला इनसे कोई पूछे– हज़रत इज़राईल मुर्दों को पुकारेंगे तो क्या उनसे मदद तलब करने के लिए सूर फूंकेंगे? क़ियामत के दिन सूर फूंकने को यह जताना कि हज़रत इज़राईल नी मुर्दों को पुकारेंगे अतः तुम भी मुर्दों को मदद के लिए पुकार सकते हो बड़ा ही विचित्र विवेचन है।

इसी प्रकार हज़रत इबराहीम अलै0 का परिन्दों को पुकारना क्या, उनसे मदद तलब करने के लिए था? या अपने इत्मीनाने क़ल्ब के लिए मुर्दों को ज़िन्दा होते हुए देखने के लिए था? इससे यह विवेचन करना कि मुर्दों को पुकारना जायज़ हो गया। अतः ऐ मुसलमानों! तुम भी मदद के लिए मुर्दों को पुकारो! कुरआन को समझ बूझ कर पढ़ने का बड़ा विवित्र नमूना है।

Www.IslamicBooks.Website

पापोश में लगायी किरन आफ़ताब की
जो बात की खुदा की क़सम ला जवाब की

इसी प्रकार लेखक ने कुरआन की अनेक आयतें जमा कर दीं है जिनमें किसी न किसी तरह " पुकार" का विषय है। जैसे नूह अलै0 ने अपनी क़ौम को पुकारा। दूसरे नबियों का अपनी क़ौमों को पुकारना, अल्लाह को पुकारनां।

बताइए इन आयतों का कोई संबंध उस पुकार से है जो किसी मुर्दा बुजुर्ग को मदद के लिए पुकारा जाता है? फिर इन आयतों को जमा करने का क्या लाभ? असल मतभेद तो उस ' पुकार" से है जो अलौकिक तरीक़े से किसी मुर्दा को मुश्किल कुशाई और मदद हासिल करने के लिए पुकारा जाता है। यह शिर्क है क्योंकि इस तरीक़े से किसी मुर्दे को पुकारना उसकी उपासना है और उपासना केवल अल्लाह ही के लिए जायज़ है किसी दूसरे के लिए नहीं।

स्वंय लेखक लेख के अन्त में लिखता है–

"अल्लाह जिस बात की मनाही फ़रमाता है वह यह है कि अल्लाह के साथ किसी को उपास्य, उपासना के योग्य समझ कर न पुकारा जाए।" (सीधा रास्ता–30)

बिल्कुल यही बात अहले हदीस कहते हैं फिर मतभेद क्यों? मतभेद यह है कि बरेलवी हज़रात यह तो मानते हैं (जैसा कि लेखक ने भी कहा है) कि किसी को उपास्य समझकर न पुकारा जाए लेकिन यह नहीं मानते कि किसी मुर्दा बुजुर्ग को अलौकिक तरीक़े से मदद के लिए पुकारना, उससे दुआएं कराना, उसके नाम की नज़्र व नियाज़ देना, उससे लाभ या हानि की आशा करना, उसको इलाह और उपास्य बनाना ही है। और इस तरह वह अल्लाह के साथ शिर्क करते हैं। और बुजुर्गों के नामों की नज़्र व नियाज़ भी

Www.IslamicBooks.Website

देते हैं। अल्लाह से लाभ व हानि की आशा रखते हैं और मुर्दा बुजुर्गों से भी अलौकिक तरीक़े से लाभ हानि की आशा रखते हैं।अल्लाह को भी ग़ैब का जानने वाला मानते हैं और अल्लाह के नबियों और वलियों को भी ग़ैब का जानने वाला मानते हैं। अल्लाह को भी दूर और निकट से फ़रियादें सुनने वाला मानते हैं और बुजुर्गों के अन्दर भी इस गुण का होना मानते हैं।

अहले हदीस कहते हैं कि शिर्क उसी चीज का नाम है कि अल्लाह के साथ किसी और को भी उपासना में साझी कर लिया जाए या अल्लाह के गुणों में से कोई और गुण किसी और में मान लिया जाए और उल्लिखित काम सारे ऐसे हैं कि उनमें या तो अल्लाह के साथ किसी और की उपासना होती है या अल्लाह के गुणों में मुर्दा बुजुर्गों को साझी समझा जाता है। बरेलवी इस खुले शिर्क को करते हैं अर्थात अल्लाह के साथ दूसरों की उपासना भी करते हैं या अल्लाह के गुणों को बुजुर्गों में भी मानते हैं और फिर कहते हैं कि नहीं हम तो शिर्क नहीं करते क्योंकि शिर्क तो उस समय होता जब हम उन्हें उपास्य समझ कर पुकारते यद्यपि जब उनके अन्दर खुदाई गुणों को मान लिया गया या अल्लाह की तरह उनको उपासना के हक़ में साझी कर लिया गया तो वे " उपास्य" तो बन ही गए। आप उनको उपास्य कहें या न कहें। जब उपास्य वाली चीज़ें उनके लिए मान ली गयीं तो वे आप से आप उपास्य बन गए। जिस प्रकार पत्थर की मूर्ति की पूजा करने वाला है वह भी उसे अल्लाह या उपास्य नहीं समझता बल्कि उसे अल्लाह का स्वरूप या अवतार समझकर उससे दुआएं करता है उसके नाम पर चढ़ावे चढ़ाता है अर्थात नज़्र देता है उससे लाभ की व हानि की आशाएं बांधता है। उसको हाजत पूरी करने वाला समझता है मुसलमान

Www.IslamicBooks.Website

उसके बारे में यह अक़ीदा रखता है कि यह शिर्क है और इसे करने वाला मुश्रिक है क्योंकि पत्थर की मूर्ति की पूजा करता है यद्यपि उसे उपास्य नहीं समझता है न उपास्य समझकर ही उसे पुकारता है इसके बावजूद वह मुशिरक है क्यों? इसलिए कि वह मूर्ति को उपास्य समझता है या नहीं लेकिन इसके साथ उस पुजारी का मामला नहीं है जो एक उपासक और उपास्य के बीच होता है इस लिए वह निश्चय ही मुश्रिक है।

लेकिन यही मुसलमान क़ब्रों के साथ या मुर्दा बुजुर्गों के साथ यही कुछ करता है तो कहता है यह शिर्क नहीं क्योंकि मैं इसे उपास्य समझ कर नहीं पुकारता। यदि यह दलील सही है और इस तरह शिर्क शिर्क नहीं रहता तो फिर हिन्दू भी मुश्रिक नहीं हैं क्योंकि वह भी मूर्ति को उपास्य नहीं समझता है मक्का के मुश्रिक भी मुश्रिक नहीं क्योंकि वे भी लात व उज़्ज़ा और मनात व हुबुल को उपास्य नहीं समझते थे वे भी उनको अल्लाह का वसीला और वास्ता अर्थात उसकी समीपता का वसीला समझते थे (जैसा कि कुरआन ने इसका स्पष्टी करण दिया है) नूह की क़ौम जिन पांच बुतों को पूजती थी वह भी उपास्य नहीं समझती थी। अल्लाह के नेक बन्दे ही थे (जैसा कि सही बुख़ारी में स्पष्टी करण मौजूद है) इस दृष्टि से तो नूह की क़ौम ने भी शिर्क नहीं किया और कुरआन दूसरे मुश्रिकों के बारे में कहता है....'' जिनको तुम अल्लाह के सिवा पुकारते हो वे तुम जैसे ही बन्दे हैं।'' (आराफ़– 194)

अर्थात किसी दौर में भी ऐसे शिर्क का वजूद नहीं रहा कि जिसमें ग़ैरुल्लाह को उपास्य समझकर पुकारा गया हो बल्कि हर दौर में शिर्क की स्थिति यही रही है कि अल्लाह के नेक बन्दों ही की तस्वीरें या क़ब्रें यह समझ कर पूजी जाती रही हैं कि ये अल्लाह के

Www.IslamicBooks.Website

नेक बन्दे थे मरने के बाद अल्लाह से इनकी मुलाक़ात हो गयी है और ये अब अल्लाह के अवतार हो गए हैं। इनके ज़रिए से हम भी अल्लाह की समीपता हासिल कर सकते हैं। इनके वसीले से ही हमारी दुआएं और पुकारें सुनी जा सकती हैं और इनके नाम की नज़्र व नियाज़ें देकर ही हम अल्लाह को राज़ी कर सकते हैं।

कुरआन ने इसी अक़ीदे और कार्य को शिर्क कहा है और इसके करने वाले को मुश्रिक। यदि कुरआन की बात सही है और निश्चय ही सही है तो फिर बरेलवी और शिओं का अक़ीदा व कार्य भी वही है जो पिछली क़ौमों का रहा है तो इनका शिर्क, शिर्क क्यों नहीं? मात्र शीर्षक बदल देने से तो शिर्क का स्वरूप और हक़ीक़त नहीं बदल जाएगी। जब इन दोनों गिरोहों (बरेलवी और शिओं) का अक़ीदा और कार्य भी मुर्दा लोगों के साथ वही है जो मुश्रिक क़ौमों का अपने बुतों के साथ रहा है तो फिर दोनों के बीच फ़र्क़ व भेद किस प्रकार किया जा सकता है? और यह क्योंकर न्याय के ख़िलाफ़ हो सकता है कि एक को तो मुश्रिक ठहरा दिया जाए जबकि दूसरा व्यक्ति भी वही कुछ करे तो उसे मुश्रिक मानने से क्यों बचा जाए?

इबादत " किसे कहते हैं और " माबूद" कौन होता है?

लेखक लिखता है–

मस्जिदों में या रसूलल्लाह अलै क व सल्लम कहने से रोकने वाले लोग सूरह जिन्न की आयत 18 भी प्रस्तुत करते हैं" और यह कि मस्जिदें अल्लाह के लिए हैं अतः उनमें अल्लाह के साथ किसी और को न पुकारों। (मौलाना मौदूदी)

तफ़हीमुल कुरआन में मौदूदी साहब ने इस आयत की व्याख्या में लिखा है कि टीका कारों ने मस्जिदों को सामान्य रूप से इबादत गाहों के मायना में लिया है और इस मायना को देखते हुए आयत

Www.IslamicBooks.Website

का मतलब यह होगा कि इबादत गाहों में अल्लाह के साथ किसी और की इबादत न की जाए।

कुरआनी आयत का उद्देश्य और अभिप्राय भी हक़ीक़त में यही है। मौदूदी साहब के अनुयायियों को और दूसरे देव बन्दी और अहले हदीस हज़रात को सूझ बूझ से काम लेना चाहिए और अल्लाह के इर्शाद को समझना चाहिए खाम खाह कुफ़्र व शिर्क और बिदअत के फ़तवे लगा कर अपनी आक़िबत ख़राब नहीं करना चाहिए। तदअू के मायना ताअबुदू अर्थात बन्दगी या इबादत आता है। अल्लाह के साथ किसी को न पुकारों अर्थात किसी दूसरे माबूद को न पुकारो।" (पू0 30– 43)

इस लम्बी इबारत में "सीधा रास्ता" के लेखक मुनीर अहमद सैफ़ी साहब ने एक तो यह मश्वरा दिया है कि बेकार में शिर्क, कुफ़्र और बिदअत के फ़तवे लगाकर अपनी आक़िबत ख़राब नहीं करनी चाहिए क्योंकि हदीस के अनुसार अकारण किसी मुसलमान को काफ़िर कहने वाला स्वयं काफ़िर हो जाता है। यह मश्वरा बड़ा अच्छा और सही है। अल्लाह का शुक्र है हम इस पर पहले ही से अमल करते रहे हैं। हम बेकार में कुफ़्र, शिर्क और बिदअत के फ़तवे लगाकर अपनी आक़िबत ख़राब नहीं करना चाहते लेकिन जहां वास्तव में शिर्क हो रहा हो उसकी ओर इशारा करना और मुसलमानों को उससे सचेत करना तो वह अनिवार्य कर्तव्य है कि उसमें खामोश रहने वाला गूगां शैतान ठहराया जाता है।

हमारी इच्छा और कोशिश है कि मुसलमान मुश्रिकाना अक़ीदे और कामों से तौबा कर लें जिनका वे दुर्भाग्य से शिकार हैं क्योंकि शिर्क ऐसा महान जुल्म है जो माफ़ नहीं किया जाएगा या यह कि आदमी दुनिया ही में उससे सच्ची तौबा कर ले। मुसलमानों के

Www.IslamicBooks.Website

शिर्क परस्ती के काम ही हमें बेचैन और परेशान रखते हैं और उनकी भलाई ही की भावना है जो सत्य बात कहने के कर्तव्य को पूरा करने पर मजबूर करती है। जर्राह या सर्जन के आपरेशन से रोगी को तकलीफ़ अवश्य होती है लेकिन रोगी की भलाई ही का तक़ाज़ा है कि वह आपरेशन के द्वारा गन्दा पदार्थ या बढ़ा हुआ पदार्थ बाहर निकाल फेंके क्योंकि वह जानता है कि उसके बिना रोगी का स्वस्थ होना संभव नहीं।

उलमा ए अहले हदीस शिर्क व बिदअत के खिलाफ़ वही आपरेशन का अमल करते हैं जिससे रोगी कराहता और चीखता है फिर भी उलमा ए अहले हदीस मुसलमानों के सच्चे हितैषी हैं और वे अपना काम किए जा रहे हैं और लोगों की नाराजी के बावजूद उन्हें शिर्क व बिदअत जैसे ख़तरनाक रोगों से बचाने में प्रयास रत हैं।

दूसरी बात लेखक ने यह बतायी है कि "अल्लाह के सिवा किसी को मत पुकारो" का मतलब है " अल्लाह के सिवा किसी की इबादत न करो।" यह बात भी बिलकुल सही है और आयत में पुकार का वास्तव में यही मतलब है क्योंकि पुकार अपनी जगह इबादत नहीं है बल्कि वह पुकार इबादत है जो किसी अलकिक रूप से मदद के लिए हो। यदि अल्लाह को पुकारा जाएगा अर्थात उससे मदद की प्रार्थना की जाएगी तो यह अल्लाह की इबादत होगी किसी पत्थर की मूर्ति को पुकारा जाएगा अर्थात उससे मदद तलब की जाएगी तो इस मूर्ति की पूजा (इबादत) होगी। क़ब्र में दफ़न किसी व्यक्ति को पुकारा जाएगा अर्थात उससे मदद या फ़रियाद की जाएगी तो यह उस बुज़ुर्ग की इबादत होगी।

इसलिए समस्या केवल यह नहीं है कि "या रसूलल्लाह" कहना जायज़ है या नहीं। क्योंकि यदि अक़ीदा यह हो कि

Www.IslamicBooks.Website

रसूलल्लाह सल्ल0 आलिमुल ग़ैब (ग़ैब के ज्ञाता) हाज़िर नाज़िर (हर जगह मौजूद) और आज सुनने व देखने में समर्थ नहीं हैं तो वह " या रसूलल्लाह" कह लेगा तो इसमें कोई हरज नहीं, जिस तरह अत्तहियात में अस्स्लाम अलै क अय्युहन्नबिय्यु कहा ही जाता है यदि बरेलवी लोग भी यह मान लें कि हमारा अक़ीदा भी यही है कि अलिमुल ग़ैब, हाज़िर नाज़िर, सुनने देखने वाला और दूर व निकट से फ़रियादें सुनने वाला केवल अल्लाह ही है, हम किसी नबी, वली और बुजुर्ग के अन्दर ये गुण नहीं मानते तो निश्चय ही उनका "या रसूलुल्लाह" कहना शिर्क न होगा। इसे बेतुकी तरकीब अवश्य कहा जाएगा लेकिन इसे शिर्क का नाम नहीं दिया जाएगा।

लेकिन असल बात यही है कि बरेलवी लोगों का अक़ीदा ही सही नहीं है इस लिए उनका " या रसूलल्लाह" कहना मात्र अस्सलामु अलै क या अय्युहन्नबिय्यु की क़िस्म से नहीं है कि जिसे जायज़ मान लिया जाए बल्कि वे यह समझते हैं कि नबी सल्ल0 आलिमुल ग़ैब, हाज़िर नाज़िर और सुनते और देखते हैं इसलिए जब हम " या अल्लाह" कहते हैं तो अल्लाह हमारी इस पुकार को सुनता है इसी तरह जब हम " या रसूलल्लाह" कहते हैं तो नबी सल्ल0 भी हमारी इस पुकार को सुनते और जानते हैं यही कारण है कि समस्या अब केवल " या रसूलल्लाह" कहने या न कहने की नहीं रही बल्कि अब यह अपने लाजिक नतीजे तक पहुंच गयी है। और "या रसूलल्लाह मदद" और " अल मदद या रसूलल्लाह" के स्टीकर भी आम हो गए हैं।

पहले केवल " या अली मदद" का नारा ही आम था। तौहीद परस्तों ने इसके मुक़ाबले में कोशिश की कि सारे मुसलमान इस मुश्रिकाना नारे की बजाए " या अल्लाह अल मदद" का नारा लगाएं

Www.IslamicBooks.Website

अतएव उन्होंने " या अल्लाह मदद" के स्टीकर बनाकर फैलाए। उद्देश्य यह था कि शीओं के ईजाद किए गए मुश्रिकाना नारे से अहले सुन्नत के सीधे सादे लोगों को बचाया जाए मगर बरेलवियों ने "या अल्लाह मदद" के मुक़ाबले में " या रसूलल्लाह मदद" के स्टीकर छपवा कर एक ऐसा नारा ईजाद कर लिया जिसमें अल्लाह की बजाए एक बरगुज़ीदा मख़लूक़ अर्थात अल्लाह के पैग़म्बर से मदद की जा रही है वह भी अलौकिक तरीक़े से।

हम लेखक से पूछते हैं कि " या अली मदद" या " या रसूलल्लाह मदद" के नारों की क्या दलील है? क्या ये नारे लगाने वालों का अक़ीदा यह नहीं है कि अल्लाह की तरह हज़रत अली रज़ि0 और रसूलुल्लाह सल्ल0 भी अलौकिक तरीक़े से और दूर व निकट से हमारी फ़रियादें सुन सकते है। हमारी मदद कर सकते हैं और हमें लाभ और हानि पहुंचा सकते हैं और क्या इस अक़ीदे के साथ किसी को पुकारना ही उसकी उपासना करना नहीं है? क्या यह " उपासना" मस्जिदों में नहीं हो रही है? और क्या यह मस्जिदें अल्लाह के लिए हैं उनमें अल्लाह के साथ किसी और को न पुकारो के खुल्लम खुल्ला ख़िलाफ़ नहीं है?

एक स्टीकर का अवलोकन

बज़्मे ख़ैर अन्देश वस्सन पुरा लाहौर की ओर से एक स्टीकर छपा है जिसमें लिखा गया है–

" पुकारो या मुहम्मद (सल्ल0) या रसूलल्लाह"

○ या मुहम्मद या रसूलल्लाह सल्लाल्लाहु अलै क व सल्लम कहने वाला भाग्य शाली है और शिर्क व बिदअत कहने वाला कुरआन व हदीस का इन्कारी है।

○ इमाम बुख़ारी और अन्य मुहद्दिसीन लिखते हैं जब कष्ट

Www.IslamicBooks.Website

और परेशानी हो तो पुकारो या मुहम्मद या रसूलल्लाह सल्ल0 अलै क व सल्लम।

❍ साम्प्रदायिक अहले हदीस ने शब्द "या" काट दिया और हदीस दुश्मनी का सबूत दिया।

❍ हवाला ग़लत साबित करने वाले को मुंह मांगा इनाम दिया जाएगा।

हमने पूरे स्टीकर की इबारत (सिवाए हवालों के) नकल कर दी है हम क्रमवार इस का जवाब न्याय प्रिय और बुद्धिमान लोगों के सामने पेश करते हैं–

1– या मुहम्मद– या रसूलल्लाह– इसका उर्दू अनुवाद है ऐ मुहम्मद ऐ रसूलल्लाह सल्ल0 अलै क व सल्लम। मानो इसमें रसूलल्लाह से सम्बोधन किया गया है। यदि यह सम्बोधन केवल मुहब्बत के लिए है जिस तरह कभी कभी एक मुहब्बत करने वाला अपने महबूब को अपनी कल्पना में सोच कर उससे सम्बोधन करके काल्पनिक जगत में उससे बातें करता हैं। सम्बोधन करने वाले का अक़ीदा यह नहीं होता है कि हुजूर ग़ैब का ज्ञान रखते हैं या हर जगह मौजूद हैं और दूर व निकट की बातें सुनने पर समर्थ हैं तो इस नारे को इश्क़ व मुहब्बत का एक द्योतक समझा जा सकता है और इस आधार पर इसे जायज़ माना जा सकता है लेकिन यदि कहने वाले का अक़ीदा यही है कि आप ग़ैब के ज्ञाता हैं हर जगह उपस्थित हैं और हमारी फ़रियादें सनुने पर समर्थ हैं तो यह कहना भाग्यशाली नहीं अन्यन्त दुर्भाग्य की बात है। इस तरह निश्चय ही वह शिर्क व बिदअत का कार्य करता है जिसे भाग्य शाली कार्य वही व्यक्ति समझ सकता है जो तौहीद व सुन्नत से अनभिज्ञ हों।

2– इसे अहले हदीस इसी आधार पर शिर्क व बिदअत का नाम

Www.IslamicBooks.Website

देते हैं कि इसमें अक़ीदा की ख़राबी पायी जाती है जो मनुष्य को शिर्क तक ले जाती है जिस तरह कि वास्तव में अब इसका ज़ाहिर होना शुरू हो गया है और अब " या रसूलल्लाह से मामला बढ़कर या रसूलल्लाह मदद" तक पहुंच गया है। इस लिए अहले हदीस शिर्क पर आधारित स्वयं के गढ़े हुए नारों का इन्कार करके कुरआन व हदीस के इन्कारी नहीं बनते बल्कि कुअआन व हदीस के मुहाफ़िज़ हैं।

3– स्टीकर छापने वालों ने दावा तो यह कर दिया है कि हवाला ग़लत साबित करने वाले को मुंह मांगा इनाम दिया जाएगा लेकिन हम पूरे विश्वास के साथ कहते हैं कि उन्हों नेंअल अदबुल मुफ़रद" तोहफ़तुज़्ज़ाकिरीन शोकाफ़ी, किताबुल अज़कार नबवी, अमलुल यवमु वल्लै ल त, इब्नु स्सुन्नी, फ़तहुल बारी और लेखक इब्ने अबी शीबा इन छः किताबों का हवाला दिया है लेकिन किसी भी मुहद्दिस के ये शब्द नहीं दिखाए जा सकते।

" जब तकलीफ़ और परेशानी हो तो पुकारो–" या मुहम्मद या रसूलल्लाह सल्लल्लाहु अलै क व सल्लम"

पहली चार किताबों में केवल वह घटना बयान हुई है जो पहले गुज़र चुकी है कि हज़रत अब्दुल्लाह बिन उमर रज़ि0 के पांव सुन्न हो गए तो किसी ने कहा कि आप ऐसे व्यक्ति को याद करें जिससे आपको सबसे अधिक मुहब्बत हो तो उन्होंने कहा– " मुहम्मद" या "या मुहम्मद"

इसके तहत उन्होंने जो अध्याय भी बांधा है वह भी यह है कि जब किसी के पैर सुन्न हो जाएं तो वह क्या कहे? किसी किताब में भी ये शब्द नहीं हैं कि–

" जब तकलीफ़ और परेशानी हो तो पुकारे " या मुहम्मद या

Www.IslamicBooks.Website

रसूलल्लाह।"

इसी पुकार अन्तिम दो किताबों में वह घटना बयान हुई है जिसमें मालिकुद्दार के हवाले से सपने में एक व्यक्ति को हज़रत उमर रज़ि0 के पास जाने के लिए कहा गया है और जिसके बारे में हम पहले बयान कर आए हैं कि सनद की रू से यह घटना ही सही नहीं है। इसके अलावा यह सही हदीसों में बयान किए गए तरीक़ों के भी ख़िलाफ़ है अर्थात इन दोनों किताबों में भी ये शब्द नहीं हैं कि–" जब तकलीफ़ और परेशानी हो तो पुकारो " या मुहम्मद या रसूलल्लाह।"

अर्थात छः किताबों के हवाले दिए गए हैं और किसी एक किताब में भी उल्लिखित शब्द नही हैं इसलिए हम स्टीकर के बनाने वाले या उसे छापने वाले से कहेंगे कि वह मुहद्दिसीन की ओर मन्सूब उपरोक्त शब्द निकाल कर दिखाएं या फिर हमें मुंह मांगा इनाम दें। हमारा मुंह मांगा इनाम ज़्यादा नहीं है केवल एक ही बात है कि आम मुसलमानों को केवल एक अल्लाह का अनुयायी रहने दें। उन्हें ग़ैरुल्लाह का परिस्तार बनाकर उनकी आक़िबत ख़राब न करें और केवल " या अल्लाह मदद" के स्टीकर छपवाकर बांटे ताकि लोग "या अली मदद" या " या रसूलल्लाह मदद" जैसे मुश्रिकाना नारों से बच जाएं।

4–यह दावा या आरोप भी सही नहीं है कि " साम्प्रदायिक अहले हदीस" ने शब्द " या " काट दिया और हदीस दुश्मनी का सबूत दिया। हमारी लाइब्रेरी में " अल अदबुल मुफ़रद" की मिसरी प्रति मौजूद है और उसमें इसी तरह " या" के बिना है जिस तरह सांगला हिल के अहले हदीस प्रकाशक ने किताब छापी है। अल्लाह का शुक्र है किताब में किसी भी प्रकार की कांट छांट नहीं की गयी है

Www.IslamicBooks.Website

जिसे शक हो वह आकर दोनों प्रतियां हमारी लाइब्रेरी में देख सकता है।

अहले हदीस को " साम्प्रदायिक" कहना मौलिक रूप से ग़लत है क्योंकि अहले हदीस की दावत व्यक्ति या किसी पार्टी की दावत नहीं है वह किसी इमाम, या किसी विशेष फ़िक़्ह की तरफ़ दावत नहीं देते जिससे कोई नया सम्प्रदाय वजूद में आता है उनकी अक़ीदत का केन्द्र और आज्ञा पालन का दायरा केवल और केवल हज़रत मुहम्मद सल्ल0 की पाक ज़ात है और इसी की ओर वे लोगों को बुलाते हैं। हनफ़ी एक सम्प्रदाय है जो इमाम अबू हनीफ़ा रह0 और उनकी ओर मन्सूब फ़िक़्ह की ओर लोगों को बुलाता है। शाफ़ओ एक सम्प्रदाय है जो इमाम शाफ़ओ रह0 और फ़िक़्ह शाफ़ओ की ओर बुलाता है। हम्बली एक सम्प्रदाय है जो इमाम अहमद बिन हम्बल और फ़िक़्ह हम्बली की ओर बुलाता है। मालिकी एक सम्प्रदाय है जो इमाम मालिक और मालिकी फ़िक़्ह की ओर बुलाता है।

दूसरे सम्प्रदाय जो ख़ास व्यक्तियों और ख़ास फ़िक़्ह की ओर बुलाते हैं लेकिन अहले हदीस का एक ही इमाम है और वह हज़रत मुहम्मद सल्ल0 है केवल उन्हीं के फ़रमान को वे आज्ञा पालन योग्य मानते हैं उनकी कोई विशेष किताब नहीं जिसकी ओर वे लोगों को बुलाते हों बल्कि उनकी किताब और फ़िक़्ह जिसे मानने की वे दावत देते हैं केवल क़ुरआन करीम और हदीसे सहीहा हैं इसलिए वह सम्प्रदाय नहीं, सम्प्रदायों को समाप्त करने वालों और असल इस्लाम के आवाहक हैं जो केवल हुज़ूर सल्ल0 के दामन से जुड़े होने में ही मुक्ति को ज़रूरी मानते हैं।

(साप्ताहिक अल "ऐतिसाम" 13 सितम्बर– 1991 ई0)

Www.IslamicBooks.Website

या सारियतुल ज ब ल की तहक़ीक़

मौलाना ज़ुबैर अली ज़ई (अटक)

साप्ताहिक " अल ऐतिसाम" 13 सितम्बर 1991 ई0 के अकं में मौलाना हाफ़िज़ सलाहुद्दीन यूसुफ़ साहब ने लिखा है " जहां तक हज़रत उमर रज़ि0 की घटना या सारियतुल ज ब ल की बात है यह घटना सनद की दृष्टि से बेशक स्वीकार योग्य है लेकिन यह करामत के रूप में है।

हमारी तहक़ीक़ के अनुसार हाफ़िज साहब की यह बात सही नहीं है। इस घटना की सारी सनदों, पर सारांश में बहस प्रस्तुत की जा रही है।

1– याहया बिन अय्यूब अन इब्न अजलान अन नाफ़ेअ अन इब्न अम्र बा– दलाइलुल नुबुवत बेहैकी 6– 370, शरह उसूल एतिक़ाद अहले सुन्नत वल जमाअतुलाबी अल क़ासिम अल लाल काई 7–130 ह 2037,

अल अरबओन अस्सूफ़िया लाबी अब्दुर्रहमान अस्सलमी 3–2, तारीख़ इब्ने असाकर 13–63–2, अलमुन्तक़्लिलज़िया अल मुक़दसी 28,29– कमा फिस्सिलसिल तुस्स ही हतु लिल शैख़ अल अलबानी 3/101 ह 1110– अज्ज़ीन आक़ूली की फ़वाइद व इब्नुल आराबी फ़ी करामातुल औलिया कमा फ़िल असाबत 2/3 इस सनद में बड़ी खराबियां हैं। (1) मुहम्मद बिन अजलान सदूक़ है मगर मुदल्लिस है देखिए तबकातुल मुदल्लिसीन ला बिन हिज्र अल मुरतबुतुस्सा लिसा– 44 त 98, अन्नबिय्यीन ला समा उल मुदल्लिसीन ला बिन अल अजमजी– 10, क़सीदा फ़िल

Www.IslamicBooks.Website

मुदल्लिसीन बि महमूद अल मुक़द्दसी शेअर 20, रक़म 56, जामेउत्तहसील लिल अलाई 109, असमा मिन उफ़ बित्तदलीस लिस्सु यूती–63,

उसूले हदीस में यह बात निश्चित है कि मुदल्लिस का अनअना हदीस की सेहत के लिए क़ादेह है अतः मुदल्लिस की मुअन अन रिवायत के न होने की सूरत में मर्दूद के हुक्म में है देखिए मुक़दमा इब्नुस्सलाह पृ0 99, अर्रिसाला लिश्शफ़िअी पृ0 379– 380,

इमाम याहया बिन मुअीन ने कहा– मुदल्लिस जिसमें तदलीस करे (अर्थात अदमे सिमाअ वाली रिवायत) हुज्जत नहीं होती (अलकिफ़ाया लिल ख़तीब पृ0 362) बल्कि इमाम नववी ने कहा– मुदल्लिस जब अन से रिवायत करे तो आम सहमति से हुज्जत नहीं होती (अल मजमूअ शरहुल मुहज्ज़िब 6–212, नसबुर्रायत 2–34) इस इत्तिफ़ाक़ से तार्त्पय मुहद्दिसीन का इत्तिफ़ाक़ है जो मुर्सल को हुज्जत नहीं मानते अतः यह सनद ज़ईफ़ है। (2)– इमाम उक़ैली ने मुहम्मद बिन अजलान के बारे में कहा···· यज़तरब फ़ी हदीस नाफ़ेअ (तहजीबुल तहज़ीब 9–305) अर्थात " वह नाफ़ेअ से हदीस बयान करने में परेशानी का शिकार होता है।"

(याहया बिन अय्युब अल ग़ाफ़की और इब्न अजलान पर कुछ उलमा ने कलाम भी किया है मगर इन्शा अल्लाह कुछ भी हानिकारक नहीं है पहले वाले पर जिरह ज़्यादा सख़्त है)

2– अयास बिन मुआवियह बिन कुर्रह की मुर्सल रिवायत– हवाला उपरोक्त उल्लिखित।

मुर्सल रिवायत जमहूर तहक़ीक़ करने वालों के निकट मर्दूद होती है देखिए अल फ़ियता मुसतलह अल हदीस लिल इराक़ी– आदि तथा कुतुब उसूलुल हदीस (क़ालाः व रद्दह जमाहीरुल

Www.IslamicBooks.Website

नक्क़ाद लिल जेहल बिस्साकित फ़िल असनाद)

3– अय्युब बिन ख़ौत अन अब्दुर्रहमान अस्सिराज अन नाफ़ेअ अल फ़वाइद लाबी बकर बिन ख़ल्लाद (1–210–2) वह हवाला अस्सहीहा(1110) इस में अय्युब बिन ख़ौत का मतरूक है जैसा कि दार कुतनी आदि ने कहा है, साजी ने कहा, उलमा का इसकी हदीस तर्क करने पर इजमाअ है। वह असत्य रिवायतें बयान करता था। ईसा बिन यूनुस आदि ने इस पर झूठ बोलने का आरोप लगाया है। देखिए– तहज़ीबुल तहज़ीब (352–1) इब्न मुईन आदि ने कहाः इसकी हदीस न लिखी जाए।

4– फ़रात बिन साइब अन मैमून बिन मेहरान अन इब्न उमर उसदुल ग़ाबा 2– 244– फ़रात बिन साइब मतरूकुल हदीस है जैसा कि नसाई आदि ने कहा। बुख़ारी ने हदीस का इन्कारी कहा। यह बड़ी कठोर जिरह है। बुख़ारी ने कहाः हर वह व्यक्ति जिसे मैंने हदीस का इन्कारी कहा उससे रिवायत (मेरे निकट) हलाल नहीं है। (मीज़ानुल एतिदाल 1–6, लिसानुल मीज़ान 1–20) अहमद ने कहाः वह मुहम्मद बिन ज़ियाद अत्तिहान के करीब है (और यह तिहान मशहूर झूठा था) इब्ने अदी ने कहाः इसकी हदीसें ग़ैर महफ़ूज़ हैं और मैमून से इसकी (रिवायत) मुन्कर हैं (देखिए लिसानुल मीज़ान 4–503–504)

5– अल वाकिदी अन शुयूख़ा– अलबिदाया वन्नहाया 7–135, अल असाबा 2–3)

मुहम्मद बिन उमर अल वाक़िदी मतरूकुल हदीस है जैसा कि अबु ज़रअ राज़ी आदि ने कहा। नसाई, इब्ने राहूया, अहमद बिन हम्बल ने इसे झूठा आदि कहा। शाफ़ओ ने कहाः वाक़िदी की किताबें सब की सब झूठ हैं (देखिए तहज़ीबुल तहज़ीब 9, 323, 326)

Www.IslamicBooks.Website

कुछ रावियों ने इसकी पुष्टि की है जो कि जमहूर उलमा ए मुहद्दिसीन की जिरहों में मुक़ाबले में मर्दूद हैं, हाफ़िज ज़हबी ने मीज़ानुल एतिदाल में इसके ज़ईफ़ होने पर (शायद अपने ज़माने के उलमा) इजमाअ नक़ल किया है।

6– सेफ़ बिन उमर बिन अन शुयूख़ा– अलबिदाया वान्नहाया 7–134 सैफ़ के बारे में अबु हातिम राज़ी ने कहा– मतरूकुल हदीस है इसकी हदीस वाक़िदी (की हदीस) से मिलती जुलती है। इब्ने हिबान ने कहाः भरोसे मन्द रावियों से मौज़ूअ रिवायतें बयान करता है। हाकिम आदि ने कहाः इस पर ज़िन्दीक़ होने का आरोप और रिवायत में वह साक़ित है। देखिए– तहज़ीबुल तहज़ीब (4–359–26)

7– हिशाम बिन मुहम्मद बिन मुखल्लिद बिन मतर अन अबी तोबता अन मुहम्मद बिन मुहाजिर अन अबी बलज अली बिन अब्दुल्लाह ब– अस्सुन्नह लिल लालकाई 7– 1330, 1331 है 25 38, इसमें हिशाम और अबु बलज अली बिन अब्दुल्लाह के हालात ना मालूम हैं।

8– अल लालकाई अन मालिक अन नाफ़ेअ अन इब्न उमर अलबिदाया वन्निहाया 7–135

यह रिवायत लालकाई की किताब में नहीं मिली और स्वयं हाफ़िज़ इब्ने कसीर रह0 ने कहाः " व फ़ी सेहत मिन हदीस मालिक नज़र"

इस तहक़ीक़ का सारांश यह है कि यह क़िस्सा सनद की दृष्टि से अपने सारे तरीक़े के साथ सही नहीं है बल्कि ज़ईफ़ है अतः कुछ उलमा का इसे हसन क़रार देना ग़लत है।

हाफ़िज़ इब्ने हिबान ने कया खूब बात कही–

Www.IslamicBooks.Website

" अर्थात जो जईफ रिवायत करे और जिस की रिवायत ही न की जाए दोनों हुक्म में बराबर है (दूसरे शब्दों में ज़ईफ़ की रिवायत का वजूद होना और न होना बराबर है)

मालिकुद्दार की रिवायत

हाफ़िज़ सलाहुद्दीन यूसुफ़ साहब हिफ़्जुल्लाह ने कहा– " यह क़िस्सा सही नहीं है इसलिए कि घटना का असल रावी मालिकुद्दार है जो अज्ञात है जब तक उसकी पहचान और हैसियत का पता नहीं चलेगा यह घटना विश्वास करने योग्य नहीं होगी (पृ0 13)

यह घटना निम्न पुस्तकों में मौजूद है–

लेखक इब्ने अबी शीबा 12–31–32, अत्तारीखुल कबीर लिलबुख़ारी 7– 304 मुख्तसरन जद्दन मअस्सक़त मिनस्सनद दलाईलुल नुबुवत बैहेक़ी 7–47 अल इर्शाद अल ख़लील) 1–313, 314, बिन अबी सालेह अन मालिकुद्दार की सनद से रिवायत किया है।

इसमें इमाम आमश मुदल्लिस हैं और किसी सनद में उसके समाअ की व्याख्या मौजूद नहीं हैं। अल एतिसाम अंक 20 मुहर्रम 1412 हि0 में मेरा पृ0 10 पर एक लेख छपा है जिसके पृ0 17–18 पर आमश की तदलीस और अबु सालेह से इसकी रिवायत पर काफ़ी बहस मौजूद है।

इमाम अब्ने ख़ज़ीमा नीशा पुरी अपनी प्रख्यात किताब अत्तौहीद व असबात सिफ़ातुर्रब में पृ0 38 में आमश की मुअन अन रिवायत पर जिरह करते हुए लिखते हैं। वस्सानियता इन्नल आमश मुदल्लिस लम यज़कुर इन्नहु समिअहु मिन हबीब बिन अबी साबित और हाफ़िज़ इब्न अब्दुल बर्र उन्दलुसी एक हदीस के बारे में कहते हैं– वहाजल हदीसु लैसा बिल क़वी लि इलल आअमश ला यसह लहू

Www.IslamicBooks.Website

सिमाउन मिन अनसिन व काना मुदल्लिसन अनिज़्ज़ुआ फ़ा अ

अतः हाफिज़ इब्ने हजर रह0 का इस सनद को सही कहना सही नहीं है बल्कि अपने लेख में स्वयं हाफ़िज़ इब्ने हजर रह0 से नक़ल कर चुका हूं कि आअमश की मुअन अन रिवायत मअलूल होती है (दुखिए 17 और तलख़ीस अलजबीरज 3–19)

अल अदबुल मुफ़रद की एक रिवायत

सुफ़ियान अन अबी इसहाक़ अन अब्दुर्रहमान, इब्न उमर रज़ि0 का पांव सो गया तो किसी ने उनसे कहाः आप को जो व्यक्ति सबसे अधिक प्रिय है उसे याद करें तो उन्होंने कहाः मुहम्मद, और कुछ प्रतियों में है " या मुहम्मद (सल्ल0) इस सनद में सुफ़ियान सूरी और अबु इसहाक़ अस्सबीअी दोनों मुदल्लिस रावी हैं और दोनों अन से रिवायत कर रहे हैं बल्कि अबु इसहाक़ को तो हाफ़िज़ इब्ने हजर रह0 ने भी तबका सालिसा में ज़िक्र किया है अतः ये सनदें दो ख़राबियों के कारण ज़ईफ़ हैं। जो लोग हाफ़िज़ रह0 की इस तक़सीम तबक़ात को पूरी तरह यक़ीनी समझते हैं उनके निकट भी इस रिवायत का मर्दूद होना मुसल्लम हो जाता है। इमाम शाफ़अी और दूसरे तहक़ीक़ करने वाले जो हर प्रकार के मुदल्लिस की हर मुअन अन रिवायत (जिसमें समा अ की व्याख्या न हो) ग़ैर मक़बूल समझते हैं उनके निकट तो इस सनद का कमज़ोर होना निश्चित है।

Www.IslamicBooks.Website

(4)

अल्लाह को छोड़ कर दूसरों से मदद मांगना शिर्क है

प्रौ0 ताहिरुल क़ादरी ने बिस्मिल्लाह की टीका में बिस्मिल्लाह की बा से विवेचन करते हुए मदद मांगने पर निम्न विचार व्यक्त किए हैं।

" उन समस्त साधनों और ज़रियों से मदद मांगे जिनकी मदद अल्लाह के मालिक व स्वामी होने की ओर इशारा कर रही है लेकिन संसाधनों को कभी भी उद्देश्य का बदल न बनाया जाए। मनुष्य को चाहिए कि इन सब संसाधनों से प्राप्त होने वाले लाभ व हानि में भी असल नज़र अल्लाह ही की कुदरत पर जमाए रखे। इसलिए बिस्म में नाम हक़ से मदद की शिक्षा देकर साधन के महत्व को भी स्पष्ट कर दिया गया और इसकी वृद्धि ल्लाहिर्रमानिर्रहीम की ओर करके हक़ीक़त को भी बयान कर दिया गया।

यदि सोच विचार और सूझ बूझ के साथ इस हक़ीक़त को भली प्रकार समझ लिया जाए तो याचना व सहायता की समस्या पर धार्मिक हलकों में मौजूद इल्मी विवाद बड़ी हद तक दूर हो सकता है। हिन्दुस्तान के अन्तिम दौर के शोधकर्त्ता उलमा की शोध व व्याख्या का भी अध्ययन किया जाए तो उल्लिखित स्पष्टीकरण की पुष्टि होती है। इस सिलसिले में दो उलमा के दृष्किोण देखिए– सूरह फ़ातिहा की टीका में इय्या क नअबुदू व इय्या क नसतअीन के अन्तर्गत मौलाना नईमुद्दीन मुरादाबादी लिखते हैं– " इय्या क

Www.IslamicBooks.Website

नसतअीन" में यह शिक्षा दी। सहायता चाहे वास्ते से या बे वास्ते के हर तरह अल्लाह के साथ ख़ास है। हक़ीक़ी मदद देने वाला वही है बाक़ी साधन, सेवक, दोस्त आदि सब अल्लाह के मददं गारों के द्योतक हैं। बन्दे को चाहिए कि इस पर नज़र रखे और हर चीज़ में अल्लाह की कुदरत के हाथ को काम करते देखे। इससे यह समझना कि औलिया व अम्बिया से मदद चाहना शिर्क है असत्य अक़ीदा है क्योंकि सत्य के मुक़र्रब लोगों की मदद अल्लाह की मदद है ग़ैर की मदद नहीं।"

अब इसी आयत के अन्तगत उपरोक्त उल्लिखित मफ़हूम को मौलाना महमूदुल हसन देवबन्दी इन शब्दों में बयान करते हैं--

" इस आयत से मालूम हुआ कि उस पाक ज़ात के सिवा किसी से हक़ीक़त में मदद मांगनी बिल्कुल नाजायज़ है। हां यदि किसी मक़्बूल बन्दे को अल्लाह की रहमत का वास्ता देकर और ग़ैर मुस तक़िल समझकर ज़ाहिरी मांग उससे करे तो यह जायज़ है कि यह मदद मांगना हक़ीक़त में अल्लाह ही से मांगना है।"

आपने देख लिया कि दोनों इबारतों का मफ़हूम व मन्शा एक ही है तसमिया में शब्द इस्म के इस्तेमाल से भी मनुष्यों को यही शिक्षा देना अभिप्राय था कि जीवन के समस्त मामलों में वास्तविक देने वाला केवल वही अल्लाह है लेकिन इस संसार में हर प्राणी को अल्लाह ने अपनी दयालुता और अपनी मदद के वास्ता व द्योतक के रूप में पैदा किया है जो हस्ती ज़ाते हक़ के जितनी निकट है वह उतनी मज़हरियत की शान में भी श्रेष्ठ होगी अतः जीवन के मामलों में भौतिक साधन हों या आध्यात्मिक उनसे लाभ उठाया जाए और उनके द्वारा मदद भी ली जाए कि कायनात के निज़ाम का उसूल भी यही है और हरेक की मदद में वास्तविक कारसाज़ की कृपा व दया

Www.IslamicBooks.Website

पर भी नज़र रखी जाए कि बन्दगी का तक़ाज़ा यही है।

(नवाए वक़्त लाहौर– 23 अप्रैल 1987 ई0)

मिन्हाजुल कुरआन के लेखक की उपरोक्त फ़लसफ़याना बातें पढ़कर उनके बारे में अच्छे गुमान को काफ़ी धक्का लगा है। हमारा विचार था कि डाक्टर साहब की इल्मी सतह आम बरेलवी उलमा से ऊंची होगी। वे मज़हबी और तक़लीदी ख़ोल से निकल कर फ़िकरों नज़र के सोतों से सीराब होते होंगे और उनका मानसिक क्षितिज व्यापक होगा लेकिन उल्लिखित टीका में उन्होंने शिर्क जली की प्रचलित सूरतों को सही और जायज़ साबित करने के लिए वही घिसी पिटी बातें दोहरायी हैं जो क़ब्र परस्त आम तौर पर कहते हैं जिनमें कोई वज़न नहीं बल्कि इसमें भी आम लोगों की जिहालत से नाजायज़ लाभ उठाने की ही रूह मौजूद है।

यद्यपि सूझ बूझ रखने वाला हर समझदार आदमी समझता है कि संसाधनों के अन्तर्गत एक दूसरे से सहयोग व मदद लेना एक अलग मसला है और अलौकिक तरीक़े से हाजत पूरी कराने और मुश्किलें हल कराना अलग मसला। पहले मसले पर तो कायनात की सारी व्यवस्था क़ायम है और उसके बिना दुनिया का कारोबार चल ही नहीं सकता। कोई आदमी भी अन्य मनुष्यों से बे नियाज नहीं हो सकता। अल्लाह ने साधनों की व्यवस्था ही ऐसी क़ायम की है और एक दूसरे से इस तरह जोड़ दिया है कि एक लखपति, करोड़ पति बल्कि अरब पति व खरब पति भी जब तक अपने अलावा दूसरे मनुष्यों से सहयोग व मदद हासिल नहीं करता वह जीवन में एक क़दम भी नहीं चल सकेगा। नबी और रसूल तक भी इन साधनों के अनुसार ही जीवन गुज़ारने पर मजबूर रहे हैं इसलिए इन संसाधनों के महत्व व लाभकारी होने की ज़रूरत और हर व्यक्ति के

Www.IslamicBooks.Website

लिए इनका ज़रूरत मन्द होना स्पष्टीकरण का मोहताज नहीं।

असल मसला जो घ्यान देने योग्य है वह दूसरा है अर्थात अप्राकृतिक और अलौकिक साधनों द्वारा अल्लाह के सिवा किसी को अपनी हाजतों को पूरी करने वाला, मुश्किलों को हल करने वाला और लाभ व हानि पहुंचाने वाला समझना। क्या यह भी बिल्कुल इसी तरह है जिस तरह साधनों के अन्तर्गत किसी से मदद और सहयोग हासिल करना?।

साफ़ सी बात है दोनों समान नहीं, इनके बीच आसमान व ज़मीन का फ़र्क़ है। पूरब और पश्चिम की दूरी है, रात और दिन का सा अन्तर है। मदद व सहायता अल्लाह के अलावा लेने की बहस में साधनों के अन्तर्गत और अलौकिक तरीक़ों से तो दोनों के बीच बड़ा भारी अन्तर है जिसे नज़र अंदाज़ नहीं किया जा सकता।

क्या कुरआन व हदीस में कहीं भी यह मौजूद है कि मुर्दा व्यक्ति को अपनी मदद के लिए पुकारो कि वह भी अल्लाह के मददगार हैं? क्या नबियों ने अपने पहले रसूलों से मदद व सहायता हासिल की? क्या सहाबा किराम ने क़ब्रों में दफ़न बुजुर्गों से अपनी हाजतें तलब कीं? उन्हें हानि व लाभ का मालिक समझा? और आजकल क़ब्रों पर जो लात व मनात के कारोबार की गर्म बाज़ारी है क्या सहाबा, तबअ ताबअीन के दौर में इसका कोई उदाहरण किसी सही सनद के साथ मिलता है? यदि नहीं और निश्चय ही नहीं तो फिर शब्दों की जादूगरी और तावीलों की कारीगरी से शिर्क का जायज़ होना साबित नहीं हो सकता। शिर्क शिर्क है चाहे उसे करने वाला पत्थर का पुजारी हो या किसी क़ब्र का मजावर या किसी मुर्दा बुजुर्ग से मदद हासिल करने वाला। क्योंकि ये सब ग़ैरुल्लाह में अल्लाह के गुणें को मानते हैं। हिन्दू का अक़ीदा भी यही है कि वह जिस पत्थर

Www.IslamicBooks.Website

(मूर्ति) की पूजा कर रहा है वह अलौकिक तरीक़ों से उसकी हाजत पूरी करने पर समर्थ है। क़ब्र का मजावर भी क़ब्र में दफ़न जाली या वास्तविक बुज़ुर्ग के बारे में यह अक़ीदा रखता है और हज़ारों मील की दूरी के बावजूद शैख अब्दुल क़ादिर जीलानी को अल्लाह के गुणों वाला समझकर उन्हें मदद के लिए पुकारते हैं और उन्हें अलौकिक तरीक़े पर फ़रियाद सुनने वाला समझना, हाजत पूरी करने वाला समझना और लाभ व हानि का मालिक समझना, यही शिर्क है क्योंकि दूर और निकट से हरेक की मदद करना केवल अल्लाह ही का काम है। ये गुण अल्लाह के सिवा किसी और में यदि मान लिए जाएंगे तो वह शिर्क होगा।

प्रौफ़ेसर साहब ने अपने बरेलवी आलिम की हिमायत में मौलाना महमूदुल हसन देवबन्दी की इबारत नक़्ल करके दावा किया है कि दोनों का मतलब एक ही है और दोनों इबारतों से ग़रुल्लाह से मदद मांगने का जवाज़ साबित हो रहा है लेकिन हम कहेंगे कि देवबन्दी और बरेलवी दोनों अपने आपको हनफ़ी अर्थात इमाम अबु हनीफ़ा रह0 का अनुयायी कहते हैं मगर हनफ़ियत की इन दो शाख़ों ने कुछ ऐसे अक़ीदे गढ़ लिए हैं जो कुरआन व हदीस के तो ख़िलाफ़ हैं ही फ़िक़्ह हनफ़िय्या से भी इनका सबूत उपलब्ध नहीं किया जा सकता। जैसे.....

○ देवबन्दी हनफ़ियों की अधिसंख्या मरने के बाद मुर्दा सुनता है इसको मानती है अर्थात उनके निकट किसी क़ब्र पर खड़े होकर यदि क़ब्र में दफ़न व्यक्ति से दुआ की प्रार्थना की जाए तो वह सुनता है और क़ब्र पर खड़े होकर दुआ की प्रार्थना करना उनके निकट जायज़ है।

○ देवबन्दी हनफ़ी क़ब्रों से फ़ैज़ हासिल करने को मानते हैं

Www.IslamicBooks.Website

अर्थात यदि कोई कुछ शर्तों के साथ किसी क़ब्र पर मुराक़बा करे तो क़ब्र में दफ़न मुर्दा से उसे फ़ैज़ हासिल होता है।

○ अम्बिया अलै० अपनी क़ब्रों में इसी तरह ज़िन्दा हैं जिस तरह दुनिया में ज़िन्दा थे बल्कि उनकी बरज़ख़ी ज़िन्दगी सांसारिक ज़िन्दगी से भी अधिक वास्तविक है।

बरेलवी हनफ़ीयों ने इन्हीं अक़ीदों को और अधिक व्यापक करके यह दृष्टिकोण अपनाया है कि क़ब्र में दफ़न बुज़ुर्ग दूर व निकट हर जगह से फ़रियादें सुनने और फिर हाजत पूरी करने और मुश्किल हल करने पर समर्थ हैं। नबी और औलिया हाज़िर व नाज़िर हैं ग़ैब का ज्ञान रखते हैं और हर काम करने की ताक़त रखते हैं।

लेकिन हक़ीक़त यह है कि देवबन्दियों के अक़ीदे भी कुरआन व हदीस के ख़िलाफ़ और शिर्क से ओत प्रोत हैं जबकि बरेलवियों के अक़ीदे तो खुले शिर्क पर आधारित हैं इसलिए कुरआन व हदीस की रू से दोनों ही क़िस्म के अक़ीदे ग़लत हैं। यही कारण है कि मौलाना महमूद हसन देवबन्दी का वह हाशिया भी जिससे बरेलवी विवेचन करते हैं हमारे निकट सही नहीं है इससे गुमराह लोगों को अपने असत्य कामों को करने का हौसला मिला है। अल्लाह मुसलमानों को इस गुमराही और शिर्क व बिदअत से बचाए और उन्हें तौहीद व सुन्नत के सीधे रास्ते को समझने और उसपर चलने का सौभाग्य प्रदान करे।

(तन्ज़ीम अहले हदीस लाहौर 8–15 मई 1987)

अधिकांश कलिमा पढ़ने वाले शिर्क कर रहे हैं

हज़रत इबराहीम अलै० ने मुश्रिकीन का हर तरह से बहिष्कार किया। दिल, ज़बान और अपने सारे कामों से मुश्रिकीन की काट

Www.IslamicBooks.Website

की, मुश्रिकीन जो ग़रुल्लाह की र ासना में डूबे हुए थे उनको सख़्ती से रोका और उनके बुतों को तोड़ने से भी न चूके। अल्लाह के रास्ते में जो मुश्किलें पेश आयीं उनपर सब्र किया। इस तरीक़े को तौहीद की हक़ीक़त और दीन की बुनियाद कहते हैं जैसा कि फ़रमाया.....

" जब उसके रब ने कहा– मुस्लिम हो जा तो उसने तुरन्त कहा कि कायनात के रब का मुस्लिम हो गया।" (बक़रा– 131)

आज कल अधिकांश कलिमा ला इला ह इल्लल्लाह पढ़ने वाले, इस्लाम का दावा करने वाले अल्लाह की उपासना में शिर्क कर रहे हैं दूसरे मायना में ये ऐसे लोगों को पुकारते हैं जो न लाभ पहुंचा सकते हैं न हानि। इसपर सितम यह कि वह भी मुर्दों को या जो इनसे कोसों दूर हैं या शैतान और जिन्नात को। उनसे दोस्ती और प्रेम की पेंगे बढ़ाते हैं उनसे डरते हैं उनसे उम्मीदे बांधे हुए हैं।

जो एकेशवरवादी व्यक्ति अल्लाह की उपासना की ओर दावत दे और ग़ैरुल्लाह की उपासना से रोके और यह कहे कि यह सरासर बिदअत और गुमराही है और जो व्यक्ति ऐसे शिर्क के कामों से नफ़रत करे और ऐसे लोगों से भी दुश्मनी रखे उसके विरोध पर ये लोग उठ खड़े हो जाते हैं।

कुछ मुश्रिक तो तौहीद को इल्म समझने के लिए भी तैयार नहीं होते और अपनी अज्ञानता, मूर्खता और स्वार्थ के कारण तौहीद पर सोच विचार करने को भी तैयार नहीं।

(हिदायतुल मुस्तफ़ीद 1– 257)

Www.IslamicBooks.Website

(5)

"रज़ाए मुस्तफ़ा" के सवालों के जवाब

18 मई 1973 ई0 के " अल एतिसाम" में हमने बरेलवी फ़िरक़ा के तर्जुमान मासिक " रज़ाए मुस्तफ़ा" से एक नज़्म नक़्ल की थी जो यूं तो हज़रत शैख अब्दुल क़ादिर जीलानी की मुनक़बत थी लेकिन असल में वह शिर्किया अक़ीदें और गुलू का एक नमूना थी। इसमें सैयदना शैख अब्दुल क़ादिर जीलानी रह0 को खुदाई गुणों वाला ठहराया गया था। हमने अपने पृष्ठों पर यह नज़्म इसी लिए नक़्ल की थी कि हम बरेलवियों के मुश्रिकाना अक़ीदों को जो स्पष्टी करण करते रहते हैं कि उन लोगों ने बुजुर्गों की शान और मुन्क़बत के नाम पर शिर्क और बिदअत का बाज़ार गर्म कर रखा है। यह नज़्म इस अक़ीदे का एक स्पष्ट नमूना और हमारी कही बातों का एक सबूत थी। हमने इस नज़्म पर शीर्षक लगाया था " गुलू की इन्तिहा" अर्थात किसी को खुदा के दर्जे तक बढ़ा देने का प्रयास, और शुरू में यह नोट लिखा था।

बरेलवी सम्प्रदाय मुर्दा परस्ती और क़ब्र परस्ती में शिर्क की जिस चरम सीमा को पहुंच चुका है उसकी एक झलक इस नज़्म में देखी जा सकती है जो मई के " रज़ाए मुस्तफ़ा" में छपी है। अल्लाह तआला इस गुलू और शिर्क से हम सब मुसलमानों को बचाए (और यह भी लिखा था)कि ऐसी सब कहानियां बे सबूत हैं।

इस नोट पर " रज़ाए मुस्तफ़ा" बड़ा क्रोधित हुआ और उसके सम्पादक ने " अल एतिसाम" से ग्यारह सवाल किए हैं। यह समझ कर कि शायद ग्यारह के अदद से ग्यारहवीं शरीफ़" का सबूत

Www.IslamicBooks.Website

उपलब्ध किया जा सके।

सबसे पहले तो उसने " अल एतिसाम" में इस नज़्म के छपने ही को हज़रत पीर जीलानी रह० की करामत ज़ाहिर की है कि जमाअत अहले हदीस इन शिर्किया बातों के सुनने को तैयार नहीं लेकिन उनके अख़बार में यह नज़्म प्रकाशित होकर अहले हदीस के घर घर पहुंच गयी मगर हमारी समझ में नहीं आया कि इसमें करामात का कौन सा पहलू है। कुरआन ने मुश्रिकों के अक़ीदे नक़ल किए हैं तो क्या यह उन काफ़िरों और मुश्रिकों और उनके असत्य खुदाओं की करामत समझी जाएगी कि उनके अक़ीदे कुरआन जैसी सर्वकालिक पुस्तक में सुरक्षित हो गए और मुसलमानों के घर घर पहुंच गए।

बात करते समय कुछ तो बुद्धि एवं सूझ बूझ से काम लेना चाहिए लेकिन ये बेचारे भी क्या करें इनको हलका ही ऐसा मिला है कि ये लोग कितनी भी उल्टी सीधी बातें अपने वाअज़ शरीफ़ में बयान कर दें सुबहानल्लाह, माशाअल्लाह की आवाज़ें ही सुनी जाती रहेंगी। इसलिए इनकी यह आदत पक्की हो गयी है कि जो मुंह में आए कहते चलें जाओ चाहे कुरआन व हदीस से इनका कोई ताल्लुक़ न हो। अक़्ल व सूझ बूझ से इन्हें कोई वास्ता न हो और विचार एवं चिंतन की बारगाह में इनका कोई महत्व न हो वर्ना " अल एतिसाम" में उनके मुश्रिकाना अकीदों पर आधारित नज़्म के छपने को " करामत" से भला क्या संबंध? इस तरह तो सम्पादक महोदय को हमारी यह करामत भी माननी चाहिए कि हमारा दर्से तौहीद भी रज़ाए मुस्तफ़ा में प्रकाशित होकर बरेलवियों के घरों में पहुंच गया है।

लीजिए अब " रज़ाए मुस्तफ़ा" के सवालों का जवाब क्रमवार

Www.IslamicBooks.Website

सुनिए जो उसने जून के अंक मे प्रकाशित किए और जिनका उचित एंव सतर्क जवाब " एतिसाम" से मांगा है।

पहला सवाल

गुलू की इन्तिहा से क्या तात्पर्य है? किस हद तक गुलू निन्दनीय है गुलू का इतलाक़ कहां होता है और शरअी रूप से गुलू और गुलू की इन्तिहा का क्या हुक्म है?

जवाब

यदि सम्पादक महोदय कुरआन में थोड़ा बहुत भी सोच विचार कर लेते तो उन पर गुलू का मतलब भी स्पष्ट हो जाता और इसके इतलाक़ और शरअी हुक्म का भी पता लग जाता।

" गुलू" का शब्द स्वयं कुरआन मजीद में मौजूद है और उसने इसे जिस संदर्भ में प्रस्तुत किया है उसमें वे तमाम पहलू स्पष्ट हो जाते हैं जिनसे उल्लिख्ति सवालों का ख़मीर उठाया गया है इसलिए हम कुरआन व हदीस की रोशनी में ही गुलू और उसके इतलाक़ व हुक्म का स्पष्टी करण करते हैं।

कुरआन ने दो स्थानों पर किताब वालों को " दीन में गुलू करने से रोका है। एक सूरह निसा में, दूसरे सूरह माइदा में। फ़रमाया..

" ऐ किताब वालों! अपने दीन में अकारण गुलू न करो और अल्लाह पर हक़ के सिवा कोई और बात न डालो। मसीह इब्ने मरयम तो बस अल्लाह के रसूल और उसका एक कलिमा है जिसको उसने मरियम की ओर इलक़ा (भेजा) किया और उसकी ओर से एक रूह हैं अतः अल्लाह और रसूलों पर ईमान लाओ तसलीस (तीन खुदाओं) का दावा न करो (इस अक़ीदे को) छोड़ दो यही तुम्हारे हक़ में अच्छा है इलाह तो बस अकेला अल्लाह ही है वह इससे पाक है कि उसके सन्तान हो।"

Www.IslamicBooks.Website

सूरह माइदा में फ़रमाया.....

" ऐ किताब वालों! अपने दीन में नाहक़ गुलू न करो और उन लोगों की इच्छाओं का अनुसरण न करो जो इससे पहले गुमराह हुए और जिन्होंने बहुत सों को गुमराह किया और सीधे मार्ग से भटक गए।"

इन आयतों में यहां किताब वालों से तात्पर्य ईसाई हैं जिन्होंने दीन में गुलू किया। गुलू का मतलब है किसी चीज़ की पुष्टि व हिमायत और सम्मान व मुहब्बत में हद से बढ़ जाना। जिस चीज़ का जो दर्ज़ा व मर्तबा या जो वज़न व स्थान है उसको बढ़ाकर कहीं से कहीं ले जाना। उलमा और इमामों को उनके दर्जे से बढ़ा कर रसूलों का मक़ाम दे देना और नबियों व रसूलों को खुदा या खुदा का साझी ठहरा देना जिस का सम्मान अपेक्षित हो उनकी उपासना एवं पूजा करना। यह सब दीन में गुलू है जिसका नक़्शा हाली ने मुसद्दस में इस प्रकार खींचा है।

करे ग़ैर गर बुत की पूजा तो काफ़िर
जो ठहराए बेटा खुदा का तो काफ़िर
कहे आग को अपना क़िब्ला तो काफ़िर
कवाकिब में माने करिश्मा तो काफ़िर
मगर मोमिनों पर कुशादा है राहें
परस्तिश करें शौक़ से जिस की चाहें
नबी को जो चाहें खुदा कर दिखाएं
इमामों का रुतबा नबी से बढ़ाएं
मजारों पे दिन रात नज़रें चढ़ाएं
शहीदों से जो जा के मांगे दुआएं

Www.IslamicBooks.Website

न तौहीद में कुछ ख़लल इससे आए
न इस्लाम बिगड़े न ईमान जाए

और कुरआन ने ईसाइयों की इसी कार्य प्रणाली ही को गुलू का नाम दिया है। ईसाइयों ने हज़रत ईसा अलै0 की अक़ीदत और मुहब्बत में इतना गुलू किया कि भले मानस व्यक्ति को इन्सान के दर्जे से उठाकर खुदाई गुणों वाला क़रार दे डाला। रसूल की बजाए उनको खुदा बना डाला और कुछेक ने उनको खुदा का बेटा बना दिया। इसी प्रकार हज़रत मरयम अलै0 की शान में भी उन्होंने हद से बढ़कर काम लिया और खुदा का दर्जा उनको भी दे डाला। इस प्रकार एक ओर वे तौहीद को भी मानते रहे लेकिन दूसरी ओर उन्होंने तीन में का एक अर्थात तीन खुदाओं का अक़ीदा भी गढ़ लिया और तौहीद के साथ इस पर भी उनका आग्रह रहा। जिस प्रकार बरेलवी सम्प्रदाय ने भी अल्लाह के एकत्व के अक़ीदे के बावजूद तीन के बजाए बीसों बुजुर्गों को खुदाई गुणों वाला ठहरा रखा है। कुरआन ने यहां उनको इन मुश्रिकाना अक़ीदों से रोका है और इसे गुलू अर्थात हद से आगे बढ़ जाने का नाम दिया है और इन्हें सही अर्थों में तौहीद पर चलने की नसीहत की है। टीका एवं व्याख्या का यह अवसर नहीं अनुवाद से भी काफ़ी स्पष्टी करण हो जाता है इसलिए विस्तार में जाने से बच रहे हैं।

बहरहाल इस स्पष्टीकरण से गुलू का मतलब और उसके इतलाक़ और हुक्म का पता लग जाता है। अब यह हक़ीक़त किसी बहस की मोहताज नहीं रह जाती कि बरेलवी सम्प्रदाय भी इसी गुलू का शिकार हैं या नहीं? उसके अक़ीदे भी स्पष्ट हैं इस सम्प्रदाय ने नबियों और रसूलों को छोड़िए औलिया अल्लाह और बुजुर्गाने दिन को भी "ख़ुदा" या ख़ुदाई गुणों वाला ठहरा रखा है। नज़्म जिस पर

Www.IslamicBooks.Website

बहस हो रही है उसका हर शेअर भी हमारे इस दावे पर दलील है मुख्य रूप से उसके ये अशआर जिनमें कहा गया है कि " बलाएं टाल देना ग़ौसे आज़म का काम है।, " दोनों जहानों में उनका हमें सहारा है" , सारे इन्सान और जिन्न पर उनका अधिकार है, कुम बिइज़्निल्लाह कह कर मुर्दो को ज़िन्दा कर दिया करते थे।, हमारा ज़ाहिर व बातिन उनके आगे आइना है और आलम में किसी वस्तु से उनका पर्दा नहीं।"

ये सारे खुदाई गुण हैं जो हज़रत शैख़ अब्दुल कादिर जीलानी में साबित किए गए हैं जो गुलू की चरम सीमा है और गुलू की यह चरम सीमा शिर्क कहलाती है और देखिए कि यह सम्प्रदाय किस तरह खुले तौर पर शिर्किया अक़ीदों का शिकार है।

वही जो मसतवी ए अर्श था खुदा होकर
उतर पड़ा है मदीने में मुसतफ़ा होकर
शरीअत का डर है नहीं साफ़ कह दें
हबीबे खुदा खुद खुदा बन के आया
हमारा नबी तो बशार ही नहीं
खुदा है तुझे क्या ख़बर ही नहीं
मक़ाम उस नबी का तो अर्शे बरी है
खुदा न कहे जो वह काफ़िर लअीं है
क्या फ़र्क़ है अज़ीज़ व हज़रत में और खुदा में
वह भी इलाह है यारों यह भी इलाह है यारो

क्या यह वही गुलू नहीं जिसमें ईसाई हज़रत ईसा अलै0 की मुहब्बत और सम्मान के नाम पर शिकार हुए और जिससे बचने की हुज़ूर सल्ल0 ने भी ख़ास तौर से हिदायत की थी।

Www.IslamicBooks.Website

बढ़ा चढ़ाकर और हद से आगे बढ़ न जाना (गुलू न करना) जिस तरह ईसाईयों ने हज़रत ईसा इब्ने मरयम के बारे में किया। (याद रखो) मैं केवल अल्लाह का बन्दा हूं और मुझे अल्लाह का बन्दा और उसका (रसूल ही कहना। (बुखारी व मुस्लिम, मिश्कात)

फिर इसी पर बस नहीं बल्कि अपने अपने इलाक़ों के गद्दी नशीनों और मृत बुजुर्गो को भी इस गुमराह सम्प्रदाय ने खुदाई गुणों वाला ठहरा रखा है। पीर अब्दुल क़ादिर जीलानी रज़ि0 के बारे में उनके और अधिक शिर्किया अशआर देखिए।

अव्वल मुहियुद्दीन आख़िर मुहियुद्दीन
जाहिर मुहियुद्दीन बातिन मुहियुद्दीन

ध्यान रहे कि मुहियुद्दीन हज़रत पीरजीलानी की उपाधि है और इस शेअर में उन्हें इस आयत की तरह ठहराया गया है– हुवल अव्वल हुवल आख़िर वज्ज़ाहिर वल बातिन। यद्यपि ये गुण कुरआन ने केवल अल्लाह के लिए बयान किए हैं। और आगे देखिए–

अन्ता शाफ़ी अन्ता काफ़ी फ़ी मुहमातिल उमूर
अन्ता हसबिया अन्ता रब्बी अन्ता ली नेमल वकील
अल मदद या ग़ौसे आज़म अल मदद दस्तगीर
तेरी निगाह दरकार है पीराने पीर
उठा फिर दर्द सीने में मगर उसकी दवा तुम हो
न होता डर क़ियामत का तो कह देता खुदा तुम हो
इमदाद कुन इमदाद कुन अज़ बंदे ग़म आज़ाद कुन
दर दीं व दुनिया शाद कुन या शैख़ अब्दुल क़ादिर

ख्वाजा गुलाम फ़रीद सज्जादा नशीन चाचड़ शरीफ़ मिठन कोट के बारे में कछ आशआर देखिए–

Www.IslamicBooks.Website

जो यसरिब से चाचड़ नशीं बन के आया
चाचड़ वांग मदीना दिस्से कोट मिठन बैतुल्लाह
ज़ाहिर दे विच फ़रीदन बातिन दे विच अल्लाह
जो मुश्ताक़ नज़ारा हो मेरे ख्वाजा को आ देखे
अयां शाने खुदाई है फ़क़्त पर्दा है इन्सां का

कहां तक ये अशआर नक़ल किए जाएं। इनका तो हर मदफून बुजुर्ग " खुदा ए क़हहार व ग़ालिब और कायनात में सब कार्य करने वाला" बना हुआ है और इनमें से हरेक की शान में खुदाई गुणों को इस उदारता से माना गया है कि ईसाइयों का गुलू इसके मुक़ाबले में कोई मिसाल ही नहीं रखता।

दूसरा सवाल–"शिर्क" की सही परिभाषा क्या है और शिर्क की इन्तिहा से क्या तात्पर्य है?

जवाब– शिर्क की साफ़ और आसान सी परिभाषा यह है कि अल्लाह के सिवा कुछ और लोगों को भी ग़ैर खुदाई तरीक़े से हाजत पूरी करने वाला और मुश्किलें हल करने वाला समझा जाए। उन्हें ग़ायबाना रूप से पुकारा जाए। उनसे मदद व सहायता मांगी जाए और उनमें खुदाई गुणों का इक़रार किया जाए जैसे ग़ैब का इल्म, हाज़िर नाज़िर, सारे मामलों में दखल देना आदि।

और शिर्क की इन्तिहा से तात्पर्य शिर्क की यह कार्य प्रणाली है कि पहले उन्होंने नबियों को खुदाई गुणों वाला क़रार दिया फिर इससे नीचे उतर कर यही खुदाई गुण औलिया अल्लाह और बुजुर्गाने दीन में भी साबित किए फिर और पतन ग्रस्त हुए और हर ऐरे ग़ैरे नत्थू ख़ैरे को खुदाई गुणों का द्योतक क़रार दे डाला जिस प्रकार कुबूरी शरीअत के स्वभाव वाले ऐसी चीज़ों से परिचित हैं

Www.IslamicBooks.Website

और कभी कभी शिर्क की इन्तिहा से तात्पर्य किसी बुजुर्ग की शान में वह बहुत अधिक गुलू का शिकार है कि उसमें और खुदा में बिल्कुल कोई फ़र्क ही न रहे जिस तरह इस नज़म में और दूसरे उल्लिखित अशआर में सैयद अब्दुल क़ादिर जीलानी को ईश्वरत्व के स्थान पर बैठा दिया गया है।

तीसरा सवाल–मौत परस्ती और क़ब्र परस्ती का क्या मतलब है परस्तिश का क्या मतलब है और कौन कौन सी चीज़ परस्तिश कहलाती है " ग़ौसे आज़म रज़ि0" को बरज़खी जीवन हासिल है या नहीं? यदि है तो किस हद तक?

जवाब–मौत परस्ती का मतलब यही है कि जो औलिया अल्लाह मर चुके हैं उन्हें हाज़िर नाज़िर, ग़ैब का जानने वाला और हानि व लाभ का मालिक समझ कर मदद के लिए पुकारा जाए। बुजुर्गाने दीन की क़ब्रों पर जाकर उनसे मांगना और मदद चाहना क़ब्र परस्ती है और ग़ैरुल्लाह को खुदाई गुणों व अधिकारों का मालिक समझकर उनसे मदद हासिल करना परस्तिश (उपासना) कहलाती है चाहे वह ग़रुल्लाह पत्थर की मूर्ति हो किसी बुजुर्ग की क़ब्र हो या कोई और सूरत हो। जिस चीज़ में भी किसी तरीक़े से खुदाई गुणों को माना जाए और उससे मदद चाही जाए वह परस्तिश ही होगी।

बरज़ख़ी जीवन अम्बिया अलै0 और शहीदों और नेक लोगों सब ही को हासिल है और इससे किस को इन्कार है मगर सवाल यह है कि इस बरज़खी जीवन की स्थिति क्या है? जिस पर क़ुरआनी आयत ला तशउरून गवाह है। बात तो सत्य यह है कि किसी को इसकी हक़ीक़त मालूम नहीं जब इसकी सही स्थिति का ही किसी को पता नहीं तो इसकी हद? क्या मायना?

Www.IslamicBooks.Website

फिर सैयदना अब्दुल क़ादिर जीलानी रह0 की इसमें कोई विशेषता नहीं, न इस बरज़ख़ी जीवन का यह मतलब है कि वे हमारी फ़रियादें सुनते हैं और उनको अल्लाह के जैसे अधिकार मिले हुए हैं और वे ज़मीन के पेट में बैठे हुए कायनात के कामों को चला रहे हैं। यदि ऐसा होता तो सहाबा किराम रज़ि0 अवश्य रसूलुल्लाह से आपकी वफ़ात के बाद मदद मांगते, आपसे फ़रियादें करते और वे भी आपकी तरह या शैख़ अब्दुल क़ादिर जीलानी शैअन लिल्लाह की तरह " या मुहम्मद शैअन लिल्लाह" का वज़ीफ़ा करते क्योंकि नबी करीम सल्ल0 से ज़्यादा बरज़ख़ी जीवन किसे हासिल हो सकता है।

चौथा सवाल–" ग़ौसे आज़म रज़ि0" की बहस की जाने वाली मुन्क़बत में क्या सारी बातें शिर्क व परस्तिश वाली हैं या कुछ बातें? दोनों सूरतों में शिर्क व परस्तिश की बातों की निशान देही करें और इसका कारण बताएं?

जवाब– स्वयं शब्द ग़ौसे आज़म भी इसी किस्म में आता है। हम इस नज़्म के शिर्किया शब्द पहले ही नक़ल कर चुके हैं अब उनकी फिर से निशान देही की ज़रूरत नहीं।

उनके शिर्क और परस्तिश होने का कारण साफ़ है कि औलिया अल्लाह को तो छोड़िए नबी भी इस प्रकार के अलौकिक कार्यों की ताक़त नहीं रखते इसलिए उनको हाजतरवा और मुश्किल कुशा समझ कर पुकारना शिर्क ही कहलाएगा।

पांचवा सवाल–" अल एतिसाम" ने जिन करामतों को "ऐसी सब कहानियां बे सबूत हैं" कह कर इन्कार किया है क्या बहस की जाने वाली मुन्क़बत में उल्लिखित सब करामतें बे सबूत कहानियां हैं या उनमें से कुछ साबित भी हैं? यदि कुछ साबित हैं तो कौन

Www.IslamicBooks.Website

कौन सी करामतें साबित हैं?

जवाब–इस नज़्म में शैख़ अब्दुल क़ादिर जीलानी की असल में कोई करामत उल्लिखित नहीं है बल्कि ये सब मन गढत क़िस्से हैं जिन्हें करामतों का शीर्षक दे दिया गया है या ग़ौसे आज़म का वज़ीफ़ा पढ़ते ही ताजिरों का जहाज़ तुरन्त तूफ़ान से निकल आया"। 2– एक समय में सत्तर मुरीदों के यहां गए। 3– ग़ौसे आज़म का इशारा पाते ही तुरन्त रहमत के बादलों ने महफ़िल वालों पर बरसाना बन्द कर दिया। 4– रसूलुल्लाह सल्ल0 ने उन्हें ख़िलअत पहनाई। ये करामाती क़िस्से जो नज़्म में बयान किए गए हैं सब ख़राफ़ाती क़िस्से हैं जिनका न कोई सर पैर है न कोई असल सबूत। इसी तरह के और भी क़िस्से यार लोगों ने गढ़ रखे हैं इसी तरह के हैं जिन पर क़ुबूरी शरीअत के वही मुजावर व परिसतार सर धुनते हैं जिनके विचार एवं सोच में इतनी टेढ़ आ चुकी है कि शिर्क व तौहीद और बिदअत व सुन्नत में उनके बीच कोई फ़र्क़ नहीं रहा। जिनके निकट सारी बिदअतें ठीक ठीक दीन हैं और सारे मुश्रिकाना कार्य व अक़ीदे रखने के बावजूद जो अपने को तौहीद परस्त होने के दावेदार हैं

छटा सवाल– यदि ये सारी करामतें बे सबूत कहानियां है तो इनके नक़ल व बयान करने वालों का क्या हुक्म हैं?

जवाब– जो झूठ, शिर्क और बिदअत फ़ैलाने वालों का हुक्म है। क्योंकि ये कहानियां झूठी होने के अलावा जाहिल लोगों में शिर्क और बिदअत को बढ़ावा देती हैं।

सातवां सवाल– क्या ग़ौसुल आज़म रज़ि0 अधिक करामतों वाले हैं या नहीं? यदि हैं तो आपकी कितनी करामतें प्रमाणित और मुसतनद हैं? और कौन कौन सी बे सबूत और गढ़ी हुई?

Www.IslamicBooks.Website

जवाब– ये सारी बातें बचकाना हैं पहले तो करामत ऐसी अनिवार्य और आवश्यक चीज़ नहीं कि जिसके बिना वलायत अधूरी रहती हो या जिससे करामत का होना अधिक हो वह वली है। करामत और वली में सूरज और रोशनी का सा ताल्लुक़ नहीं है कि सूरज निकलेगा तो रोशनी होगी और रोशनी न होने का मतलब सूरज का न होना होगा। इसी प्रकार यह समझना कि जो वली होगा उससे करामत अवश्य होगी और जिससे करामत ज़ाहिर हो वह अवश्य वली होगा, ग़लत है। वलायत के लिए करामत नहीं शरीअत का अनुसरण आवश्यक है और करामत वली होने की दलील नहीं। किसी व्यक्ति का केवल सदकर्म व सदाचारी ही वलायत की दलील है। सारे सहाबा रज़ि0 अल्लाह के वली थे बल्कि हज़ारों लाखों शैख़ अब्दुल क़ादिर जीलानी जैसे उच्च कोटि बुजुर्ग और वली भी एक साधारण सहाबी के वलायत के मक़ाम को नहीं पहुंच सकते यद्यपि इन सहाबा किराम रजि0 के बारे में हमें ये करामती क़िस्से कहानियों नहीं मिलतीं।

इसलिए यह सवाल कि " शैख अब्दुल क़ादिर जीलानी अधिक करामतों वाले हैं या नहीं" अपने अन्दर कोई महत्व नहीं रखता। यदि सवाल किया जाता कि " जलीलुल क़द्र बुजुर्ग और वली कामिल थे या नहीं" तो हमारा जवाब हां में होता वैसे हम उनकी ओर मन्सूब करामती क़िस्से अधिकांश मन गढ़त समझते हैं लेकिन इसके बावजूद हमारे निकट खुदा रसीदा बुजुर्ग और वली कामिल थे क्योंकि करामतों के होने को हम वलायत के लिए ज़रूरी नहीं समझते अलबत्ता वलायत के लिए शरीअत का अनुसरण ज़रूरी है इसके बिना कोई व्यक्ति वली नहीं हो सकता।

जब वलायत के लिए " करामत" आवश्यक ही नहीं तो इस

Www.IslamicBooks.Website

बहस में पड़ना कि उनकी कौन सी करामत साबित है और कौन कौन सी गढ़ी हुई? बेकार ही है। वैसे एक मोटा सा उसूल बयान किए देते हैं कि उनके जीवन में यदि कोई करामत ज़ाहिर हुई है और उसका सही सबूत मौजूद है और अक़ल व सूझ बूझ के तक़ाज़ों और शरीअत के उसूलों से भी टकराव नहीं है तो उस करामत को माना जा सकता है लेकिन उनकी वफ़ात के बाद से संबंधित तमाम करामतें गढ़ी हुई और बे सबूत हैं क्योंकि मरने के बाद उनका इस दुनिया से हर प्रकार का संबंध ही कट गया। इसलिए मरने के बाद उनके तसर्रुफ़ात का अकीदा रखकर उन्हें "करामत" जताना इस्लामी शरीअत की रू से पूरी तरह ग़लत है बल्कि ऐसी करामतों पर विश्वास रखना शिर्क है।

आठवां सवाल–बे सबूत कहानियों और बा सबूत करामतों को जानने के लिए कौन कौन सी मुसतनद किताबें और कौन कौन से उसूल व क़ायदा मुक़र्रर हैं ?

जवाब–वह उसूल और क़ायदा वही है जिसका हम ने अभी ज़िक्र किया है। एक तो वह करामत जीवन में जाहिर हुई हो, दूसरे उसका सही सबूत हो लेकिन यह मालूम करने के लिए मुसतनद किताब ज़रूरी है।

नवां सवाल– बहजतुल आसार, कलाइदुल जवाहर, अख़बारुल अख़यार, नुज़हजतुल खातिर जैसी प्रसिद्ध किताबें और इनके लेखक विश्वसनीय हैं या नहीं?

जवाब–ये किताबें उचित व अनुचित का संग्रह हैं और इनके लेखक भी अच्छे बुरे का फ़र्क़ न करने वाले जैसे हैं इसलिए न ये किताबें विश्वसनीय हैं न इनके लेखक। इनमें मौजूद घटनाएं व रिवायतें केवल उसी उसूल के अनुसार स्वीकार योग्य होंगी

Www.IslamicBooks.Website

जिसका हमने उल्लेख किया है।

दसवां सवाल– क्या बरेलवी अहले सुन्नत अहले क़िब्ला मुसलमान हैं या आपके कथनानुसार ग़ुलू की इन्तिहा क़ब्र परस्ती और शिर्क के कारण इस्लाम के दाएरे से वास्तव में बाहर हो गए हैं?

जवाब– इस बहस को बेज़रूरत समझते हुए कि आप अहले सुन्नत के मिसदाक़ भी हैं या नहीं? हम फिलहाल आपके सवाल तक ही जवाब को सीमित रखते हैं। हां तो सुनिए मोहतरम, आप लोगों के जो अक़ीदे हैं उसकी रू से आप क्या हैं? इसका जवाब हम अपनी ओर से देने की बजाए स्वयं आपके हनफ़ी फ़ुक़्हा की व्यख्याओं से देते हैं हवाले ग़लत हों तो अवश्य हमारी पकड़ कीजिए वर्ना शोर शराबा करने और छोटा बड़ा बनाकर यह कह देने से कोई फ़ायदा नहीं कि अहले हदीसों ने हमें यह बना दिया है और वह बना दिया है खुदा गवाह है हमें आपको इस्लाम के दाएरे से बाहर निकालने से कदापि दिल चस्पी नहीं लेकिन मुश्किल तो यह है कि जिस हनफ़ी फ़िक़्ह पर आप ईमान रखते हैं उसके अकाबिर आप जैसा अक़ीदा रखने वालों पर कुफ़्र का फ़तवा लगा रहे हैं। देख लीजिए–

1– मुल्ला अली क़ारी हनफ़ी इमाम अबु हनीफ़ा की संग्रहित किताब फ़िक़्ह अकबर की शरह में लिखते हैं–

" हनफ़ी फ़ुक़्हा ने खोलकर कहा है कि जो व्यक्ति यह अक़ीदा रखे कि नबी सल्ल0 ग़ैब का ज्ञान रखते थे वह काफ़िर है क्योंकि यह अक़ीदा अल्लाह के इस कथन के विरुद्ध है कि अल्लाह के सिवा आसमान और ज़मीन में कोई भी ग़ैब का ज्ञान नहीं रखता।

(शरह अकबर पृ0 185)

अब आप स्वयं सोच लीजिए कि आपने तो नबी सल्ल0 को नहीं

Www.IslamicBooks.Website

हर छोटे बड़े वली बल्कि नंग धड़ंग मलंगों को भी ग़ैब के ज्ञान का ज्ञाता समझ रखा है।

फ़िक़्ह हनफ़ी की प्रसिद्ध किताब " फ़तावा क़ाज़ी खां" की व्याख्या भी सुन लीजिए–

" जिस व्यक्ति ने बिना गवाहों के निकाह किया और मर्द औरत ने कहा कि हम अल्लाह और रसूल को गवाह बनाते हैं। हनफ़ी फ़ुक़्हा कहते हैं ऐसा कहना कुफ़्र है क्योंकि उसने यह अक़ीदा रखा कि नबी सल्ल0 (अल्लाह की भान्ति) आलिमुल ग़ैब हैं यद्यपि नबी सल्ल0 अपने जीवन में ग़ैब न जानते थे तो मौत के बाद कैसे जानते होंगे। (मुस्लिम)

इसी प्रकार की व्याख्याएं बहरुर्राइक़ शरह कन्जुद दक़ाइक़ आदि में भी है'

2– एक अक़ीदा आप लोगों का यह भी है कि ग़ैरूल्लाह के नाम की नज़्रें देना आप मानते हैं उनके नाम की नियाज़ें देते हैं उनकी क़ब्रों पर चढ़ावे चढ़ाते हैं और उनके नाम के जानवर ज़ब्ह करते हैं यद्यपि हनफ़ी फ़िक़्ह ने इस कार्य को भी नाजायज़ बल्कि कुफ़्र कहा है। अतएव रद्दुल मोहतार शरह दुर्रे मुख्तार भाग 2 पृ0 131 में है।

" नज़्र मख्लूक़ के लिए मानना जायज़ नहीं इसलिए कि यह (नज़्र) उपासना है और उपासना मख़लूक के लिए जायज़ नहीं।"

आगे नज़्र लिल मख्लूक़ की हुर्मत की दलीलें देते हुए अल्लामा शामी लिखते हैं।

" अल्लाह के सिवा औरों के लिए नज़्र व नियाज़ के हराम और असत्य होने की एक वजह यह भी है कि जिसके लिए नज़्र मानी गयी है यदि उसे कायनात में सब कुछ करने के योग्य समझ कर

Www.IslamicBooks.Website

ऐसा किया गया है तो यह अक़ीदा कुफ़्र है।"

अब आप स्वयं सोच लें कि आप लोग जो बुज़ुर्गों के नाम की नज़्रें व नियाज़ें देते हैं, ग्यारहवीं शरीफ़ करते हैं और उनके नाम के जानवर ज़ब्ह करते हैं तो यह सब कुछ उन्हें अपने मामलों में सब कुछ करने वाला समझकर करते हैं या नहीं? निश्चय ही आप अक़ीदे के तौर पर उन्हें कायनात में तसर्रुफ़ करने वाले समझ कर ही ऐसा करते हैं यद्यपि स्वयं फ़िक़्ह हनफ़ी इस अक़ीदे को कुफ़्र का नाम दे रहा है। इसी सिलसिले में एक और हवाला अपनी फ़िक़्ह का देख लें।

" जो जाहिल लोग मशाइख़ और शहीदों की क़ब्रों पर (चढ़ावे के) जानवर ज़ब्ह करते हैं वह जानवर हराम हो जाता है यद्यपि अल्लाह का नाम लेकर ही ज़ब्ह किया जाए। और ऐसा करने वालों को काफ़िर कहा गया है।

(फ़तावा ग़राइब फ़ी तहक़ीकुल मज़ाहिब)

3– बुज़ुर्गों की क़ब्रों के साथ बरेलवी सम्प्रदाय वह सब कुछ करता है जिससे शरीअत ने बड़ी सख़्ती से रोका है यहां तक कि उनकी क़ब्रों पर सज्दे तक किए जाते हैं यद्यपि हनफ़ी फ़िक़्ह ने इसे भी कुफ़्र का नाम दिया है अतएव हनफ़ी मज़हब की मोतबर किताब किफ़ाया में है।

" हमारी शरीअते इस्लामिया में यह कभी जायज़ नहीं है कि कोई किसी को (खुदा के सिवा) किसी तरह का भी सज्दा करे और जो ऐसा करे वह काफ़िर है।"

सम्पादक महोदय " रज़ाए मुस्तफ़ा" साहब हम आप पर कोई फ़तवा नहीं लगाते अलबत्ता हमने यह अवश्य किया है कि आपका आइना अर्थात हनफ़ी फ़ुक़हा के इर्शादात आपके सामने रख दिए हैं

Www.IslamicBooks.Website

ताकि इसमें अपना चेहरा देख कर अपने बारे में स्वयं ही फ़ैसला कर लें। देखिए! गुस्से में आकर इस आइने को न फेंकिएगा। यह वहाबी का फ़तवा नहीं बल्कि जिस फ़िकह पर आप के फ़तवा का दारोमदार है उसकी व्याख्याएं हैं।

सम्पादक रज़ाए मुस्तफ़ा की परेशानी

सवालों के अन्त में सम्पादक बड़े गर्व से लिखता है– " अल एतिसाम वालों ! यदि सच्चे हो तो इन ग्यारह सवालों का तर्क संगत और उचित जवाब जल्द प्रकाशित करो। देखना कहीं ग्यारहवीं शरीफ़ के अदद ही से परेशान न हो जाना।"

हमने अल्लाह का शुक्र है " रज़ाए मुस्तफ़ा" की इच्छानुसार क्रमशः हर सवाल का सतर्क जवाब दे दिया है लेकिन " रज़ाए मुस्तफ़ा के सम्पादक की इस परेशानी पर हमें बड़ी दया आ रही है कि अल एतिसाम की कल्पना ही से ऐसे होश उड़ गए हैं कि सवाल तो जनाब ने दस किए हैं और बेचारे डरा रहे हैं हमें ग्यारह के अदद से। मोहतरम ग्यारहवें के अदद से हम होश खो देने वाले नहीं। होश व हवास तो आप स्वयं खो रहे हैं कि लिखे दस सवाल हैं और कह रहें हैं कि हमने ग्यारह सवाल किए हैं जरा अपने सवाल दोबारा देख लें कि वे दस हैं या ग्यारह।

मोहतरम सम्पादक महोदय! हमारे एक अल्लाह के तसर्रुफ़ात भी देखिए कि चले तो आप थे ग्यारह सवाल करके ग्यारहवीं शरीफ़ साबित करने लेकिन वह बीच ही में रह गयी और देखिए सवाल न0 4 के बाद सवाल न0 5 ग़ायब है मतलब आपके " पंजतन पाक" भी गए। अब तो मान लीजिए कि एक अल्लाह के सिवा कोई हाजत रवा, मुश्किल कुशा और सारे कामों में तसर्रुफ़ करने वाला नहीं।

(साप्ताहिक अल एतिसाम जुलाई अगस्त 1973 ई0)

Www.IslamicBooks.Website

(6)

क्या यह हनफ़ी फ़िक़्ह से साबित है?

सितम्बर 1987 ई0 का मासिक रज़ाए मुस्तफ़ा हमारे सामने है, इस बार उसके सम्पादकीय में प्रौ0 ताहिरुल क़ादरी के बारे में विचार व्यक्त किया गया है जिस में सम्पादक रज़ाए मुस्तफ़ा ने प्रौ0 साहब के कुछ दृष्टिकोण और कर्मों के बारे में लिखा है कि वे इमाम आजम के मज़हब व फ़िक़्ह हनफ़ी के खिलाफ़ हैं। इसके कुछ उदाहरण यहां दिए जा रहे हैं।

○ प्रौ0 साहब के जुमा के खुत्बे के इशतहार में जुमें का वही समय है जो अहले हदीस के जुमे के खुत्बे का है।

○ इश्तिहार के साइज़ व अन्दाज़ और समय में एक मिनट, से किंड और रत्ती माशा का अन्तर नहीं। ठीक साढ़े बारह बजे के समय पर विचार करें कि प्रौ0 ताहिरुल क़ारदी का समय ग़ैर मुकल्लिदीन के साथ कितना ठीक अनुकूल व अनुसार है जबकि सुन्नी हनफ़ी मस्जिदों में ज़ोहर की नमाज़ और जुमे के खुतबे का समय ग़ैर मुक़ल्लिदीन के समय से काफ़ी भिन्न होता है। उनका यह अमल मजहबे इमाम आज़म रज़ि0 और अहनाफ़ अहले सुन्नत व हनफ़ी फ़िक़्ह के ख़िलाफ़ और ग़ैर मुक़ल्लिदीन के अनुकूल और अनुसार है।

○ जैसा कि फ़िक़्ह हनफ़ी का आम सहमति से फ़तवा है कि औरत की आधी दैत है लेकिन प्रौ0 साहब मजहबे इमाम आज़म व फ़िक़्ह हनफ़ी के खिलाफ़ औरत की पूरी दैत के काईल हैं। मज़हब हनफ़ी में औरत की इमामत मकरूह तहरीमी है लेकिन प्रौ0 साहब

Www.IslamicBooks.Website

○ फ़िक़्ह हनफ़ी में फ़ासिक़ (अवज्ञाकारी) की इमामत मकरूह तहरीमी है और उसके पीछे नमाज़ दोबारा दोहराने योग्य है लेकिन प्रौ0 साहब के निकट पूरी तरह फ़ासिक़ को इमामत की इजाज़त है और इसमें कोई हरज नहीं।

○ बल्कि शिआ, वहाबी, देवबन्दी के पीछे भी नमाज़ पसन्दीदा है।

○ मज़हब हनफ़ी में मुक़्तदी के लिए क़िरअत व फ़ातिहा ख़लफुल इमाम मना है लेकिन प्रौ0 साहब के निकट सर्वथा जिसने फ़तिहा न पढ़ी उसकी नमाज़ नाक़िस और ग़ैर सही है।

○ मज़हब हनफ़ी में फोटो खींचना व तस्वीर बनाना सख़्त हराम और गुनाह है लेकिन प्रौ0 की न केवल फ़ोटो बाज़ी आम है बल्कि वीडियो फ़िल्मों की भी भरमार है।

(रज़ाए मुस्तफ़ा 3 सितम्बर 1987)

ये उदाहरण देने के बाद सम्पादक महोदय लिखते हैं।–

यही प्रौ0 साहब की दो मुंही नीति और धर्म हनफ़ी व मसलक अहले सुन्नत के विरुद्ध निरंतर मन मानी है जो हनफ़ी फ़ुक़हा और उलमा अहले सुन्नत के अपने आप में उनके व्यक्तिगत इज्तिहाद पर आधारित है और इसी पर उलमा अहले सुन्नत वल जमाअत को आपत्ति व दुख है। (पृष्ठ–16)

जहां तक तस्वीर बनाना व फ़ोटो बाज़ी वाली बात है इसके बारे में सम्पादक का यह कहना सही है कि ' सख़्त हराम और गुनाह है'' क्योंकि इस का गुनाह और हराम होना कुरआन से साबित है लेकिन दूसरी बातों का संबंध ऐसे मामलों से है जिसमें एक व्यक्ति को हनफ़ी फ़ुक़्हा की दलीलों और दृष्टिकोणों से मतभेद हो सकता है।

Www.IslamicBooks.Website

साहब की ये बातें कुरआन व हदीस के विरुद्ध हैं फिर तो बात और होती और फिर इस पर कुरआन व हदीस की दलीलें पेश करते लेकिन उन्होंने केवल दो शब्दों में बात की– कि– " यह मज़हब इमाम आज़म व हनफ़ी फिक़्ह के खिलाफ़ है।

इसलिए हम भी ज्यादा विस्तार में जाए बिना "रज़ाए मुस्तफ़ा के सम्पादक से केवल यह सवाल करेंगे कि कुछ सालों से या कुछ सदियों से जो बातें दीन में अपने तौर पर गढ़ ली गयी हैं और जिन पर बरेलवी लोग बड़ी सख्ती से अमल कर रहे हैं क्या फ़िक़्ह हनफ़ी और मज़हब इमाम आज़म से उन के जवाज़ का भी कोई सबूत पेश कर सकते हैं।

○ कब्रों को पक्का बनाना, उनपर गुम्बद नुमा विशाल इमारतें बनाना और झाड़ फ़ानूसों से उनकी सजावट करने का कोई सबूत इमाम अबु हनीफ़ा से पेश किया जा सकता है ?।

○ क़ब्रों पर सालाना उर्स, मुर्दा बुजुर्गों के नाम की नज़्र व नियाज़ें उनसे मदद मांगने और उनको कायनात के कामों को सब कुछ करने के अख्तियार का कोई सबूत फ़िक़्ह हनफ़ी या इमाम अबु हनीफ़ा से पेश किया जा सकता है?

○ क़ब्रों को ख़ाना काबा की तरह गुस्ल देने का कोई सबूत फ़िक़्ह हनफ़ी में है?

○ ग्यारहवीं की व्यवस्था करना और यह अक़ीदा रखना कि इसके द्वारा रिज्क़ में वृद्धि और कारोबार में बरकत हासिल होती है और इसके न करने से कारोबार में हानि होती है क्या इस अमल और अक़ीदे का भी कोई सबूत फ़िक़्ह हनफ़ी और मज़हबे इमाम हनीफ़ा में मौजूद है ?

Www.IslamicBooks.Website

❍ 12 वफ़ात पर मीलाद का दिन मनाना, उस दिन रोशनी करना, गली कूचों को सजाना, झंडियां लगाना, मेहराबों और दरवाज़ों पर रंग रोग़न करना और इन कामों पर लाखों रुपया खर्च करने का कोई जवाज़ फ़िक़्ह हनफ़ी या मज़हबे इमाम हनीफ़ा से पेश किया जा सकता है?

❍ इसी तरह मीलाद का जुलूस, ग्यारहवीं का जुलूस और आख़िरी बुद्ध का कोई इशारा फ़िक़्ह हनफ़ी में मौजूद है?

❍ मुहर्रम के अवसर पर ताज़िया बनाना, पानी की सबीलें लगाना, और दूसरी ऐसी रसमें जो हनफ़ी बरेलवियों में आम हैं (जैसे हज़रत हुसैन के नाम पर बच्चों को फ़क़ीर बनाकर उनसे भीख मंगवाना, उनके नाम की नज़्र व नियाज़ देना आदि)क्या फ़िक़्ह हनफ़ी से इनका कोई सबूत पेश किया जा सकता है?

❍ अज़ान से पूर्व ऊंची आवाज़ से सलात व सलाम और फ़र्ज़ नमाज़ों के तुरन्त बाद ला इला ह इल्लल्लाह के सामूहिक ऊंची आवाज़ से ज़िक्र करने का कोई सबूत फिक़्ह हनफ़ी में मौहूद है? जिसे बरेलवियों ने फ़र्ज और वाज़िब का दर्जा दिया हैं।

❍ ईसाले सवाब (सवाब पहुंचाने) के नाम पर जो हिन्दुवाना रसमें तीजा, सातवां, दसवां, चालीसवां और रस्मे कुल आदि अदा की जाती हैं क्या इन रस्मों का कोई सबूत फ़िक़्ह हनफ़ी में मौजूद है?

❍ अम्बिया अलै0 और औलिया किराम को ग़ैब का इल्म, हर जगह हाज़िर व नाज़िर और सारे मामलों में बा इख्तियार समझना फ़िक़्ह हनफ़ी की व्याख्या के अनुसार ठीक है।?

❍ मीलाद की मज्लिसों में नबी सल्ल0 के तश्रीफ़ लाने का अक़ीदा फ़िक़्ह हनफ़ी में कहां लिखा है? जिसके आधार पर सम्मान

Www.IslamicBooks.Website

पूर्वक खड़ा होना ज़रूरी समझा जाता है।

बस इस समय सम्पादक महोदय से हम केवल दस सवाल कर रहे हैं कि वे इनके बारे में फ़िक़्ह हनफ़ी से सबूत उपलब्ध कराएं क्योंकि उन्होंने प्रौ0 साहब पर आपत्ति भी इसी आधार पर की है कि उनकी फ़लां बातें फ़िक़्ह हनफ़ी और मज़हबे इमाम आज़म के ख़िलाफ़ हैं अतः वह ग़लत और अहले सुन्नत मसलक के ख़िलाफ़ है।"

इसलिए हम इस समय बात को " फ़िक़्ह हनफ़ी और मज़हबे इमाम आज़म" तक सीमित रखना चाहते हैं अलबत्ता सम्पादक महोदय यदि चाहें कि इस मामले पर भी बात हो कि उल्लिखित कार्य कुरआन व हदीस की रू से भी जायज़ है या नहीं? तो हम इसके लिए भी तैयार हैं लेकिन हमारी पहली मांग यह है कि उल्लिखित बातों के जवाज़ का सबूत फ़िक़्ह हनफ़ी से पेश किया जाए। इसके बाद दूसरे मरहले पर इन्शा अल्लाह कुरआन व हदीस की रोशनी में बात होगी।

प्रौ0 ताहिरुल क़ादरी की सेवा में

इसी तरह हम प्रौ0 ताहिरुल क़ादरी साहब से मालूम करेंगे कि जिस तरह कुछ उनके मसाइल हैं जिन का हवाला " रज़ाए मुस्तफ़ा" ने दिया है अपने हनफ़ी मसलक के ख़िलाफ़ अपना दृषिकोण अपनाया है केवल इसलिए कि आपके निकट इन मसाइल में फ़िक़्ह हनफ़ी की दलीलें कुछ भारी हैं और दूसरे दृष्टि कोण की दलीलें हलकी हैं। क्या इसी तरह हम आप से भी यह आशा और उम्मीद रख सकते हैं कि जिन दस मसाइल का उदाहरण स्वरूप हमने पिछले पृष्ठों में उल्लेख किया है आप भी उन पर सोच विचार करेंगे? और उनका कोई सबूत फ़िक़्ह हनफ़ी से यदि पेश नहीं किया

Www.IslamicBooks.Website

जा सकता तो उनके बारे में भी दोबारा उनपर सोच विचार करके क़ुरआन व हदीस के अनुसार तौहीद व सुन्नत का रास्ता अपनाने का ऐलान करेंगे?

("सप्ताहिक तन्ज़ीमुल हदीस" लाहौर 18 सितम्बर 1987)

नोट– अल्लाह का शुक्र है कि हमारे इन दस सवालों का कोई जवाब "रज़ाए मुस्तफ़ा" के सम्पादक ने दिया न ही डा0 ताहिरुल क़ादरी ने इनके बारे में कुछ इर्शाद फ़रमाया।

Www.IslamicBooks.Website

(7)

बुजुर्गाने दीन की क़ब्रों पर मेले

हुजूर सल्ल0 ने अपनी उम्मत को जितनी ताकीद के साथ शिर्क के कामों से बचने की हिदायत की थी अफ़सोस है आपके नाम की दावेदार यह उम्मत उतना ही शिर्क के कामों की शिकार हो गयी है और अपने रसूल की सारी हिदायतों को भूला चुकी है। आपने स्पष्ट शब्दों में फ़रमा दिया था।

" लोगों! कान खोल कर सुन लो तुम से पहली उम्मत के लोगों ने अपने अम्बिया और औलिया व नेक लोगों की क़ब्रों को उपासना स्थल (मस्जिद) बना लिया था खबरदार, तुम न (उनकी तरह) क़ब्रों को मसाजिद (उपासना स्थल) बना लेना। मैं तुम को इससे रोकता हूं। (सही मुस्लिम– 1–201)

आपने मरजुल मौत (बीमारी में) में यहूदियों और ईसाइयों के उस मुश्रिकाना कार्य पर लानत की जिसका उद्देश्य अपनी उम्मत को इस कार्य से बचाना था। फ़रमाया–

" अल्लाह तआला यहूद व नसारा पर लानत फ़रमाए कि उन्होंने अपने अम्बिया की क़ब्रों को उपासना स्थल बना लिया!

(सही मुस्लिम)

एक और रिवायत में फ़रमाया–

" उस क़ौम पर (अर्थात यहूद व नसारा)अल्लाह का कड़ा प्रकोप हुआ जिसने अपने नबियों की क़ब्रों को सज्दा किया।"

(मुसनद अहमद 13–87)

इसी तरह आपने मुस्लिम समुदाय को स्वयं अपने बारे में गुलू

Www.IslamicBooks.Website

करने से रोका क्योंकि यह ग़ुलू (हद से बढ़ जाना) ही मुश्रिकाना अक़ीदों और कार्यों का कारण होता है। आपने फ़रमाया–

"लोगों! मैं अब्दुल्लाह का बेटा हूं और अल्लाह का रसूल हूं। खुदा की क़सम मुझे कदापि यह पसन्द नहीं कि मुझे उस दर्जे से बढ़ाओ जिस पर मुझे अल्लाह ने सरफ़राज़ फ़रमाया है अर्थात नुबुवत व रिसालत के मक़ाम से भी बढ़ाने लग जाओ।"

एक और रिवायत में आपने फ़रमाया–" मेरी इज्ज़त व सम्मान में इस तरह की ज़्यादती और ग़ुलू न करना जिस तरह ईसाइयों ने मसीह इब्ने मरयम के साथ किया। मैं तो केवल उसका बन्दा हूं इसलिए मुझे केवल अल्लाह का बन्दा और उसका रसूल कहना।"

(मिश्कात– 416)

मौलाना हाली ने इस हदीसे रसूल को यूं उर्दू के सांचे में ढ़ाला है–

न तुरबत को मेरी बनाना सनम तुम
न करना मेरी क़ब्र पर सर को ख़म तुम
नहीं बन्दा होने में कुछ मुझ से कम तुम
कि बे चारगी में बराबर हैं हम तुम
मुझे दी है हक़ ने बस इतनी बुजुर्गी
कि बन्दा भी हूं उसका और एलची भी

अपनी क़ब्र के बारे में भी आपने अपनी उम्मत को सचेत किया– ला तजअलू क़बरी ओदन (अबु दाऊद)

" मेरी क़ब्र को ईद मत बनाना।" अर्थात ज़ियारत के लिए इज्तिमा न करना जैसे ईद पर इज्तिमा करते हो।

(औनुल माबूद 2– 171)

शाह वलीउल्लाह मुहद्दिस देहलवी इस हदीस की शरह में

Www.IslamicBooks.Website

लिखते हैं।

"इस फ़रमान से दीन में रद्दो बदल के दरवाज़े को बन्द करना मतलूब है कि यह उम्मत भी यहूदियों और नसारा की तरह अपने बुजुर्गों की क़ब्रों को हज की तरह मौसम और ईद ही न बना डाले।"

(हुज्जतुल्लाहुल बालिग़ा 2–77)

इसके अलावा आपने अल्लाह से दुआ की–

ऐ अल्लाह! मेरी क़ब्र को "वसन" (बुत का नाम) बनने से बचाना।" (कि उसकी पूजा की जाए) (मुसनद अहमद 13–87)

मालूम हुआ किसी ख़ास क़ब्र को सम्मान योग्य समझना उसे पत्थर की मूर्ति की तरह बुत बनाना और समझना जैसा है। अतएव शैखुल इस्लाम इमाम इब्ने तैमिया रह0 इस हदीस की शरह में लिखते हैं–

" नबी सल्ल0 की उपरोक्त दुआ इस बात पर दलील है कि क़ब्रें भी औसान (बुत) बन जाती हैं इसी लिए नबी सल्ल0 इस बात से डर गए थे कि कहीं मेरी क़ब्र भी बुत न बन जाए और आपने अल्लाह से दुआ की कि मेरी क़ब्र के साथ ऐसा न हो और अल्लाह ने आपकी दुआ क़ुबूल फ़रमा ली।"

एक और स्थान पर इमाम इब्ने तैमिया रह0 फ़रमाते हैं–

" आपको आम क़ायदे के ख़िलाफ़ किसी खुली जगह में दफ़न करने की बजाए हज़रत आइशा रज़ि0 के हुजरे (चार दीवारी)में इसी लिए दफ़न किया गया ताकि कोई व्यक्ति वहां आकर नमाज़ और इबादत की व्यवस्था न करे कि इस तरह आपकी क़ब्र" वसन" (बुत) बन जाती"

स्वयं हज़रत आइशा रज़ि0 भी फ़रमाती हैं–

" यदि यह ख़तरा न होता कि आपकी क़ब्र को उपासना स्थल

Www.IslamicBooks.Website

(मस्जिद) बना लिया जाएगा तो फिर आप की क़ब्र (चार दीवारी के बजाए) किसी खुली जगह पर बनायी जाती, (सही मुस्लिम 1– 201)

इसी तरह आपने तीन स्थानों के आलावा किसी भी स्थान के लिए तक़र्रुबी सफ़र की इजाज़त नहीं दी है और स्पष्ट शब्दों में इसकी मनाही फ़रमा दी है।

" तीन मस्जिदों (बैतुल्लाह, बैतुल मक़्दिस और मस्जिदे नबवी) के सिवा किसी भी जगह की ओर सफ़र (सवाब व अल्लाह की समीपता के लिए) न किया जाए।" (सहीहैन)

इस निषेधात्मक आदेश के द्वारा आप ने किसी भी क़ब्र की ओर सम्मान व ज़ियारत के उद्देश्य से जाने से मना फ़रमा दिया है जिस तरह कि अज्ञानता काल में अरब मुश्रिकीन के यहां रिवाज था जैसा कि शाह वलीउल्लाह मुहिद्दस देहलवी फ़रमाते हैं।

" अज्ञानता के ज़माने में लोग ऐसे स्थानों पर जाते थे जो उनके विचार में बड़े बरकत वाले होते थे। उनका सम्मान और दर्शन और उनसे बरकत हासिल करने के लिए जाते। इसमें चूंकि ग़ैरुल्लाह की इबादत का दरवाज़ा खुलता है इसलिए नबी सल्ल0 ने बिगाड़ की इस जड़ को (आदेश देकर) बन्द कर दिया। और मेरे निकट क़ब्रें भी इस में दाखिल हैं कि उनकी तरफ़ इरादा करके तक़र्रुबी सफ़र किया जाए।

(हुज्जतुल्लाहुल बालिग़ा 1– 192)

दूसरी जगह शाह साहब फ़रमाते हैं–

" जो व्यक्ति भी शहर अजमेर (ख्वाजा मुअीनुद्दीन अजमेरी की क़ब्र पर) या सालार मसऊद और इन जैसे अन्य बुज़ुर्गों की क़ब्रों पर हाजत तलब करने के उद्देश्य से जाता है वह ऐसे सख्त गुनाह का शिकार होता है जो क़त्ल और ज़िना से बढ़कर है और ऐसा व्यक्ति

Www.IslamicBooks.Website

उन्हीं लोगों की तरह है जो अल्लाह की पैदा की हुई चीजों की पूजा करते हैं या उनकी तरह जो लात और उज़्ज़ा को हाजत पूरी करने के लिए पुकारते हैं। (अत्तफ़हीमात इलाहिया 2– 49)

इन हदीसों और उन की व्याख्याओं से मालूम होता है कि बुजुर्गों की क़ब्रों को सम्मान योग्य समझना, उनकी क़ब्रों पर सालाना मेले लगाना, क़ब्रों पर बरकत हासिल करने और दर्शन के उद्देश्य से जाना, क़ब्र वालों से मदद मांगना, क़ब्रों की परिक्रमा करना और उन्हें इबादत गाह बनाना, उनके लिए तक़र्रुबी(सफ़र करना आदि सारे काम मुश्रिकाना हैं जो सदैव मुश्रिक क़ौमों का तरीक़ा रहा है जिस पर वे अल्लाह के प्रकोप और लानत की हकदार ठहरायीं और उन सब कामों से नबी करीम सल्ल0 ने हमें पूरी सख्ती से रोका है लेकिन कितने दुख की बात है कि हम नबी सल्ल0 की इन स्पष्ट व्याख्याओं के विपरीत उन तमाम मुश्रिकाना कामों में पुरी तरह व्यस्त हैं। जैसे–

○ हम अर्थात मुसलमान बुजुर्गों की ओर मन्सूब सच्ची या फ़र्ज़ी क़ब्रों को इसलिए सम्मान योग्य समझते हैं कि हमारे विचार से वे इन क़ब्रों में जीवित हैं और हानि व लाभ देने पर समर्थ हैं।

○ हमने उनकी क़ब्रों को सज्दा गाह बना लिया है। क़ब्रों को सम्मान व अक़ीदत से चूमते हैं उनके आगे माथा टेकने में भी कोई संकोच नहीं करते और उनसे हाजतें तलब करते हैं।

○ उनकी क़ब्रों पर सालाना मेले ठेले लगाते हैं हर जुमरात को क़ब्रों पर जमा होते हैं और वहां चढ़ावे चढ़ाते हैं।

उनकी क़ब्रों की ज़ियारत (दर्शन) के उद्देश्य से दूर दूर के सफ़र करके पाक पतन, दाता दरबार मियां मीर और अन्य क़ब्रों पर हाज़िरी देते हैं।

Www.IslamicBooks.Website

उलमा ए सू (बिगड़े और भटके हुए उलमा) तो इन कामों की सरपरस्ती कर रहे हैं लेकिन अफ़सोस कि इसी के साथ हुकूमत भी इनकी संरक्षक बनी हुई है। तमाम बड़ी बड़ी क़ब्रें, जिनको ग़लत रूप से मज़ारात का नाम देकर मज़ारात कहा जाता है औक़ाफ़ के अधीन हैं। हुकूमत को चाहिए था कि इन्हें अपने क़ब्ज़े में लेने के बाद उन तमाम क़ब्रों को इस्लामी शरीअत के अनुसार ढाकर बाकी आम क़ब्रों के बराबर कर देती और उनके सम्मान व पूजा के सारे रास्ते बन्द करके लोगों को तौहीद की हक़ीक़त से अवगत कराती मगर अफ़सोस हुकूमत अपना यह फ़र्ज़ अदा नहीं कर पायी और बिगड़े हुए लोगों को और अधिक अंध विश्वास में उलझाने के लिए शिर्क की सरपरस्ती आरंभ कर दी। अब फ़रियाद करें भी तो किस से करें। मौलाना अलताफ़ हुसैन हाली ने मुसलमानों की इस हालत का बडा ही अच्छा नक़्शा खींचा है काश हम मुसलमान उनकी इस बात से शिक्षा ग्रहण करें.....

करे ग़ैर बुत की पूजा तो काफ़िर
जो ठहराए बेटा खुदा का तो काफ़िर
झुके आग पर बहरे सज्दा तो काफ़िर
कवाकिब में मानें करिश्मा तो काफ़िर
मगर मोमिनों पर कुशादा हैं राहें
परसतिश करें शौक़ से जिसकी चाहें
नबी को जो चाहें खुदा कर दिखाएं
इमामों का रुतबा नबी से बढ़ाएं
मज़ारों पे दिन रात नज़रें चढ़ाएं
शहीदों से जा जा के मांगे दुआएं

Www.IslamicBooks.Website

न तौहीद में कुछ ख़लल इससे आए
न इस्लाम बिगड़े न ईमान जाए

("अल एतिसाम" 14 फ़रवरी 1975)

Www.IslamicBooks.Website

(8)

उर्स के स्वीकरण में एक डाकटर की दलीलें

एक दोस्त ने डाक्टर तहिरुल क़ादरी साहब की तक़रीर का एक कैसिट बनाकर दिया और कहा कि इसमें कुरआन शरीफ़ व हदीस से उर्स का स्वीकरण किया गया है। कैसिट सुना तो वास्तव में डाक्टर साहब ने यही दावा किया कि कुरआन व हदीस की रोशनी में "उर्स" साबित करूंगा। यह दावा सुनकर बड़ी उत्सुकता पैदा हो गयी और उनकी तक़रीर सुनी। लेकिन सुनकर बड़ी निराशा हुई और अचरज भी हुआ। निराशा इस बात पर कि दावे के अनुसार कोई उचित दलील वे प्रस्तुत न कर सके (जैसा कि अभी इसकी पूरी बात सामने आएगी) सारी तक़रीर सुनकर आप से आप मीर का यह शेअर याद आ गया।

बड़ा शोर सुनते थे पहलू में दिल का
जो चीरा तो एक क़तरए खूंन निकला

और अचरज इस साहस और अल्लाह के भय की कमी पर हुआ कि एक खुले हुए शिर्क का स्वीकरण कुरआन व हदीस से करने की इतनी निन्दनीय कोशिश की जा रही है। यह साहस वही व्यक्ति कर सकता है जिसका दिल अल्लाह के भय से पूरी तरह खाली हो और यह वही बेइमानी का काम जिसे बनी इसराईल के उलमा किया करते थे कि बातें उनकी अपनी गढ़ी हुई होती थी और लोगों को यह विश्वास दिलाया करते थे कि ये अल्लाह के आदेश हैं। कुरआन ने इन ईमान के लुटेरों के बारे में कहा।

" तो ख़राबी है उनके लिए जो किताब अपने हाथ से लिखें

Www.IslamicBooks.Website

फिर कह दें यह खुदा के पास से है कि इसके बदले थोड़े से दाम हासिल करें तो ख़राबी है उनके लिए उनके हाथों के लिखे से और ख़राबी है उनके लिए उस कमाई से।"

(बक़रा– 79) अनुवादः अहमद रज़ा खां)

दलीलों का सारांश

मतलब यह कि डा0 साहब ने उर्स के स्वीकरण के लिए जो दलीलें प्रस्तुत कीं उसका सारांश निम्न है।

डा0 साहब ने अपनी तक़रीर का आरंभ कुरआन की इस आयत से किया–

" अल्लाह ईमान वालों को दुनिया और आख़िरत में हक़ बात के साथ मज़बूत रखता है साबित क़दम रखता है। (इबराहीम–27)

हदीस में इस आयत की टीका में आता है कि क़ब्र में जब मोमिन आदमी से नबी करीम सल्ल0 की रिसालत के बारे में सवाल होता है तो मोमिन को अल्लाह की ओर से यह सौभाग्य प्राप्त होता है कि वह आपकी रिसालत की गवाही देता है कि वे अल्लाह के रसूल हैं।

इस गवाही के बाद उस की क़ब्र को फैला दिया जाता है और उसको कहा जाता है– " इस प्रकार सो जा जिस प्रकार दुल्हन सोती है जिसे वही जगाता है जो उसको सबसे आधिक प्रिय होता है।"

(इस हदीस के किसी शब्द से भी चूंकि उर्स मनाने का मतलब नहीं निकलता इसलिए अनुवाद करने के बाद डा0 साहब ने यह चालाकी की) आपको मालूम है कि पहली रात को दुल्हा दुल्हन सोते नहीं हैं और जब मोमिन को यह कहा जा रहा है कि दुल्हन की तरह सो जा तो बस औलिया अल्लाह भी दुल्हन की तरह सोते हैं

Www.IslamicBooks.Website

और इस तरह ही सो जाते हैं जिस तरह पहली रात के दुल्हा दुल्हन सोते हैं (उद्देश्य उनका इस वाक्य से यह है कि पहली रात को दुल्हा दुल्हन जिस तरह सारी रात जागते हैं इसी तरह औलिया अल्लाह भी सदैव ही जागते रहते हैं।

फिर फ़रमायाः उर्स उसी उरूस (दुल्हन) से निकला है आम लोगों की मौत का दिन यौमे वफ़ात है और औलिया अल्लाह की वफ़ात का दिन यौमे उर्स होता है। हम तो साल में एक बार ही उर्स मनाते हैं यद्यपि उनका तो हर दिन ही यौमे उर्स होता है। शादी का दिन होता है और शादी में जिस तरह हार फूलों का प्रबन्ध होता है उर्स में भी इन चीजों की व्यवस्था होती है।

इससे पूर्व डा0 साहब ने हदीस के इन शब्दों से कि जब रिश्तेदार मुर्दे को दफ़नाकर वापस जाते हैं। तो वह मुर्दा उनके क़दमों की आहट सुनता है यसमअु क़र अ निआलिहिम से यह विवेचन किया कि यह आहट मोमिन, मुसलमान और कपटी सब सुनते हैं। इसलिए औलिया अल्लाह भी क़ब्रों में सब कुछ सुनते हैं।

फिर फ़रमाया कि ये औलिया अल्लाह जिनका लोग उर्स मनाते हैं क़ियामत वाले दिन अपने मुरीदों की शफ़ाअत करेंगे और दलील क़ुरआन की इस आयत की दी।

क़ियामत के दिन शफ़ाअत के मालिक वही होंगे जिनसे अल्लाह ने वचन (वायदा) किया है'' (मरयम– 87)

इस प्रकार मानों डा0 साहब ने लोगों को यह प्रलोभन दिया कि यदि क़ियामत के दिन औलिया की शफ़ाअत के हक़दार बनना चाहते हो तो खूब धूम धाम से उनका उर्स मनाया करो। डा0 साहब ने विषय से हटकर और भी कई बातें कीं जैसे हर क़ब्र में नबी सल्ल0 हाज़िर होते हैं। हर क़ब्र में रसूल (सल्ल0) का जलवा होता

Www.IslamicBooks.Website

है और मोमिन क़ब्र में दफ़न व्यक्ति के अन्दर इतनी समझ और अनूभूति होती है कि वह घर वापस जाकर घर वालों को ख़बर देने की इच्छा प्रकट करता है। इस इच्छा से डा0 साहब ने यह विवेचन किया कि वफ़ात के बाद भी इतनी समझ और अनुभूति बाक़ी रहती है कि वह घर आ सकता है। यूं तो इसे भी क़ब्र में ज़िन्दा होने की दलील बनाया गया यद्यपि फ़रिश्तों के सामने एक इच्छा के व्यक्त करने से किसी भी क़ब्र वाले की सर्वकालिक ज़िन्दगी (सांसारिक) का स्वीकरण नहीं होता।

इन दलीलों की हक़ीक़त

आइए अब तनिक उल्लिखित दलीलों का अवलोकन करके देखिए कि कया वास्तव में इनसे इस मसले का स्वीकरण होता है और दलीलों के इस ताने बाने में कोई जान है? तथ्य यह है कि प्रस्तुत की गयी दलीलों में एक भी दलील ऐसी नहीं जिसका संबंध इस विषय से हो। इसे हम विस्तार से प्रस्तुत करते हैं।

1– सबसे पहले तो यह बात स्पष्ट करने की ज़रूरत है कि " उर्स" हर मोमिन व मुसलमान का मनाना चाहिए या केवल औलिया अल्लाह का उर्स मनाना ज़रूरी है तो विवेचन जिस हदीस से किया गया है वह हर मोमिन के बारे में है केवल औलिया अल्लाह के लिए नहीं है। यदि इस हदीस से विवेचन सही है और इससे वास्तव में उर्स" का स्वीकरण होता है तो फिर तो हर मुसलमान का उर्स मनाना ज़रूरी है। दावा और दलील में कोई समानता नहीं है। दावा ख़ास है कि औलिया अल्लाह का उर्स मनाना चाहिए और दलील पेश की गयी है आम, जिसमें हर मुसलमान को उसकी क़ब्र में पेश आने वाले हालात के बारे में ख़बर दी गयी है।

दूसरी बात स्पष्टीकरण करने की यह है कि औलिया अल्लाह

Www.IslamicBooks.Website

की निशानी और पहचान क्या है? क्या कोई मुरीद या कुछ मुरीद या कोई आदमी या कुछ आदमी किसी मृत व्यक्ति का उर्स मनाना आरंभ कर दें तो क्या यह उर्स मनाना उस मृत व्यक्ति की " वलायत" की दलील है? या उसके लिए " करामात' का होना ज़रूरी है कि जिस व्यक्ति से कोई विचित्र घटना घट जाए उसे वली समझा जाए? या जो ज़ाहिरी रूप से दीन दार और ज़ाहिद व पारसा सा लगे उसे वली समझा जाए? आखिर वलायत का पैमाना क्या है? कि जिस की रोशनी में " वली" का उर्स। मनाया जा सके।

साफ़ बात है कि किसी आदमी या कुछ आदमियों का किसी भी मुर्दा व्यक्ति का उर्स मनाना, वलायत की दलील नहीं बन सकता। क्योंकि हम देख रहे हैं कि हमारे देश में अधिकांश ऐसे लोगों का उर्स मनाया जा रहा है जो पूरी तरह अक़्ल से ख़ाली थे और नमाज रोज़े यहां तक कि पाकी तक से बे नियाज़ थे इसलिए मात्र कुछ लोगों का ख़ास उद्देश्यों के लिए उर्स मना लेना यह किसी भी व्यक्ति की वलायत की दलील नहीं बन सकता।

2– करामातों का होना भी किसी व्यक्ति की वलायत की दलील नहीं क्योंकि किसी को पता नहीं कि उसने नेकी का जो रूप धारा है वास्तव में यह उसकी ईमानी व दिली हालत ही का द्योतक है या मात्र कपट व दिखावा और उसकी करिश्मा कारी है? यदि ज्यादा सही यही रहा कि वह बड़ा पारसा और शरीअत का पाबन्द था तब भी विश्वास के साथ कोई व्यक्ति यह नहीं कह सकता कि उसका ख़ात्मा निश्चय ही ईमान पर ही हुआ है या वह निश्चय ही जन्नती है। क्योंकि हदीस में आता है कि एक व्यक्ति सारी उम्र नेकी व पारसाई में गुज़ारता है लेकिन आख़िरी उम्र में उससे कोई ऐसा अमल हो जाता है कि उसका ख़ात्मा खैर पर नहीं होता इसलिए

Www.IslamicBooks.Website

फ़िक़्ह अकबर की शरह में यह व्याख्या कर दी गयी है कि'''

'' पैग़म्बर के अलावा औलिया, उलमा, और भले लोगों के बारे में निश्चित रूप से हम दावे के साथ यह नहीं कह सकते कि उनकी मौत ईमान पर हुई है यद्यपि उनसे करामतें भी घटित हुई हों क्योंकि यक़ीनी ख़बर की बुनियाद देखने पर है और यह देखना ही मनुष्य की आंख से छुपा है।'' (शरह फ़िक़्ह अकबर 131)

इससे यह स्पष्ट है कि औलिया अल्लाह कोई अलग प्रकार के प्राणी नहीं हैं जैसा कि क़ब्र परस्ती करने वालों ने ऐसा समझ लिया है न उनकी कोई खास पहचान ही है बल्कि कुरआन के स्पष्टीकरण के अनुसार हर मुत्तक़ी भी अल्लाह के वली हैं'' (अन्फ़ाल–34) और मुत्तकी कौन है कौन नहीं? इसका सही पता केवल अल्लाह को है।

जब किसी भी व्यक्ति की वलायत का हमारे पास कोई यक़ीनी ज्ञान नहीं है तो हम किसी का उर्स किस तरह मनाएं? और यदि ज़ाहिरी हालत के अनुसार ही ज्ञान काफ़ी है तो फिर हर शरीअत के पाबन्द मुसलमान का उर्स मनाना चाहिए क्योंकि कुरआन की रू से हर मुत्तक़ी मुसलमान "वली अल्लाह'' है। उसके लिए पीर होना, किसी मसनद या दरगाह का सज्जादा होना या किसी दरबार का प्रबंधक होना अवश्यक नहीं है। जिस प्रकार कि ऐसा समझ लिया गया है और केवल ऐसे ही लोगों का उर्स मनाया जाता है यद्यपि यदि उसकी कोई शरअी हैसियत है तो केवल ख़ास लोगों के लिए नहीं है बल्कि फिर तो हर मुसलमान का उर्स मनाना ज़रूरी है।

इस खुलासे के बाद उल्लिखित दलीलों के विश्लेषण की ज़रूरत तो बाक़ी नहीं रहती है फिर भी आख़िरी हद तक समझाने के तौर पर हम उनकी हक़ीक़त भी स्पष्ट किए देते हैं ताकि किसी को भ्रम में डालने की गुंजाइश न रहे।

Www.IslamicBooks.Website

मरने वाला क़दमों की आहट सुनता है?

डा0 साहब ने हदीस के इन शब्दों से कि मुर्दा दफ़नाकर वापस जाने वालों के क़दमों की आहट सुनता है यह विवेचन किया है कि मृत व्यक्ति क़ब्रों में सुनते हैं यद्यपि उन्हें मालूम होना चाहिए कि यह हदीस अहनाफ़ के उसूल के अनुसार कुरआन के ख़िलाफ़ है क्योंकि कुरआन तो यह कह रहा है–

" ऐ पैग़म्बर तू क़ब्र वालों को नहीं सुना सकता। (फ़ातिर–22)

और यह हदीस कहती है कि मुर्दा क़दमों की आहट सुनता है। हनफ़ी उसूल के अनुसार यह अकेली ख़बर चूंकि कुरआन के ख़िलाफ़ है इसलिए इसे माना नहीं जाएगा और कुरआन की बयान की गयी बात पर ईमान रखा जाएगा। जब अहनाफ़ के उसूल के अनुसार यह हदीस ही खंडन करने योग्य है तो कुरआन करीम की खुली आयत (मुर्दों को नहीं सुना सकते) के मुक़ाबले में इसे क्यों प्रस्तुत किया जा सकता है? पहले अहनाफ़ अपने इस उसूल को ग़लत मानें वर्ना वे इस हदीस से विवेचन करने के हकदार नहीं हैं।

अलबत्ता मुहद्दिसीन (अहले हदीस) किसी सही सनद वाली हदीस को स्वयं के बनाए हुए उसूलों के आधार पर खंडित नहीं करते बल्कि हर हदीस को मानते हैं। यह हदीस भी उनके निकट माने जाने योग्य है और मतलब इसका यह होगा कि अल्लाह ताज़ा दफ़नाए हुए मुर्दे को क़दमों की आहट सुनवा देता है जबकि कुरआनी आयत का मफ़हूम यह है कि हम कोई बात मुर्दों को सुनाना चाहें तो नहीं सुनवा सकते। दोनों का मफ़हूम अपनी अपनी जगह सही है और आयत व हदीस के बीच कोई मतभेद नहीं कोई टकराव नहीं है। अलबत्ता क़दमों की आहट सुनने का मतलब यदि यह लिया जाए कि वे सर्वथा हर समय हर बात सुनते हैं तो यह

Www.IslamicBooks.Website

हदीस के मफ़हूम से भी हद से बढ़ जाना है और यह मफ़हूम कुरआन की आयत के भी ख़िलाफ़ है।

इस दृष्टि से हदीस के इन शब्दों यस म ऊ क़र अ निआलिहिम से कदापि मुर्दो के सुनने का मसला साबित नहीं होता। जब क़ब्र वाले सुन ही नहीं सकते तो मदद मांगना किस प्रकार जायज़ होगा?

" दुल्हन की तरह सो जा" से उर्स का स्वीकरण

" दुल्हन की तरह सो जा" से यह विवेचन कि औलिया दुल्हा दुल्हन की तरह जागते हैं इसलिए उनकी मौत का दिन यौमे उर्स (शादी का दिन) है एक तो यह धारणा ही ग़लत है कि पहली रात को दुल्हा दुल्हन सोते ही नहीं हैं। सारी दुनिया जानती है कि मेल मिलाप और मौज मस्ती के कुछ क्षणों को गुज़ार कर दोनों सो जाते हैं और बाक़ी सारी रात सोकर ही गुजारते हैं इसलिए पहली बुनियाद ही ग़लत है इसलिए यह सारा विवेचन बिगाड़ पर बिगाड़ का उदाहरण है दूसरे यह कहना कि हदीस में तो ऐसे कोई शब्द नहीं हैं जिन का यह मफ़हूम संभव हो। तीसरे यह कि यदि मान लिया जाए कि मौत का दिन शादी का दिन है तो यह शादी किसके साथ होती है? और इसका क्या मतलब है? चौथे यह कि औलिया अल्लाह की सांसारिक शादी के दिन क्या हर साल शादी का दिन जब आता है तो उनके सांसारिक जीवन में हर साल शादी की खुशी मनायी जाती है? जब दुनिया में उनकी वास्तविक शादी की खुशी में सालाना खुशी (उर्स) की व्यवस्था नहीं की जाती तो क़ब्र की इस शादी में (जिस की हक़ीक़त का किसी को पता भी नहीं है) को हर साल मनाने की व्यवस्था करने में क्या तुक है? और इसमें कौन सी बेहतरी है?

Www.IslamicBooks.Website

विवेचन के इस गोरख धंधे में कोई बात समझ में आने वाली नहीं। एक पहेली है जिसे केवल शब्दों के ज़ोर पर और अक़ीदत के नाम पर सीधे सादे लोगों से मनवाया जा रहा है जो फिक्रो नज़र से वंचित हैं और विवेचन व नतीजा निकालने की बारीकियों से पूरी तरह अपरिचित हैं।

वर्ना तथ्य यह है कि हदीस के इन शब्दों से तो डाक्टर ताहिरुल क़ादरी के निकाले गए मफ़हूम के विपरीत यह साबित होता है कि क़ब्र में जब मोमिन सही जवाब दे कर फ़ारिग़ हो जाता है तो फिर उसे क़ियामत तक के लिए आराम व सुख शान्ति की नींद सुला दिया जाता है और क़ब्र से वह उसी दिन ज़िन्दा होकर उठेगा जब अल्लाह तमाम मनुष्यों को क़ब्रों से उठाएगा। तनिक हदीस के पूरे शब्दों को देखें कि यह मफ़हूम कितना स्पष्ट है।

" दुल्हन की तरह सो जा जिसे केवल वही उठाता है जो घर वालों में से उसे सबसे अध्कि प्रिय होता है यहां तक कि उसे अल्लाह उस आरामगाह से (क़ियामत वाले दिन) उठाएगा।"

(जामे अ तिर्मिज़ी– 3– 383)

मोमिन चूंकि अल्लाह का प्रिय होता है और अल्लाह उसका प्रेमी जैसा कि आयत इन कुन्तुम तुहिब्बू नल्लाहु फ़त्तबिऊनी योहबिब कुमुल्लाहु (इमरान–31) से साबित है। इस हिसाब से उसे कहा जा रहा है कि मरने के बाद अब तू अपने प्रेमी (अल्लाह) की बारगाह में आ गया है और रसूल का अनुसरण करने के नतीजे में तुझे महबूबियत का दर्जा प्रदान किया गया है अब तू सदैव के लिए आराम की नींद सो जा जिस प्रकार दुल्हन को उसका प्रेमी (दुल्हा) ही आकर उठाता है इस तरह क़ियामत वाले दिन तुझे भी तेरा प्रेमी ही उठाएगा अर्थात अल्लाह ही तुझे इस सर्वकालिक नींद से

Www.IslamicBooks.Website

जगाएगा।

इस हदीस में तो स्पष्ट रूप से यह कहा जा रहा है कि सवाल व जवाब के बाद मोमिन को क़ियामत तक के लिए आराम की नींद सुला दिया जाता है और पंजाब विश्व विद्यालय के डिग्री होल्डर यह डाक्टर फ़रमा रहे हैं कि मोमिन क़ब्र में सोता ही नहीं है जागता रहता है और इस पर और यह रद्दा चढ़ाते हैं कि वह जागते हैं इसलिए उनका उर्स (शादी की खुशी) मनाओ और सितम पर सितम यह कि उनसे मदद मांगो, उनको मुश्किलें हल करने वाला और हाजतें पूरी करने वाला समझो।

इक़बाल ने सच कहा है कि.....

खुद बदलते नहीं कुरआं को बदल देते हैं
हुए किस दर्जा फ़क़ीहाने हरम बे तौफ़ीक़

डा0 साहब का ज्ञान भंडार– शफ़ाअत का मसला

उल्लिखित विवेचन से भी यद्यपि डा0 ताहिरुल क़ादरी साहब के ज्ञान भंडार का पता चल जाता है फिर भी यह सुनकर तो हमें बड़ी ही हैरत हुई कि आदर्णीय डा0 साहब " अरूस" को निरंतर " उरूस" ही पढ़ते रहे यद्यपि इसकी ऐन पर पेश नहीं ज़बर है।

शफ़ाअत का मसला अपनी जगह सही है निश्चय ही नबी करीम सल्ल0, औलिया किराम और भले व नेक लोग अल्लाह की बारगाह में शफ़ाअत करेंगे लेकिन एक तो शफ़ाअत केवल वही करेंगे जो अल्लाह के ख़ास प्रिय बन्दे होंगे और शफ़ाअत भी उन्हीं लोगों की बाबत कर सकेंगे जिनके लिए अल्लाह इजाज़त देगा न कि हरेक शफ़ाअत कर सकेगा और न हरेक के लिए शफ़ाअत हो सकेगी।

इसलिए यह कहना सही नहीं है कि जिन बुज़ुर्गों के उर्स मनाए

Www.IslamicBooks.Website

जा रहे हैं ये सब सिफ़ारिश करने के पद पर असीन होंगे। न यह दावा ही सही है कि जो उनके उर्सों में शरीक होंगे ये उनकी सिफ़ारिश करेंगे। ये दोनों दावे बेबुनियाद और खोखले हैं और इनका उद्देश्य केवल उर्सों की शोभा में वृद्धि करके सांसारिक धन दौलत व हितों की प्राप्ती है। जिनके उर्स मनाएं जाते हैं वे अल्लाह की बारगाह में मुक़र्रब हैं भी या नहीं? इसका पता केवल अल्लाह ही को है। इसी तरह उर्स में भाग लेने वाले शिर्क व बिदअत करने वाले हैं। इनके बारे में तो नबी करीम सल्ल0 तक को रोक दिया जाएगा और उनसे कह दिया जाएगा; "ऐ पैग़म्बर! आपको मालूम नहीं;

इन्होने आपके दीन में क्या चीज़ें पैदा कर ली थीं।" यह सुनकर नबी सल्ल0 फ़रमांएगे– दूरी हो दूरी हो उनके लिए जिन्होंने मेरे बाद दीन को बदल दिया।" (सही बुख़ारी 5–2406)

जब बिदअत करने वालों को हौज़े कौसर तक नबी सल्ल0 के पास जाने से रोक दिया जाएगा और नबी सल्ल0 की जानकारी में आ जाने के बाद आप स्वयं भी उनको धुतकार देंगे तो जो लोग क़ब्र परस्ती और मुर्दा परस्ती की सूरत में शिर्क कर रहे हैं उनके बारे में सिफ़ारिश करने की इजाज़त भला किसको मिल सकती है? अल्लाह ने तो शिर्क के बारे में पहले ही फ़रमा दिया और अपने इस समपूर्ण फ़ैसले का ऐलान कुरआन में कर दिया है–

"अल्लाह तआला शिर्क को माफ़ नहीं फ़रमाएगा।"

(निसा– 48)

" मुशिरक पर अल्लाह ने जन्नत हराम कर दी है उसका ठिकाना जहन्नम है और मुश्रिकों का कोई मददगार नहीं होगा"

माइदा–72)

Www.IslamicBooks.Website

क्या हर क़ब्र में नबी सल्ल0 हाज़िर हैं?

क़ब्र में नबी करीम सल्ल0 के बारे में सवाल होगा– " तुम्हारे बीच जो आदमी रसूल बनाकर भेजा गया था उसके बारे में क्या राय है?" मोमिन आदमी इस सवाल के जवाब में कहेगा कि वह अल्लाह के रसूल हैं। नबी सल्ल0 ने आयते कुरआनी युसब्बितुल्लाहु ल्लज़ी न आमन बिल क़वलिस्साबिति की टीका में यही बात बयान की है कि अल्लाह तआला मोमिन को क़ब्र में सही जवाब देने का सौभाग्य प्रदान करेगा जैसा कि इससे पहले भी यह बताया जा चुका है।

लेकिन डा0 ताहिरुल क़ादरी ने इस बात के साथ यहां भी मा हाज़र्रजुलि में शब्द हाजा, से विवेचन करते हुए अपनी यह पच्चर लगायी है कि हर क़ब्र में नबी सल्ल हाज़िर होते हैं और मोमिन वहां रसूलुल्लाह के दीदार का शर्फ़ हासिल करता है। यद्यपि " हाज़ा" कभी कभी ज़ेहन में मौजूद चीज़ के लिए भी इस्तेमाल होता है क्योंकि ज़ेहन में मौजूद चीज़ की हैसियत भी इस तरह होती है मानो वह सामने मौजूद है। नबी सल्ल0 की शोहरत तो स्पष्ट करने की मोहताज़ ही नहीं और इसी तरह हर मुसलमान के ज़ेहन में आपका व्यक्तित्व मौजूद होता है। इस हिसाब से हदीस में " हाज़ा" का इस्तेमाल बिल्कुल इसी उसूल के अनुसार है। यह बात नहीं कि हर क़ब्र में आप स्वयं तशरीफ़ फ़रमा होते हैं। यदि यह बात होती तो मोमिन के जवाब के शब्द ये होते कि " हां ये अल्लाह के रसूल हैं।" लेकिन आप हदीस की किताबें देख लीजिए कि मोमिन जवाब में ये शब्द नहीं कहता बल्कि वह कहता है हुवा रसूलुल्लाह वे अल्लाह के रसूल हैं।

सही बुख़ारी में दो जगह यह रिवायत मौजूद है दोनों जगह मोमिन आपके लिए ग़ायब का कलिमा ही को इस्तेमाल करता है।

Www.IslamicBooks.Website

सवाल होगा– मा कुन्ता तकूलू फ़ी हाज़र्रजुलि मुहम्मदिन (तू उस आदमी (अर्थात मुहम्मद सल्ल0) के बारे में क्या कहा करता था? यहां सवाल में भी रजुलि के साथ "मुहम्मद" की व्याख्या ही मौजूद है जवाब में मोमिन कहेगा अशहदु अन्नहु अब्दुल्लाहि व रसूलुहु (मै गवाही देता हूं कि वे अल्लाह के बन्दे और उसके रसूल हैं)

(सही बुख़ारी 1– 178)

इसका और स्पष्टीकरण नबी सल्ल0 के कार्यकाल की उस घटना से हो जाता है कि एक औरत मस्जिद की सफ़ाई किया करती थी। उसका देहान्त हो गया तो सहाबा ने रसूले अकरम सल्ल0 को ख़बर दिए बिना उसे दफ़ना दिया। नबी करीम सल्ल0 ने एक बार पूछा कि उसको क्या हुआ?

तो आपको उसकी मौत की ख़बर दी गयी। आपने फ़रमाया– तुमने मुझे क्यों नहीं बताया? सहाबा ने कहा– वह कौन सी आधिक महत्व वाली थी? आपने फ़रमाया मुझे उसकी क़ब्र बताओ। आप सहाबा के साथ उसकी क़ब्र पर आए और उसके लिए दुआ की या नमाज़ पढ़ी। हदीस के शब्दों में है– " फ़ सल्ला अलैहि" जिसके दोनों मफ़हूम हो सकते हैं। दुआ के भी और नमाज़ पढ़ने के भी।

(सही बुख़ारी 1–178)

इसके अलावा सही बुख़ारी में दोनों शब्द मौजूद हैं "झाड़ू देने वाला मर्द था या औरत थी? बुख़ारी में मर्द या औरत– के शब्द हैं निश्चित नहीं है अलबत्ता हदीस की दूसरी किताबों में इसे औरत ही बताया गया है।

यदि नबी करीम सल्ल0 हर क़ब्र में मौजूद होते तो साफ़ सी बात है कि आप इस औरत की क़ब्र में हाज़िर होते और आपको मालूम हो जाता कि यह तो वही औरत है जो मेरी मस्जिद की

Www.IslamicBooks.Website

सफ़ाई किया करती थी। आपको सहाबा से पूछने की ज़रूरत ही न पड़ती। इस हदीस से यह बात स्पष्ट हो जाती है कि क़ब्र में जब आपके बारे में सवाल होता है तो आप या आपकी तस्वीर वहां मौजूद नहीं होती है।

प्रो0 ताहिरुल क़ादरी साहब ने अपनी तक़रीर के प्रारंभ में बड़े धड़ल्ले से दावा तो यह किया था कि मैं कुरआन व हदीस से उर्स साबित करूंगा क्योंकि ये (अहले हदीस) कुरआन व हदीस के मानने का बड़ा दावा करते हैं और कहा था कि हमें मालूम है कि यह केवल दावा ही दावा है वर्ना कुरआन व हदीस को ये लोग मानते नहीं हैं फिर हमें चाहिए कि उनके दावे की रोशनी में उन्हें कुरआन व हदीस की मार तो दें।

लेकिन डा0 साहब की प्रस्तुत की गयी पिछली दलीलों से (जिनकी असल हक़ीक़त हम स्पष्ट कर आए हैं) यह हक़ीक़त बे नक़ाब होकर सामने आ जाती है कि ये लोग अपने ख़ास हलक़ों में बैठकर कुरआन व हदीस के नाम से सीधे सादे लोगों को गुमराह तो कर सकते हैं लेकिन अहले हदीस को कुरआन की मार नहीं मार सकते। क्योंकि कुरआन व हदीस तो शिर्क और बिदअत का खंडन करते हैं न कि शिर्क व बिदअत की पुष्टि। फिर कुरआन व हदीस से उन अक़ीदों व आमाल को किस तरह साबित किया जा सकता है जो शिर्क व बिदअत पर आधारित है? इस लिए डा0 साहब की सारी तक़रीर ज्ञान की श्रेष्ठता और बड़े बड़े दावे के बावजूद...

क्या बने बात जहां बात बनाए न बने

का मात्र चित्रण ही है। डा0 साहब अपने दावे के स्वीकरण में एक दलील भी कुरआन व हदीस से प्रस्तुत नहीं कर सके और न आगे भविष्य में ही कर सकेंगे।

Www.IslamicBooks.Website

(साप्ताहिक " अलएतिसाम"– 18 अक्टूबर 1991)

उर्स की हक़ीक़त

आइए अब हम बताते हैं कि उर्स की असल हक़ीक़त क्या है? इसमें तो कोई शक नहीं कि उर्स का यह तरीक़ा जो हिन्द व पाक के बरेलवी हलक़ों में प्रचलित है सहाबा, तबाअ ताबअीन और उसके कई सदियों बाद तक के दौर तक इस्लामी समाज में इसका वजूद नहीं मिलता। सदियों बाद जब मुसलमान असल इस्लाम से परिचित हो गए और मुश्रिक क़ौमों से उनका मेल जोल हो गया तो उनके साथ घुलने मिलने से इस्लाम से बे ख़बर मुसलमानों के अन्दर कई मुश्रिकाना अक़ीदे और कार्य आ गए। इतिहास के विभिन्न युगों और दुनिया में आबाद लोगों में शिर्क की भिन्न भिन्न शकलें और धारणाएं प्रचालित रही हैं। एक धारणा मुश्रिक कौमों में यह रही है कि कायनात को बनाने वाले ईश्वर और उसकी सुष्टि के बीच मुहब्बत की स्थिति इस तरह है जिस प्रकार एक मां और उसकी संतान के बीच मुहब्बत होती है। इस धारणा के अन्तर्गत कायनात के पैदा करने वाले की द्योतक देवियां ठहरायी गयीं और विभिन्न देवियों को पूजा जाता रहा जैसे आज भी हिन्दुस्तान में दुर्गा देवी पार्वती देवी, सरस्वती देवी और लक्षमी देवी की पूजा होती है।

एक धारणा यह रही कि अल्लाह और मनुष्यों के बीच मुहब्बत का संबंध ऐसा है जैसे बाप बेटे, के बीच होता है। इस धारणा के अन्तर्गत अल्लाह के नेक व भले बन्दों को अल्लाह का बेटा ठहरा दिया गया और फिर उनको खुदाई अख्तियारात वाला बताया गया और उनको देवता के दर्जे पर बैठा दिया गया और उनकी पूजा पाठ आरंभ कर दी गयी।

एक तीसरी धारणा यह रही कि अल्लाह और मनुष्यों के बीच

Www.IslamicBooks.Website

इस प्रकार का रिश्ता व मुहब्बत है जिस प्रकार दुल्हा और दुल्हन या पति के बीच होता है। इस धारणा के अन्तर्गत कुंवारी औरतों की उपासना स्थलों में समर्पित किया जाने लगा। वे सारी उम्र विवाह नहीं करती। जिस प्रकार हिन्दुओं के मन्दिरों में देवदासियां और गिरजों में ईसाई ननें होती हैं। इस कुंवारपने ने उन्हें क्रमशः अल्लाह को प्रेमिकाएं या पत्नियां बना दिया और इस तरह उनको भी खुदाई पवित्रता और ईश्वरत्व के गुणों वाला समझा जाने लगा।

यही तीसरी धारणा जाहिल मुसलमानों में आयी और मलंगों का एक वर्ग वजूद में आ गया जो औरतों की तरह रंग बिरंग के कपड़े पहनता है। हाथों और पांव में कड़े और चूड़ियां पहने रहता है। औरतों की तरह नाच गाकर अपने पति अर्थात अल्लाह को मनाता है। इसी धारणा ने और आगे फैलते फैलते बुजुर्गों के यौमे वफ़ात को यौमे उर्स (शादी का दिन) या यौमे विसाले यार बना दिया अर्थात वफ़ात पाकर ये बुजुर्ग अपने ख्वाजा (अल्लाह मियां) की हरम सरा में पहुंच गए। इस हिसाब से यह उनकी शादी का दिन है यार से विसाल (मुलाक़ात) का दिन है। इसीलिए बुजुर्गों के लिए इस हलक़े में वफ़ात शब्द अत्यन्त अप्रिय समझा जाता है और वफ़ात को विसाल का नाम दिया जाता है। इसी लिए इनकी वफ़ात के दिन उर्स (शादी) के नाम से वह सब किया जाता है शादी के अवसर पर किया जाता है। क़ब्र को गुस्ल दिया जाता है, रेशमी चादरें उस पर डाली जाती हैं यहां तक कि मेहंदी की रस्म भी पूरी की जाती है फिर तबर्रुक (प्रसाद) के नाम पर मिठाई बांटी जाती है और लंगर बांटा जाता है। सलामी के तौर पर नज़राने चढ़ाए जाते हैं मज़ारों के बोसे लिए जाते हैं और फूलों की हारों की व्यवस्था होती है।

यह है उर्स की वह हक़ीक़त जिसका इस्लाम से दूर का भी कोई ताल्लुक़ नहीं।

Www.IslamicBooks.Website

(9)

क़ब्र परस्ती के नाम पर मुर्दों की हडडियां बेचने का कारोबार

बरेलवी लोगों में मुर्दा परस्ती क़ब्र परस्ती और अन्य इसी प्रकार के मुश्रिकाना काम जो प्रचलित हैं, हम अनेक बार अपने कालमों में यह विनती कर चुके हैं कि ये उसी गुलू (हद से बढ़ जाने) व अक़ीदत में सीमा पार करने का नतीजा है जो उनके विद्वानों ने आम लोगों के अन्दर बुजुर्गों और औलिया अल्लाह की मुहब्बत के नाम पर पैदा कर दिया है और जो मुहब्बत से बढ़कर पूजा की हद तक पहुंच गया है।

पिछले दिनों एक बुजुर्ग अलाउद्दीन गीलानी का देहान्त हुआ जिनके बारे में कहा जाता है कि वे सैयद अब्दुल क़ादिर जीलानी के परिवार से थे तो प्रो० ताहिरुल क़ादरी साहब ने एक तो गीलानी साहब को अपने इदारा "मिन्हाजुल कुरआन के सेहन में दफ़न किया और दूसरे उनकी वलायत का ढिंडोरा पीटा ताकि उनकी यह क़ब्र भी अन्य कुछ दूसरे बुजुर्गों की तरह लोगों की निगाहों का केन्द्र बन जाए और फिर हाजात तलब कराने, मुश्किलें हल कराने के लिए लोग धड़ा धड़ आएं और यूं बुजुर्गों की हडडियों को बेचने का कारोबार उनकी मुसतक़िल आमदनी का साधन बन जाए।

यह बात यदि हम लिखते तो कहा जाता कि अहले हदीस तो ये बातें करते और लिखते ही रहते हैं मगर ताहिरुल क़ादरी के पीर गीलानी साहब के बारे में ये बातें स्वयं बरेलवी मसलक के एक

Www.IslamicBooks.Website

प्रसिद्ध विद्वान जनाब मुफ़्ती गुलाम सर्वर क़ादरी ने अपनी मासिक पत्रिका "अल बर्र" के सम्पादकीय में लिखी हैं। हम यहां उस सम्पादकीय का सारांश प्रस्तुत कर रहे हैं उसे पढ़िए। इसके बाद इस बारे में हम अपनी राय प्रस्तुत करेंगे–

मासिक अल बर्र के सम्पादकीय का सारांश

जनाब ताहिर अलाउद्दीन रह0 का देहान्त बेशक हमारे लिए एक दुखद घटना है उनसे सैयदना ग़ौस आज़म की सन्तान होने के ताल्लुक़ से मुहब्बत व अक़ीदत थी मगर उन्होंने ताहिरुल क़ादरी ऐसे गुमराह व्यक्ति की जान बूझ कर सरपरस्ती करके हमारी अक़ीदत को ठेस पहुंचाई थी। हमें इसका बहुत ही दुख हुआ था जब मैं, मौलाना अबु दाऊद मुहम्मद सादिक साहब और हज़रत जमील अहमद के बेटे मियां सईद अहमद, हम तीनों हज़रत सैयद ताहिर अलाउद्दीन की सेवा में कोइटा पहुंचे और ताहिरुल क़ादरी की गुमराही के बारे में सारे सबूत पेश किए।

लेकिन अफ़सोस कि जनाब सैयद ताहिर अलाउद्दीन मरहूम ने इसके बावजूद उस गुमराह व्यक्ति को हिदायत देने और कलिम ए हक़ कहने की बजाए बराबर सीने से लगाए रखा और बराबर उसकी सर परस्ती फ़रमाते रहे। फिर उसने अपने मोहसिन मियां नवाज़ शरीफ़ की नमक हरामी व एहसानों की हत्या ऐसी ज़लील हरकत की। उसके बाद भी हज़रत ने उसकी ओर कोई ध्यान न दिया बल्कि आखिर तक उसे सीने से लगाए रखा। जिसपर हमें आज तक अफ़सोस है।

हज़रत साहब का यह रवैया उनकी इस निसबत से किसी तरह भी समानता नहीं रखता था जो उन्हें हुज़ूर ग़ौस पाक से हासिल थी इसलिए ये बातें हर इल्म वाले के लिए अजीब होंगी जो उनकी

Www.IslamicBooks.Website

प्रशंसा में कही जा रही हैं कि आप नायब ग़ौसे आज़म और वारिसे मीरास वलायत थे क्योंकि नायब ग़ौसे आज़म कभी भी हक़ से आंखें मूंद नहीं सकते थे और न ही हक़ बात से विमुख हो सकते थे।

लेकिन सैयदना ताहिर अलाउद्दीन का सम्मान अपनी जगह है, हम उनके मरने के बाद उनका अब भी सम्मान करते हैं और करते रहेंगे लेकिन उनकी शान में जो नाजायज़ बढ़ा चढ़ा कर बातें कही जा रही हैं उनको बेजा प्रशांसा ही कहेंगे बल्कि ये सारी बातें नाजायज़ गुलू के खाने में आती हैं जिनकी इस्लाम अनुमति नहीं देता। यह सब ताहिरुल क़ादरी साहब का प्रोपगंडा है जो अपनी दुकान चमकाने के लिए करता रहा है और कर रहा है ताकि इसे दूसरा बग़दाद कहलवाए। फिर सीधे सादे मुसलमान वहां नज़्र व नियाज़ और चढ़ावे आदि ले जाया करें और यूं मरहूम की क़ब्र ताहिरुल क़ादरी साहब की असीमित आय का साधन बन जाए जिससे वे अपनी राजनीति की दुकान को और अधिक बढ़ावा दे सकें और इसी के साथ एक आध्यात्मिक हसती भी समझी जाए जबकि हज़रत के दफ़न किए जाने का हक़दार शहर कोइटा या करांची था जहां उन्होंने अपनी ज़िन्दगी गुज़ारी। लाहौर तो वे कभी कभी सालों बाद जाते थे मगर वहां दफ़न होने से ताहिरुल क़ादरी की दुकान न बन सकती थी। हमारे विचार में पीर साहब के बेटों और मुरीदों ने ताहिरुल क़ादरी को उन्हे यहां दफ़नाने की इजाज़त देकर ग़लती की है।

ज्ञान का दर्जा ताल्लुक के दर्जे से ऊंचा है

हम यहां भी यह कहना आवश्यक समझते हैं कि नसब की महानता अपनी जगह मगर ज्ञान की महानता उससे कहीं उच्च है। सैयद ताहिर अलाउद्दीन से हटकर हम सामान्य बात करते हैं कि

Www.IslamicBooks.Website

हमारे सुन्नी भाइयों में जो वंशवाद का सिलसिला नाजायज़ गुलू की हद तक पाया जाता है वह बड़ा दुखद है जिसकी शरीअत में कोई गुंजाइश नहीं। सैयद (औलादे नबी सल्ल0 के सिलसिले से) होना बशर्ते कि अक़ीदा व अमल सही हो निश्चय ही सम्मान योग्य है मगर इसके मुकाबले में ज्ञान की जो श्रेष्ठता और महानता है वह ताल्लुक़ की श्रेष्ठता व महानता से कहीं बढ़ कर है। मगर हमारे सुन्नी भाई उस का तो अत्यन्त सम्मान करेंगे बल्कि नाजायज़ गुलू की हद तक यद्यपि वह सैयद दाढ़ी मुंडा या दाढ़ी कतरा (शरीअत की सीमा अर्थात) चार अंगुल से कम रखने वाला) हो लेकिन सुन्नी भाई उसे पीर साहब का साहब जादा और सैयद ज़ादा और औलादे ग़ौस आज़म होने के कारण बहुत बड़ा दर्जा देते हैं।

यद्यपि ऐसा व्यक्ति चाहे वह सैयद हो, चाहे गीलानी हो, या बुख़ारी हो या किसी बड़ी से बड़ी गद्दी का वारिस हो या उसकी सन्तान हो शरीअत में अवज्ञाकारी व फ़ासिक़ व फ़ाजिर है और उस पर अल्लाह और उसके रसूल सल्ल0 नाराज़ हैं। ऐसे व्यक्ति को ग़ौस व कुतुब या वली अल्लाह कहना सुन्नी भाइयों के अल्पज्ञान या नादानी के सिवा कुछ नहीं।

फिर एक सैयद है और नेक भला और शरीअत का पाबन्द भी है मगर दीन का ज्ञानी नहीं। उसके मुक़ाबले में एक ग़ैर सैयद है मगर वह दीन का विद्वान है तो बेशक उस ग़ैर सैयद विद्वान का दर्जा उस ग़ैर आलिम सैयद से कहीं उच्च है। या एक सैयद है और कुछ न कुछ दीन का ज्ञान भी रखता है मगर उसके मुकाबले में एक ग़ैर सैयद है मगर वह दीन का ज्ञान उससे अधिक रखता है तो इससे ज़्यादा ज्ञान रखने वाले ग़ैर सैयद का दर्जा उस कम ज्ञान रखने वाले सैयद से कहीं ज़्यादा बढ़कर है।

Www.IslamicBooks.Website

(मासिक " अलबर्र" लाहौर– अगस्त 1991)

सबसे पहले तो हम आदर्णीय मुफ़्ती गुलाम सर्वर क़ादरी को इस साहस पूर्ण सत्य वचन पर मुबारक बाद देते हैं कि एक तो उन्होंने अपने हलक़े के उस गुलू को मान लिया जो सच्चे या झूठे बुजुर्गों के लिए उनके यहां पाया जाता है।

दूसरे ताहिरुल क़ादरी साहब के उस "बुजुर्ग" की जिसको वारिसे मीरासे वलायत" कहा जा रहा है यह कह कर पोल खोल दी है कि वह वली किस तरह हो सकते हैं जब कि उन्होंने सत्य से आंखें मूंदी और हक़ बात कहने से विमुखता बरती।

तीसरे उन्होंने अपने सीधे सादे लोगों की इस कमज़ोरी को स्वीकारा कि उनके अन्दर वंशवाद और उसके आधार पर नाजायज़ गुलू और बढ़ा चढ़ा कर पेश करने की बीमारी पायी जाती है यद्यपि नसब के मुक़ाबले में इल्म व अमल का महत्व अधिक है बल्कि ज्ञान एवं कर्म के बिना नसब की कोई हैसियत ही नहीं।

मुफ़्ती साहब की ये तीनों बातें अपनी जगह बिल्कुल सही हैं और इसको प्रकट करके उन्होंने वास्तव में साफ़ बात कहने का एक अच्छा प्रदर्शन किया है लेकिन इसके साथ साथ हम उनसे यह कहेंगे कि ये कमजोरियां या अक़ीदा व अमल की ये ख़राबियां केवल ताहिरुल क़ादरी के पीर जनाब गीलानी या उनके हलक़ा के ही अन्दर नहीं पायी जाती हैं बल्कि सारे बरेलवी हलकों में ये चीज़ें मौजूद हैं आप अपने इस सत्य वचन का दाएरा तनिक और बढ़ाएं और पंजाबी मुहावरे के अनुसार अपनी मन्जी (चारपाई) के नीचे भी डांग (लाठी या सूटी) फेर लें।

बरेलवी हलक़ों में यह सज्जादा नशीनी का सिलसिला क्या है? यह ज्ञान एवं कर्म के बिना बंशवाद और उसमें नाजायज़ गुलू ही की

Www.IslamicBooks.Website

एक प्रशाखा है। हर गद्दी का गद्दी नशीन चाहे कितना ही बे अमल या बद अमल हो, उस गद्दी की निसबत से बरेलवी हलक़ों में बड़ा सम्मानित समझा जाता है और उस गद्दी की बड़ी पूजा होती है। अपनी दुकानदारी को चमकाने या उस कारोबारे लात व मनात को बढ़ावा देने के लिए वारिस अपने पूर्वजों की वलायत व करामत का इसी तरह ढिंडोरा पीटते हैं जिस तरह आपके कथनानुसार ताहिरुल क़ादरी जैसा गुमराह व्यक्ति अलाउद्दीन गीलानी जैसे व्यक्ति के बारे में पीट रहा है।

जन सामान्य प्रापगंडे ही को हक़ीक़त समझ लेते हैं और हर पक्की कब्र या मजार को हाजात पूरी होने का केन्द्र या वसीला बना लेते हैं। ताहिरुल क़ादरी या उनके पीर के बारे में आपके द्वारा प्रस्तुत किए गए तथ्य माह व साल की गर्दिशों में गुम और अक़ीदत की बाढ़ में बह जाएंगे और यह क़ब्र, भी आपके द्वारा किए गए स्पष्टी करण के बावजूद हाजात को पूरा कराने का क़िब्ला बन जाएगी जिस तरह कि इससे पहले कई जाली बुजुर्गों की क़ब्रें केवल इसलिए इस कारोबार की दुकानें बनी हुई हैं कि वे ताहिरुल क़ादरी जैसे मुजावरों की आय का एक स्थाई ज़रिया और उनकी इज्ज़त व शोहरत व सम्मान का कारण हैं। मीनारे पाकिस्तान के ठीक सामने (बुडढे दरिया के पहलू में) बाबा छतरी वाले का मज़ार हमारी देखती आंखों आम लोगों के लिए ऐसा ही अडडा बना हुआ है वर्ना यह बाबा नमाज़, रोज़ा यहां तक कि पाकी व सफ़ाई जैसी चीज़ों से भी बेनियाज़ था। मरने के बाद यार लोगों ने इसका पक्का गुम्बद नुमा मज़ार बना दिया तो आज वही बाबा लोगों की हाजतें पूरी करने और मुश्किलें हल करने वाला बना हुआ है।

मीनारे पाकिस्तान से आगे जनरल बस स्टैंड की ओर जाते हुए

Www.IslamicBooks.Website

एक गुलाम हैदर साई का जगमगाता हुआ दरबार है उसे भी हमने देखा है कि होश व हवास से बेनियाज़ यह बाबा फटी पुरानी कमली लिए फुटपाथ पर पड़ा रहता था मरने के बाद उसकी भी पक्की क़ब्र बन गयी और उर्स का सिलसिला शुरू हो गया अतएव आज उसकी क़ब्र भी पूजा स्थल बनी हुई है।

ये दो उदाहरण नमूने के लिए दिए गए हैं वर्ना हक़ीक़त यह है कि देश के कोने कोने में यह सिलसिला मौजूद है जिसका जी चाहता है वह किसी नंग धड़ंग मलंग और होश व हवास से बेनियाज़ किसी भी व्यक्ति को दफ़नाकर उसकी पक्की क़ब्र बना देता है उसके आस पास रंग बिरंगी झंडियां लहराता है दो चार साल उर्स मनाता है और फिर उसका यह कारोबार चल निकलता है और नज़्र व नियाज़ का सिलसिला आरंभ हो जाता है। कितने ही " दरबार" हैं जो इसी तरह जाली हैं कितने ही पक्के मज़ार हैं जिनकी असल में कोई हैसियत नहीं और कितने ही आसताने हैं जो ताहिरुल क़ादरी जैसे लोगों ने अपनी दुकानदारी के लिए कायम किए हुए हैं।

आखिर ऐसा क्यों है? ये जाली क़ब्रें और आसताने क्यों कारोबारी अडडे बने हुए हैं? और वंशवाद, क़ब्र परस्ती का यह कारोबार क्यों दिन ब दिन तरक्क़ी पर है? इसका कारण केवल और केवल यह है कि बरेलवी उलमा ने औलिया अल्लाह की मुहब्बत के नाम पर पक्के मज़ारों और क़ब्रों को लोगों के लिए पूजा स्थल बना दिया है जिसका नतीजा यह है कि हर व्यक्ति जो दुनिया दारी का यह कारोबार चमकाना चाहता है वह किसी न किसी क़ब्र पर "वलायत" का बोर्ड लगा कर बैठ जाता है या किसी क़ब्र वाले की वलायत का ढिंडोरा पीटता है और लोगों से नज़राने वसूल करना आरंभ कर देता है और इस तरह देखते ही देखते ऐसे लोग भी

Www.IslamicBooks.Website

वारिस मीरासे वलायत'' बन जाते हैं जो नमाज़ रोज़ा तक से अवगत नहीं थे और वारिसे मीरासे बलायत का मतलब उनके निकट यह होता है कि मरने के बाद उसकी मुलाक़ात अल्लाह से हो गयी है और अब उसे अल्लाह की ओर से कायनात में सब कुछ करने की ताक़त व अधिकार मिल गया है। ज़िन्दगी में वह केवल नाम मात्र को एक विवश बन्दा था और मरने के बाद वह खुदाई अख्तियारात का मालिक बन गया है।

जब मुर्दा बुजुर्गों के बारे में कायनात में कार्य करने का यह अक़ीदा गढ़ लिया गया तो फिर जिस मुर्दा को चाहा बुजुर्ग बना कर उसे खुदाई अख्तियारों वाला बना दिया गया और यूं उनके नाम की नज़्र व नियाज़ें दी जाती हैं। क़ब्रों पर ग़िलाफ़ चढ़ाया जाता है उनकी क़ब्र की परिक्रमा की जाती है, उनकी क़ब्रों पर माथा टेका जाता है, अक़ीदत व मुहब्बत से क़ब्रों को चूमा जाता है और उनसे मदद ली जाती है और अब जनाब ताहिरुल क़ादरी साहब के पीर अलाउद्दीन गीलानी की क़ब्र के साथ भी मुफ़्ती गुलाम सर्वर के कथनानुसार यही सब होगा। यह भी एक बड़ा मज़ार बनेगा क्योंकि ताहिरुल क़ादरी जैसा व्यक्ति इसका प्रोपगंडा करने वाला है और उससे उसका राजनीतिक व सांसारिक हित भी जुड़ा है। उनके बारे में भी गुलू और अक़ीदत में बढ़ चढ़ कर कही से कहीं पहुंचाने का वह प्रदर्शन किया जाएगा जो इस मसलक के मानने वालों की एक प्रमुखता बन चुकी है और जिसे मुफ़्ती क़ादरी साहब नाजायज़ फ़रमा रहे हैं।

लेकिन मुफ़्ती साहब यदि अपनी बात में कोई वज़न पैदा करना चाहते हैं तो वह केवल ताहिरुल क़ादरी साहब के पीर ही की पोल न खोलें और उन्हें ही '' वलायत'' से वंचित न समझें बल्कि

Www.IslamicBooks.Website

इस तरह के सारे लोगों की पोल खोलें और अपने लोगों को भी गुलू, वंशवाद, क़ब्र परस्ती और मुर्दा परस्ती की कहीक़त से सूचित करें और अपने लोगों को तमाम दरबारों, आसतानों और दरगाहों से हटाकर केवल एक अल्लाह का बन्दा बनाएं वर्ना इसके बिना यह समझा जाएगा कि मुफ़्ती साहब का केवल एक "पीर" के बारे में इस राय का इज़हार जो उन्होंने अपने पर्चे में किया है कारोबारी दुश्मनी का नतीजा है।

हमें उम्मीद है कि मुफ़्ती गुलाम सरवर क़ादरी साहब अपनी साफ़ साफ़ बातें कहने की विशेषता को व्यापक करते हुए अपने मसलक से जुड़े लोगों को उस गुमराही से बचाने की अवश्य कोशिश करेंगे जिसमें मुहब्बत व अक़ीदत में गुलू करने के नतीजे का शिकार हो गए हैं या कर दिए गए हैं। यूं वे अल्लाह के निकट भी सुर्ख रू होंगे और अल्लाह के बन्दों के निकट कारोबारी दुशमनी और आपसी दूष के आरोप से भी बरी।

(साप्ताहिक " अल एतिसाम" 16 अगस्त 1991 ई0)

"बरेलवी" शब्द पर आपत्ति

मुफ़्ती गुलाम सर्वर क़ादरी साहब ने हमारे इस लेख पर अपनी पत्रिका मासिक " अलबर्र" अंक सितम्बर में कुछ स्पष्टीकरण प्रस्तुत किए हैं। इनपर हम भी कुछ विचार प्रकट करना चाहते हैं।

1– सबसे पहले सर्वर क़ादरी साहब ने इस बात पर आपत्ति की है कि उनको बरेलवी क्यों कहा गया है जबकि वे न बरेली शहर के नागरिक हैं और न मौलाना अहमद रज़ा खां साहब से संबंधित किसी विशेष मसलक व अक़ीदे के पाबन्द। वे केवल अहले सुन्नत वल जमाअत हनफ़ी हैं।

इस सिलसिले में हमारी विनती यह है कि उन्हें " बरेलवी"

Www.IslamicBooks.Website

किसी बुरी नीयत से नहीं कहा गया बल्कि हमारे देश में हनफ़ियों के जो दो गिरोह हैं और जिनके बीच अक़ीदों एंव कर्मों मे बहुत भिन्नता है। उनके बीच अन्तर और भिन्नता के लिए "बरेलवी हनफ़ी" और " देवबन्दी हनफ़ी की परिभाषा सामान्य रूप से प्रख्यात व प्रचलित है बल्कि ये दोनों गिरोह अपनी अपनी पहचान के लिए बरेलवी और देवबन्दी के शब्द स्वंय भी इस्तेमाल करते हैं। आप बरेलवियों की मस्जिदों के बाहर साइन बोर्डों को देख लें वहां " बरेलवी" का शब्द अवश्य मिलेगा।

जब एक दूसरे की पहचान और उनके बीच भेद व अन्तर के लिए ये परिभाषाएं प्रमाण का दर्जा हासिल कर चुकी हैं तो अब इन पर आपत्ति को किसी तरह भी अनुचित नहीं ठहराया जा सकता।

सर्वर साहब फ़रमाते हैं कि वे अहले सुन्नत वल जमाअत हनफ़ी हैं लेकिन यही दावा देवबन्दी उलमा भी करते हैं। अब यदि वे भी आग्रह करें कि उन्हें भी " अहले सुन्नत वल जमाअत हनफ़ी ही लिखा जाए देवबन्दी की वृद्धि न की जाए जब कि सत्य यह है कि दोनों हनफ़ियों में अक़ीदों एवं कर्मों का बहुत अधिक अन्तर है तो आखिर इन दोनों के बीच किस प्रकार भेद किया जाएगा? यदि मुफ़्ती साहब यह फ़रमाएं कि भेद करने की ज़रूरत ही क्या है? दोनों को हनफ़ी लिखा जाए तो इस प्रस्ताव पर अमल करते हुए सबसे पहले स्वयं उनको अपने मसलक की मस्जिदों से बरेलवी का शब्द हटाना चाहिए। इसके बाद यह परिभाषा कोई भी उनके लिए इस्तेमाल नहीं करेगा।

क्या बरेलवी अहले सुन्नत हैं?

2–एक दिलचस्प बात या प्रस्ताव उन्होंने यह प्रस्तुत किया है–

"हमें केवल अहले सुन्नत और केवल अहले सुन्नत ही कहा

Www.IslamicBooks.Website

जाए और जब विभिन्न मतों व विचारों के नाम लिए जाएं तो यूं लिए जाएं अहले सुन्नत, देवबन्दी, अहले हदीस और शीआ (पृष्ठ–63) सुबहान्नल्लाह क्या अच्छा प्रस्ताव है जिसपर किसी और ने तो कया अमल करना है स्वयं सर्वर साहब अमल नहीं कर सकते। अतएव इस से पहले स्वयं अपने बारे में यह लिख आए हैं कि "मैं अहले सुन्नत वल जमाअत हनफ़ी हूं।" (पृ0–61)

एक ओर यह आग्रह कि उन्हें "केवल और केवल अहले सुन्नत ही कहा जाए और स्वयं अपने परिचय में "हनफ़ी लिखना ज़रूरी समझें। इसके बाद सर्वर साहब के दावे और आग्रह, में क्या वजन बाक़ी रह जाता है।

फिर इसका थोड़ा और विश्लेषण कीजिए कि वे केवल " अहले सुन्नत हैं" फ़िलहाल "बरेलवी" और देवबन्दी" और अहले हदीस को छोड़ दीजिए। हम पूछते हैं कि मालिकी, हम्बली और शाफ़ओ कया हैं? क्या वे अहले सुन्नत से बाहर हैं? यदि बाहर हैं तो फिर वे क्या है? और यदि वे अहले सुन्नत के अन्दर हैं और इसके साथ आपका यह आग्रह भी है कि अहले सुन्नत केवल हमें ही कहा जाए। तो फिर क्या आप एक साथ अहले सुन्नत के चारों मसलक वाले होंगे या किसी एक ही मसलक के? साफ़ सी बात है कि आप किसी एक ही मसलक वाले होंगे। आपका वह एक मसलक किस प्रकार ज़ाहिर होगा? क्योंकि मात्र अहले सुन्नत कहने से तो पता नहीं चलेगा कि आप हनफ़ी हैं या शाफ़ओ, मालिकी हैं या हम्बली? आप किस तरह अपनी पहचान करांएगे? निश्चय ही आपको अपनी पहचान के लिए हनफ़ी लिखना या बोलना पड़ेगा। जब यह स्थिति है तो फिर आपको आपके प्रस्ताव के अनुसार केवल अहले सुन्नत किस तरह कहा जाएगा?

Www.IslamicBooks.Website

अब आइए हिन्द व पाक की विशेष परिस्थिति की ओर, यहां दो बड़े मसलक हैं अहले सुन्नत और शिआ। शिओं में भी कई सम्प्रदाय हैं इमामिया, असना अशरिया, नूर बख़शिया अदि। मगर सबको शिआ ही कहा जाता है। इसी प्रकार अहले सुन्नत में भी कई सम्प्रदाय हैं। हनफ़ियों के दो गिरोह हैं और तीसरे अहले हदीस हैं।

शिओं के मुक़ाबले में इन सबको अहले सुन्नत वल जमाअत कहा जाता है क्योंकि ये सब सुन्नत की हुज्जत और सहाबा (रज़ि0) की महानता और तरीक़े को मानते हैं।

सर्वर साहब की इच्छा और आग्रह है कि अहले सुन्नत केवल उन्हीं को कहा जाए जबकि तथ्य यह है कि शिओं के मुक़ाबले में सब ही अहले सुन्नत हैं और सबको ही अहले सुन्नत कहा जाता है। इस रोशनी में हर व्यक्ति अन्दाज़ा कर सकता है कि सर्वर साहब की इच्छा और आग्रह में कितनी बुद्धिमता है? और क्या यह प्रस्ताव अमल योग्य भी है?

बरेलवी और मा अना अलैहि व असहाबी?

3– सर्वर साहब ने यह दावा भी किया है कि–

हम और मौलाना शाह अहमद रज़ा खां रह0 और हमारे अन्य उलमा जिस अक़ीदा व मसलक पर हैं वह सौ प्रतिशत ठीक ठीक वही है जो सल्फ़ सालिहीन (पूर्वजों) का है और जो नबी के फ़रमान– मा अना अलैहि व असहाबी का एक मात्र साक्षी है।

हमारा दावा है कि कोई अहले इल्म मौलाना शाह अहमद रज़ा रह0 का कोई अक़ीदा ऐसा नहीं बता सकता जो नबी सल्ल0 सहाबा के सल्फ़ सालिहीन के अक़ीदा व मसलक से भिन्न हों।

(मासिक अलबर्र– सितम्बर 1991 पृ0–62)

ये दो दावे हैं। हासिल दोनों का एक है कि बरेलवी मा अना

Www.IslamicBooks.Website

अलैहि व असहाबी के साक्षी हैं और मौलाना बरेलवी का कोई अक़ीदा ऐसा नहीं है जो सल्फ़ सालिहीन के अक़ीदा व मसलक से भिन्न हो इसलिए हमने भी इन दावों को एक जगह जमा कर दिया है। अब हम इन दावों की हक़ीक़त स्वयं उनके अक़ीदो एवं कर्मों की रोशनी में स्पष्ट करते हैं।

बरेलवी अक़ीदों और कर्मों के कुछ नमूने

मौलाना अहमद रज़ा खां बरेलवी और उनके मसलकी उलमा का अक़ीदा है कि अम्बिया और औलिया सभी ज़िन्दा हैं बल्कि सांसारिक जीवन से भी ज़्यादा वास्तविक जीवन उन्हें प्राप्त है। वे कायनात में हस्तक्षेप करते हैं लोगों की हाजतें पूरी करते हैं अल्लाह ने उन्हें भी अख्तियारात दिए हैं इसलिए अलौकिक तरीक़े से उनको मदद के लिए पुकारना जायज़ है अतएव उनके निकट " या अली मदद" " या रसूलुल्लाह मदद" जैसे मुश्रिकाना नारे जायज़ हैं।

2– बुज़ुर्गों की क़ब्रों पर उर्स मनाना, क़ब्रों को गुस्ल देना, क़ब्रों पर चादरें चढ़ाना, क़ब्रों की परिक्रमा करना, क़ब्रों को चूमना, उनके नाम की नज़्र व नियाज़ें देना और उनकी क़ब्रों पर खड़े होकर उनसे दुआएं करना आदि ये सारे काम जायज़ (बल्कि अत्यन्त ज़रूरी)हैं।

3–क़ब्रों को पक्का बनाना, उनपर कुब्बे और गुम्बद बनाना और उन पर चराग़ जलाना जायज़ है।

4– तीजा, सातवां, दसवां और चेहलम आदि रस्में जायज़ हैं।

5– हर जुमरात और हर महत्वपूर्ण अवसर पर रूहें घरों में आती हैं इसलिए इन अवसरों पर अच्छी अच्छी चीज़ें बांटनी चाहिए।

6– बे अमल और सारी उम्र इस्लामी फ़र्ज़ों (नमाज़ रोज़ा आदि) से ग़ाफ़िल मुर्दों की मग़फ़िरत के लिए हीलए इस्क़ात जायज़

Www.IslamicBooks.Website

है अर्थात एक व्यक्ति ने सारी उम्र नमाज़ नहीं पढ़ी या सालों साल नमाज़ से ग़ाफ़िल रहा तो इस नमाज़ छोड़ने के बदले एक सौ आठ मन अनाज सालाना के हिसाब से सदक़ा कर दिया जाए। अन्य छोड़े हुए फ़र्ज़ों का कफ़्फ़ारा इस स्वंय के गढ़े हुए हीले से अदा किया जा सकता है।

7– ईद मीलाद मनाना, चराग़ां (रोशनी)करना और जुलूस निकालना और इस अवसर पर गली कुचों को सजाना जैसे बे फ़ायदा कामों पर लाखों बल्कि करोड़ों रूपए खर्च कर डालना एक पसन्दीदा और नेकी का काम है।

8– नबी सल्ल0 का मुबारक नाम सुनकर दुरूद पढ़ने की बजाए केवल अंगूठा चूम लेना अज्र व सवाब का काम है।

9– क़ब्र पर (मुर्दे को दफ़नाने के बाद) अज़ान देना, फ़र्ज नमाज़ के सलाम फिर जाने के बाद ऊंची आवाज़ से लाइलाह इल्लल्लाह या अन्य ज़िक्र ऊंची आवाज़ में करना, अज़ान से पहले सलात व सलाम की वृद्धि और वह भी स्वयं के गढ़े हुए शब्दों में और इस प्रकार की दूसरी बिदअतें पर जो बरेलवी हनफ़ीयों में प्रचलित हैं।

10– ग़ैब का ज्ञान, हाज़िर नाज़िर और एक साथ अपने ज्ञान के हिसाब से हर जगह मौजूद होना या पहुंचना जैसे गुण जो अल्लाह के साथ खास हैं अम्बिया और औलिया भी उनके निकट इन गुणों से सुसज्जित हैं।

ये उदाहरण स्वरूप कुछ अक़ाइद व कर्म हैं जिन्हें बरेलवी लोगों के प्रमुख मसाइल का दर्जा हासिल है जिनपर यह पूरा सम्प्रदाय इस समय बड़ी सख़्ती से न केवल अमल कर रहा है बल्कि इनके उलमा की किताबों में भी इनका उल्लेख मौजूद है।

Www.IslamicBooks.Website

अब यदि सर्वर साहब अपने दावे में सच्चे हैं तो उनकी ज़िम्मेदारी है कि वे कुरआन करीम की स्पष्ट आयतों, सही व सहाबा[1] से निकट वाली हदीसों से उन तमाम उल्लिखित अक़ीदों एवं कर्मों का सबूत व जवाज़ प्रस्तुत करें। फिर निश्चय ही वे " मा अना अलैहि व असहाबी के साक्षी समझे जांएगे और वे अपनी इस इच्छा में भी सही होंगे कि उनका संबंध मौलाना अहमद रज़ा खां बरेलवी से न जोड़ा जाए लेकिन यदि वे ऐसा नहीं कर सकते (और हमें अल्लाह की कृपा व करम से पूरा विश्वास है कि वे कभी ऐसा नहीं कर सकेंगे) तो हम उनसे पूरी निष्ठा और भले की नीयत से कहेंगे कि वे शिर्क एवं बिदअत का यह रास्ता छोड़ दें और तौहीद व सुन्नत का सीधा रास्ता अख्तियार कर लें ताकि सर्वर साहब अपनी इच्छानुसार मा अना अलैहि व असहाबी के साक्षी ठहराए जा सकें।

1– यह इसलिए ज़रूरी है कि मौलाना अहमद रज़ा खां भी किसी अ प्रमाणिक हदीस से विवेचन करना जायज़ नहीं समझते थे अतएव लिखते हैं– कुछ ज़ाहिल बदमस्त नीम मुल्ला शहवत परस्त या झूठे सूफ़ी कि हदीसे सिहाह मरफूआ महकमा के मुक़ाबले में कुछ ज़ईफ़ क़िस्से या घटनाएं पेश करते हैं। उनको इतनी अ क़ल नहीं या जान कर बे अक़्ल बनते है कि सही के सामने ज़ईफ़, मुताअय्यन के आगे मुताहम्मल, महकम के सामने मुता शाबा छोड़ देना ज़रूरी है (अहकामे शरीअत 1–26) इसी तरह तिर्मिज़ी की तहसीन पर तसाहुल का एतेराफ़ और एक जगह पर इमाम अ ब्दुल्लाह बिन मुबारक का वह प्रसिद्ध कथन नक़ल करते हैं ल व ला अल असनाद लक़ाल फ़िद्दीन अन शाआ मा तुशाआ अर्थात यदि सनद कासिलसिला न होता तो फिर दीन में हर कोई जो चाहता कह देता।" (पृ0 31–75)

Www.IslamicBooks.Website

(10)

क़ब्रों में दफ़न बुजुर्ग और शाह वलीउल्लाह

मर्कजी ज़कात इन्तिज़ामिया इस्लामाबाद के आर्गन मासिक अज्ज़कात (अंक फ़रवरी 1983 ई0) में हज़रत शैख अब्दुल क़ादिर जीलानी की संक्षिप्त आत्म कथा और उनकी आध्यात्मिक श्रेष्ठता एवं दर्जो पर एक लेख संस्थान की ओर से प्रकाशित हुआ है।

लेकिन अफ़सोस है कि इस लेख में कुरआन व हदीस की स्पष्ट व्याख्याओं के विपरीत क़ब्रों में दफ़न औलिया अल्लाह के बारे में यह कहा गया है कि वे क़ब्रों में ज़िन्दों की तरह लोगों के काम आते हैं कायनात की व्यवस्था में दख़ल देते हैं और उनकी रूहों का लाभ उन लोगों को होता है जो उनकी क़ब्रों की ओर ध्यान देते हैं इसलिए मशाइख़ के "उर्सो" की स्थापना उनके " मज़ारों" की पाबन्दी से ज़ियारत (दर्शन)करना, उनकी रूहों के नाम से सदक़ा करना, उनके आसार व तबर्रुकात, उनकी सन्तानों उनके रिश्ते दारों का आदर सम्मान करना, ये सब ज़रूरी काम हैं।

और ये सारी बातें हज़रत शाह वलीउल्लाह मुहद्दिस देहलवी की किताब "हम आत" के हवाले से कही गयी हैं। न कुरआन की कोई आयत पेश की गयी न कोई हदीस का हवाला दिया गया और न सहाबा, ताबअीन का अमल दर्ज किया गया है। बेशक शाह वलीउल्लाह अपने दौर के एक महान सुधारक एक बड़े सूफ़ी प्रमुख फ़क़ीह और प्रभावशाली व्यक्ति थे लेकिन थे वे मनुष्य ग़लती का पुतला। उन्होंने जहां " हुज्जतुल्लाहुल बालिग़ा", अलफ़वज़ुल कबीर, अल बलागुलमुबीन जैसी अनुपम और अत्यन्त काम की किताबें

Www.IslamicBooks.Website

अपनी इल्मी यादगारें छोड़ी हैं जिनसे इस्लामी साहित्य के ज्ञानात्मक वैभव में वृद्धि हुई है वहां दूसरी ओर अपने जीवन के किसी दौर में उन्होंने "हमआत" आदि जैसी किताबें भी लिखी हैं जिनसे शिर्किया कामों व बिदअत की पुष्टि होती है। यूं उनके विचार एवं लेखनी में विभेद व परस्पर विरोध पाया जाता है।

जब हक़ीक़त यह है कि एक तो वे मासूम और अनिल ख़ता नहीं, दूसरे उनकी इसके विपरीत व्याख्याएं भी मौजूद हैं तो साफ़ सी बात है कि उनकी हर बात आंखें बन्द करके कुबूल नहीं की जा सकती। उसूली तौर पर उन्हें परखना और जांचना चाहिए और जो बात कुरआन व हदीस और सहाबा के अमल के अनुसार हो उसे कुबूल किया जाए और अन्य बातों, को व्यर्थ समझ कर छोड़ दिया जाए।

यह एक ऐसी मौलिक बात है जिससे किसी को इन्कार करने का साहस नहीं होना चाहिए और मज़ा यह कि स्वयं हज़रत शाह साहब ने भी अपने विचारों के बारे में यह व्याख्या की है कि मेरे क़लम से कुरआन व हदीस तीनों मुबारक ज़मानों और जमहूर मुजतहिदीन के खिलाफ़ जो कुछ लिखा गया है उससे मैं अपने को अलग होने की घोषणा करता हूं। अतएव हज़रत हुज्जतुल्लाहुल बालिग़ह की भूमिका में बड़े खुले शब्दों में लिखते हैं।

मैं अपनी हर उस बात से अपने को अलग करता हूं जो अल्लाह की किताब, सहीह सुन्नत और बेहतरीन ज़माना (सहाबा व ताबअीन) के इजमाअ, जमहूर मुजतहिदीन, सवादे मुस्लिमीन के ख़िलाफ़ हो। अल्लाह उस पर दया करे जो हमारी ग़फ़लतों पर हमें

(पिछले पृ0 का हाशिया) 1– शाह साहब की ओर इसकी निसबत में संदेह ज़ाहिर किए जा रहे हैं लेकिन चिंतन इसमें शाह साहब ही की है जैसा कि आपकी प ुमाणिक प्रस्तकों से ज़ाहिर होता है इसके अलावा एक जगह उनकी किताबों में इसका ज़िक्र भी है (विस्तार के लिए देखिए मुक़दमा इत्तिहाफुन्नुबिय्या व तहक़ीक़ मौलाना मुहम्मद अताउल्लाह हनीफ़)

Www.IslamicBooks.Website

जगाए और सचेत करें। (10–11भाग–1)

और "अलमुकालतुल वसीयतु फिन्नसीहतु वल वसीयतु" में सबसे पहली वसीयत उन्होंने यह बयान की है–

इस फ़क़ीर की पहली वसीयत यह है कि आस्था और कर्म दोनों में किताब व सुन्नत को बड़ी मज़बूती से पकड़ा जाए और उनमें सोच विचार का काम होता रहे और यदि अरबी न जानने के कारण स्वयं न पढ़ सकता हो तो किसी दूसरे से कम से कम एक पृष्ठ दोनों का अनुवाद ही सुन लिया करे और अक़ीदों में अहले सुन्नत के इमामों का मसलक अपनाया जाए और बुजुर्गों ने जिस चीज़ की खोज कुरेद नहीं की उसके पीछे न पड़ा जाए और जो बातें सन्देह पैदा करती हों उनकी ओर ध्यान न दिया जाए और फ़िक़्ह की शाखा में उन उलमा ए मुहद्दिसीन का अनुसरण किया जाए जो हदीस फ़िक़्ह के ज्ञान में निपुण हों और सदैव फ़िक़्ही समस्याओं को किताब व सुन्नत पर अवश्य पेश किया जाए फिर जो इनके अनुसार हो उसे कुबूल किया जाए वर्ना उसे छोड़ दिया जाए और याद रखा जाए कि उम्मत किसी समय भी मुजतहिदाते फ़ुक़हा (अर्थात जिन मसलों में फ़ुक़हा ने इज्तिहाद किया हो) को किताब व सुन्नत की रोशनी में जांचने से अपने को अलग नहीं कर सकती और ऐसे फ़क़ीह जो किसी आलम की बात को दस्तावेज़ बनाकर सुन्नत के असल उद्देश्य से बे परवाह हो गए हैं उनकी बात तक न सुनी जाए और उनकी ओर किसी प्रकार झुकाव न रखा जाए बल्कि उनसे दूर रह कर अल्लाह की खुशनूदी और उसकी समीपता हासिल की जाए।" (वसीयत नामा पृ0 302)

और इसी प्रकार अपनी विभिन्न किताब (हुज्जतुल्लाहुल बालिग़ा, अल इंसाफ़, उक़्दतुल जय्यद, अत्तफ़हीमात, अल

Www.IslamicBooks.Website

इलाहिय्या, अलक़बलुल जमील और फ़ुयूज़ुल हरमैन आदि) में उम्मत के मतभेद पैदा होने वाले मसायल का हल उन्होंने यह बयान किया है कि उन फ़िक़ही मतभेदों को कुरआन व हदीस के सामने रख कर पेश किया जाए जो इनके अनुसार हों उन्हें अपना लिया जाए और जो कुरआन व हदीस के ख़िलाफ़ हों उन्हें छोड़ दिया जाए।

शाह वलीउल्लाह के इस बुनियादी उसूल की रोशनी में अब देखना चाहिए कि शाह साहब के भिन्न भिन्न बल्कि विभेद भरे वाक्यों में उनके अपने स्तर और कुरआन व हदीस की दृष्टि से सही और उचित क्या है और ग़लत क्या? अतएव मृत बुज़ुर्गों के बारे में हज़रत शाह साहब का एक दृष्टि कोण तो वह है जो अज्ज़कात के हवाले से आरंभ में नक़ल किया जा चुका है जिसके हिसाब से क़ब्रों में दफ़न अल्लाह के बन्दे लोगों की हाजत पूरी करने, उनकी फ़रियादें सुनने और उनके काम करने में समर्थ हैं और उनकी क़ब्रों पर उर्स आदि रस्में और उनके नाम की नज़्र व नियाज़ें भी जायज़ हैं लेकिन दूसरी ओर शाह साहब ने इन सारी चीज़ों को ग़लत और शिर्क व बिदअत का नाम दिया है। इस बारे में कुछ हवाले आपके सामने प्रस्तुत हैं।

हुज्जतुल्लाहुल बालिग़ा के अध्याय फ़ी बयान हक़ीक़तुश्शिर्क में शाह साहब लिखते हैं।

" शिर्क की एक क़िस्म यह है कि कुछ लोग अल्लाह के नेक बन्दों के बारे में यह अक़ीदा रखते हैं कि अल्लाह ने उन्हें कुछ ख़ास मामलों में तसर्रुफ़ करने की ताक़त प्रदान की है। वह उनकी सिफ़ारिश क़ुबूल करता है और अल्लाह अपने अख़्तियारात अपने उन बन्दों के कहने के अनुसार इस्तेमाल करता है आदि आदि"

Www.IslamicBooks.Website

फिर लिखते हैं–

" और शिर्क की यह वह बीमारी है जिसमें यहूदी, ईसाई और मुश्रिक सामान्य रूप से और हमारे ज़माने के मुसलमानों में से कुछ कपटी शिकार हैं (पृ0 61)

इसी अध्याय में वह हदीसे नबवी का हवाला देकर मस्जिदे नबवी, मस्जिदे हराम और मस्जिदे अक़सा के अलावा अन्य स्थानों को पवित्र और मुतबर्रुक समझ कर जाने और उनके द्वारा समीपता हासिल करने को ग़ैरुल्लाह का हज़ करार देते हैं (जैसा कि हक़ीक़त में कुछ क़ब्रों पर हज होता है)

अल फ़वजुल कबीर फ़ी उसूलत्त फ़सीर में लिखते हैं–

" यदि अरब के मुश्रिकों के हालात व कामों की सही धारणा तुम्हारे लिए मुश्किल हो और उसमें कुछ सोच विचार हो तो अपने जमाने के पेशेवर लोगों मुख्य रूप से व जो दारूल इस्लाम के आस पास रहते हैं। उनका हाल देख लो। वे क़ब्रों, आसतानों और दरगाहों में जाते हैं और तरह तरह का शिर्क करते हैं।"

तफ़हीमात अल इलाहिय्या में फ़रमाते हैं–

" हर वह व्यक्ति जो शहर अजमेर या सालार मसऊद की क़ब्र और अन्य इन जैसी कब्रों और स्थानों पर हाजत तलब करने के उद्देश्य से जाता है वह क़त्ल, ज़िना से भी ज्यादा बड़े गुनाह करता है। ऐसा व्यक्ति बिल्कुल उसी व्यक्ति की तरह होता है जो स्वयं तो गढ़ी हुई चीज़ों (बुतों) की पूजा करता है या उस व्यक्ति की तरह जो लात व उज्ज़ा को पुकारता है।" (2–45)

एक दूसरे स्थान पर लिखते हैं–

" बड़ी बिदअतों में से यह भी है कि क़ब्रों के बारे में बहुत सी बातें स्वयं गढ़ ली हैं और क़ब्रों को मेले का रूप दे दिया है।"

Www.IslamicBooks.Website

(तफ़हीमात 2–64)

और 'अलबलागुल मुबीन' में जो पूरी किताब क़ब्र परस्ती के ख़िलाफ़ है लिखते हैं–

" अग्नि पूजकों और हिंन्दुओं की यह आदत है कि एक दिन निर्धारित करके (किसी थान आदि पर) जमा होकर ईद मनाते हैं। पीर परस्त सम्प्रदाय ने भी उनके क़दम से क़दम मिलाकर कई ईदें बना रखी हैं और आए दिन किसी न किसी बुजुर्ग के "मज़ार" पर उर्स रचाते हैं और इन्हीं की तरह सुख वैभव और मनोरंजन करके शैतान को खुश करते हैं।" (पू0 –31)

और हुज्जतुल्लाह के एक दूसरे स्थान पर इस सिलसिले में लिखते हैं–

"अज्ञानता काल में लोग अपने गढ़े हुए पवित्र स्थानों की ज़ियारत के लिए जाते थे इसमें चूंकि ग़ैरुल्लाह की उपासना का दरवाज़ा खुलता है जो किसी से छुपा नहीं, इसलिए कतरब्योन्त और बिगाड़ के इस रास्ते को नबी सल्ल0 ने अपने फ़रमान के द्वारा बन्द कर दिया ताकि बिगाड़ वाले सही लोगों से न मिल जाएं और ये चीजें ग़रुल्लाह की पूजा का ज़रिया न बनें और मेरे निकट हक़ बात यह है कि क़ब्र किसी वली की उपासना की जगह और तूर पहाड़ भी इसमें (अर्थात गढ़े हुए पवित्र स्थानों में) दाखिल हैं और (इनका) इरादा करके तक़रुबी सफ़र करने की) मना ही में शामिल है।"

(हुज्जतुलाहुल बालिग़ा 1–192)

ये कुछ हवाले और वाक्य हमने शाह साहब की विभिन्न किताबों से प्रस्तुत किए हैं जिनसे यह बात स्पष्ट है कि क़ब्रों पर इस समय जो कुछ किया जा रहा है और इन क़ब्र वालों से मुताल्लिक़ जो अक़ीदे लोगों में पाए जाते हैं वे सब उल्लिखित वाक्यों की रोशनी में

Www.IslamicBooks.Website

ग़लत और कुरआन व हदीस के ख़िलाफ़ हैं और जिनकी कोई मिसाल पहले के दौर के लोगों के अमल में नहीं मिलती।

शाह साहब के बयान किए गए इस उसूल की रोशनी में जिसका स्पष्टी करण प्रारंभ में किया गया है हर समझदार आदमी यह देख सकता है कि शाह वलीउल्लाह का असल मसलक इसके हिसाब से क्या है? वह यह जिसकी निशान देही " अज़्ज़कात में "हमआत" के हवाले से की गयी है या वह जिसका स्पष्टीकरण हमने उनकी अत्यन्त महत्व पूर्ण और विश्वसनीय किताबों के वाक्यों की रोशनी में किया है।

मतलब यह कि प्राणी को (मुर्दा हो या ज़िन्दा) अलौकिक तरीके पर हाजत पूरी करने वाला, मुश्किल कुशा, लाभ व हानि पहुंचाने वाला समझना और उनकी प्रसन्नता हासिल करने के लिए उनके नाम की नज़्र व नियाज़ें, उनकी क़ब्रों पर चादरें चढ़ाना और मेलों ठेलों की व्यवस्था करना आदि ये सारे काम मोहदसात अर्थात नए अविष्कार किए हुए हैं। इसी प्रकार अल्लाह के सिवा किसी को ग़ौस (फ़रियाद सुनने वाला) कहना और समझना भी ग़लत है। ग़ौस केवल अल्लाह ही है और ग़ौसे आज़म भी वही है किसी और को ग़ौसे आज़म कहना इस्लामी शरीअत में जायज़ नहीं।

"कुछ लोगों ने अल्लाह की कुछ मख़लूक़ को " ग़ौस" कहने का गुलू किया है बल्कि " आज़म" भी उसके साथ चिपका दिया है।

("अल एतिसाम" फ़रवरी– 1983 ई0)

Www.IslamicBooks.Website

(11)

औक़ाफ़ विभाग की आय के साधन

हराम व हलाल आय को अलग अलग करने की ज़रूरत

औक़ाफ़ विभाग की स्थापना अय्यूब खां के दौर में विशेष उद्देश्यों एवं लक्ष्यों के अन्तर्गत की गयी थी। इस प्रकार के हित चूंकि हर हुकूमत को प्रिय होते हैं। इसलिए हर हुकूमत ने इस विभाग को अपने हितों के लिए इस्तेमाल करने की कोशिश की है जिस प्रकार नेशनल प्रेस ट्रस्ट की स्थापना विशेष प्रशासन की ज़रूरतों के लिए वजूद में आयी थी लेकिन चूंकि वही विशेष ज़रूरत और उनकी प्राप्ती हर हुकूमत का मन्शा रहा है इसलिए इस ट्रस्ट को भी बराबर योगदान व मदद हासिल रही। और " लोकतंत्र प्रेमियों" ने इसके तोड़ने का वायदा किया भी तो वह सत्ता में आने के बाद इस वायदे को पूरा न कर सके बल्कि इसके द्वारा उन्होंने समाचार पत्रों पर अपनी पकड़ और अधिक मज़बूत की।

यही हाल औक़ाफ़ विभाग का समझ लीजिए कि इसके द्वारा भी मस्जिद व मेहराब से उठने वाली आवाज़ को दबाने की कोशिशों में और अधिक सख़्ती और अन्तरात्मा को बेचने के कारोबार में बड़ी प्रगति हो गयी है। मतलब यह अलग एक दुखद दास्तान है कि हुकूमत मस्जिदों पर किसी न किसी प्रकार के अधिपत्य से दीन के प्रचार के इन महत्व पूर्ण केन्द्रों को किस तरह महत्वहीन और प्रभावहीन बनाना चाहती है। यह विषय इस समय हमारी बहस से बाहर है आज हम एक और बात की ओर ध्यान दिलाना चाहते हैं।

Www.IslamicBooks.Website

उम्मीद है कि इस्लामी व्यवस्था का नारा लगाने वाली हुकूमत इस पर पूरी गंभीरता के साथ सोच विचार करके कोई सकारात्मक क़दम उठाएगी।

वह बात यह है कि जहां तक हम समझते हैं औक़ाफ़ की आय दो तरह की है एक को तो जायज़ कहा जा सकता है जबकि दूसरा आम का साधन इस्लामी दृष्टिकोण से बहुत कुछ बदला हुआ है दूसरे शब्दों में वह मुश्रिकाना अन्दाज़ का है।

जायज़ आय में मस्जिदों के साथ शामिल दुकानों के किराए या उनके नाम वक्फ़ साधनों से हासिल की हुई आय है। दूसरा आय का साधन वह है जो बुजुर्गों की वास्तविक या फ़र्ज़ी क़ब्रों (मज़ारात[1]) पर नज़्र व नियाज़ और चढ़ावे से हासिल होती है और हमारी मालूमात की हद तक औक़ाफ़ का बहुत बड़ा हिस्सा इन्हीं चढ़ावों का है और हक़ीक़त यह है कि कुरआन व हदीस और फ़िक़्ह हनफ़ी के हिसाब से इस प्रकार की आय हराम ही के ख़ाने में आती है। इस मसले का विवरण तो किसी दूसरे समय पेश किया जा सकता है इस समय संक्षेप में फ़िक्ह हनफ़ी की प्रसिद्ध किताब फ़तावा दुर्रेमुख्तार की एक व्याख्या प्रस्तुत की जाती है।

"मालूम होना चाहिए कि अधिकांश लोग मुर्दों के नाम पर जो नज़्र व नियाज़ें देते हैं चढ़ावे चढ़ाते, औलिया की समीपता हासिल करने के लिए माली नज़राने पेश करते और उनकी क़ब्रों पर चराग़

1– स्पष्ट रहे कि जिन बुजुर्गों से अक़ीदत हो केवल उनकी क़ब्रों को मज़ारात और दरगाह कहना ठीक न होगा। इसलिए कि मज़ार के मायना हैं ज़ियारत की जगह यदि इसका यह मतलब है कि चूंकि क़ब्रों की ज़ियारत को जाने का शरअन हु क्म है;; मुसलमानों क़ब्रों की ज़ियारत किया करो कि इससे आख़िरत याद रहती है" तो हर मुसलमान को क़ब्र को मज़ार कहना चाहिए और यदि मज़ार का मतलब है पवित्र स्थान की ज़ियारत तो यह भी हदीस पाक के खिलाफ़ है। सहीह हदीस में ज़ियारत की जगह तीन मस्जिदों का` बताया गया है।

Www.IslamicBooks.Website

और तेल जलाते हैं आदि आदि। ये सारी चीज़ें आम सहमति से असत्य और हराम हैं।" (पृ0 134)

दुर्रेमुख्तार में हाशिए रद्दुल मुहतार (फ़तावा शामी) में इसकी व्याख्या यूं है–

" इसके असत्य और हराम होने की अन्य वजह हैं जिनमें से एक वजह यह है कि यह क़ब्रों के चढ़ावे आदि मख़लूक़ के नाम की नज़्रें हैं और मख़लूक़ के नाम की नज़्रें जायज़ ही नहीं। इसके अलावा ऐसा करने वाला मुर्दों के बारे में यह आस्था रखता है कि वह अल्लाह के सिवा कायनात में तसर्रुफ़ करने का अख्तियार रखते हैं और मुर्दों के बारे में ऐसा अक़ीदा रखना भी कुफ़्र है।

फ़तावा आलमगीरी का फ़तवा

इसी तरह फ़तावा आलम गीरी जिसके बारे में कहा जाता है कि उसे पांच सौ हनफ़ी उलमा ने संम्पादित किया है। इसमें लिखा है कि " अधिकांश लोगों में जो यह रिवाज है कि वे किसी नेक आदमी की क़ब्र पर जाकर नज़्र मानते हैं कि ऐ फ़लां बुजुर्ग यदि मेरी हाजत पूरी हो गयी तो इतना सोना (या कोई और चीज़) तुम्हारी क़ब्र पर चढ़ाऊंगा। यह नज़्र मानना आम सहमति से असत्य है।

फिर लिखा है–"

"तो जो दीनार व दिरहम या और चीज़ें औलिया किराम की क़ब्रों पर उनकी समीपता हासिल करने (उनको राज़ी क़रने) के लिए ली जाती हैं वह आम सहमति से हराम है।"

(फ़तावा आलमगीरी–1–216)

1– मस्जिद हराम 2– मस्जिदे नबवी 3– मस्जिदे अक़सा। इसी प्रकार दरगाह का शब्द है कि इसमें इबादत व पूजा का मफ़हूम पाया जाता है अतः किसी दरगाह या क़ब्र को दरबार या यादगार का नाम दे ना में मुशिरकाना मनोवृत्ति का संकेत है।

Www.IslamicBooks.Website

फ़िक़्ह हनफ़ी की इबारतों की रोशनी में हज़रत मौलाना मुहम्मद अशरफ़ अली थानवी रह0 बुजुर्गों के नाम पर उनकी क़ब्रों पर क़ुरबानी और नज़्र से संबंधित ही एक सवाल के जवाब में लिखते हैं–

" यदि इस नज़्र या नज़्र के अलावा उस ज़बह से नीयत ग़ैरुल्लाह की समीपता की हो तो ज़बीहा हराम रहेगा यद्यपि उसके ज़बह के समय अल्लाह का नाम लिया गया हो।"

(इमदादुल फ़तावा 2–487)

इसी के साथ क़ब्रों से हासिल आय का बहुत सारा हिस्सा शरअी दृष्टिकोण से हराम ठहराया गया है इसलिए कि " मज़ारों" का यह सारा कारोबार लात व मनात मुश्रिकाना है। क्या मुसलमानों की "क़ब्र परस्ती" और हिन्दुओं की मूर्ति पूजा" में कोई फ़र्क़ नज़र आता है? क्या दोनों जगह ग़ैरुल्लाह की पूजा नहीं की जाती?

अतः हम समझते हैं कि औक़ाफ़ विभाग में जायज़ व ना जायज़ आमदनियां एक ही ख़ाने में आती हैं और हलाल व हराम एक दूसरे में गड मड हो गए हैं और इसी हलाल व हराम के भंडार से मस्जिदों के इमामों व ख़तीबों को वेतन दिया जाता है। इसी तरह वे तौहीद परस्त इमाम व वक्ता जो औक़ाफ़ की मस्जिदों में नियुक्त हैं बे भी ऐसे माल खाने पर मजबूर कर दिए गए हैं जबकि उनके अक़ीदे के हिसाब से (और असल इस्लामी उसूल व अक़ीदा भी यही है) क़ब्रों पर चढ़ावे की आय हराम और नाजायज़ है।

इसलिए हमारी विनती है कि क़ब्रों से प्राप्त आय अलग कर दी जाए और मस्जिदों की दुकानों और अन्य वक़्फ़ की गयी जायदादों से प्राप्त आय को अलग रखा जाए और इसी दूसरी आय से इमामों

Www.IslamicBooks.Website

को वेतन दिया जाए और अन्य दीनी व ज्ञानात्मक काम भी इसी आय से किए जाएं।

यह आय यद्यपि क़ब्रों से प्राप्त आय से बहुत कम होगी फिर भी बरकत वाली आय हलाल ही की आय है और इसी आय से ही भलाई का काम किया भी जाना चाहिए। हराम कमाई को दीन के प्रचार जैसे अच्छे काम में खर्च करना अल्लाह के प्रकोप को दावत देना जैसा है। यह तो ऐसा ही होगा जैसे शराब व जुवा से प्राप्त आय से कुरआन करीम या अहादीस की किताबें छापी जाएं या और किसी दीनी काम में इस आय को लगाया जाए। हक़ीक़त यह है कि ग़रुल्लाह की नज़्र व नियाज़ और चढ़ावे की आय शराब और जुवे से प्राप्त आय से अधिक नापाक है।

हम जहां यह आशा रखते हैं कि हमारी सरकार औक़ाफ़ की आय को दो हिस्सों में बांट कर तौहीद परस्ती ख़तीबों और इमामों (मुख्य रूप से) को इस उलझन से मुक्ति दिलाएगी वहीं तौहीद परस्त समाचार पत्रों से आशा करते हैं कि हमारी इस आवाज़ के समर्थन में वे भी अपने समाचार पत्रों में सरकार को इस समस्या की ओर ध्यान दिलाएंगे। ("अल एतिसाम–मई 1984 ई0)

शिर्क की कुछ अप्रकट सूरतें

नबी करीम सल्ल0 ने फ़रमाया–

" शिर्क चींटी की चाल से भी अधिक गुप्त है अबु बकर रज़ि0 ने अर्ज़ की ऐ अल्लाह के रसूल सल्ल0! अल्लाह के अलावा किसी की उपासना या उसके अलावा किसी को पुकारने के बिना भी कोई शिर्क है? आप ने फ़रमाया– तुझे तेरी मां गुम पाए शिर्क चींटी की चाल से ज़्यादा गुप्त है।"

आगे चल कर इसी रिवायत में ये शब्द भी हैं–

Www.IslamicBooks.Website

" यह भी शिर्क है कि मुनष्य यह कहे कि मुझे यह चीज़ अल्लाह ने और फ़लां ने दी है " निद्द" बनाना यह है कि कोई व्यक्ति यूं कहे कि यदि फ़लां व्यक्ति न होता तो फ़लां व्यक्ति मुझे क़त्ल कर देता।" (हिदायतुल मुस्तफ़ीद 1– 288–289)

Www.IslamicBooks.Website

(12)

नवाए वक़्त के जवाब में

निम्न लेख का प्रारंभिक भाग सितम्बर 1980 के " अल एतिसाम" में प्रकाशित हुआ था। उस समय सेंसर शिप लागू थी इसलिए पूरा नहीं छप सका था उसी समय से इसका शेष भाग छपे बिना पड़ा था अब उसे भी किताब में शामिल किया जा रहा है।

सम्पादक

दैनिक " नवाए वक़्त" देश का एक बड़ा राजनीतिक समाचार पत्र है जिसे हर क्षेत्र और विचार धारा में दिलचस्पी से पढ़ा जाता है समाचार पत्र की इस लोक प्रियता का तक़ाज़ा है कि इसमें प्रकाशित होने वाला मैटर हर प्रकार की कड़वाहट और साम्प्रदायिकता से साफ़ हो लेकिन अफ़सोस है कि इसके एक रेगुलर कालम लिखने वाले मियां अब्दुर्रशीद यदा कदा इस अंदाज़ से " नूरे बसीरत" वाला कालम लिखते हैं कि जिससे एक तो साम्प्रदायिकता का प्रचार होता है जिस में दूसरे की विचार धारा पर व्यंग करके दिल को कष्ट पहुंचाने का प्रयास किया जाता है। दूसरे यह साहब कुरआनी ज्ञान से भी अनाभिज्ञ मालूम होते हैं।

उन्होंने अपने कालम का स्थाई शीर्षक " नूरे बसीरत" रखा हुआ है लेकिन कभी कभी वह जुलमातुन बाअज़ुहा फ़वक़ा बाअज़िन और कुरआन की वास्तविक तब्दीली का कारण हो जाता है।

अभी पिछले दिनों कुछ उन्होंने कालम लिखे हैं जिनसे हमारे दावे की पुष्टि होती है जैसे कुरआन में आता है–

" और हमने हर रसूल इस लिए भेजा कि अल्लाह के हुक्म से

Www.IslamicBooks.Website

उसका आज्ञा पालन किया जाए और यदि वे लोग (उस समय) जब उन्होंने (गुनाह करके) अपने ऊपर जुल्म किया था आपके पास आ जाते फिर अल्लाह से (अपने गुनाह की) माफ़ी मांगते तो वह अवश्य अल्लाह को तौबा कुबूल करने वाला (और) रहम करने वाला पाते।"

(निसा– 64)

(स्पष्ट रहे कि अनुवाद भी कालम निगार साहब ही का है)

इसी प्रकार सूरह मुनाफ़िकून की एक आयत है–

" और जब इन (कपटियों) से कहा जाता है कि आओ रसूलुल्लाह तुम्हारे लिए (अल्लाह से) माफ़ी मांगे तो वह (इन्कार में) सर हिलाते हैं और आप इन्हें देखते हैं (कि वे) बे रुख़ी बरतते (हैं) और घमंड करते हैं।"

इन दोनों अनुवादों को देख लीजिए जो " नवाए वक़्त" के कालम निगार ने किए हैं कि इनमें क्या चीज़ बयान की गयी है। बयान नबी करीम सल्ल0 के दौर के काफ़िरों और कपटियों और गुनाहगारों का हो रहा है कि वे नबी करीम सल्ल0 की सेवा में हाज़िर होकर कुफ़्र व कपट और गुनाहों से तौबा कर लें तो अल्लाह का रसूल भी उनके लिए अल्लाह की बारगाह में माफ़ी की दुआ करेगा। यह मानो नबी सल्ल0 की जीवनी की घटना है जिससे इन्कार का साहस नहीं। बेशक गुनाह गारों के लिए आपकी मग़फ़िरत की दुआ उनके लिए गुनाहों की माफ़ी का सबब होती और जिन लोगों ने इस तरह नबी सल्ल0 की सेवा में हाज़िर होकर अपने पापों भरे जीवन से तौबा की और इस्लाम स्वीकारा निश्चय ही उनके इस्लाम स्वीकारने और नबी सल्ल0 की दुआ की बरकत से न केवल उन के गुनाह माफ़ कर दिए गए बल्कि रज़ियल्लाहु अन्हु का प्रमाण पत्र भी प्रदान हुआ।

Www.IslamicBooks.Website

लेकिन उपरोक्त उल्लिखित आयत से यह साबित करना कि नबी सल्ल0 की वफ़ात के बाद भी आप माफ़ी का ज़रिया हैं और आपको वसीला बनाकर मग़फ़िरत की दुआ करनी चाहिए यह ग़लत है क्योंकि कुरआन तो रिसालत के दौर के लोगों के बारे में यह कह रहा है कि तुम्हारे लिए बड़ा सुनहरा अवसर है अपने गुनाहों से तौबा कर लो। इस समय तो स्वयं नबी सल्ल0 भी तुम्हारे लिए मग़फ़िरत की दुआ करने के लिए मौजूद हैं लेकिन यह कालम निगार इसको आम करके इससे वसीले का स्वीकरण कर रहा है जिसका न इस आयत से कोई संबंध है और न किसी और ही आयत से इसका सबूत मिलता है अर्थात बिल्कुल एक बेसबूत बात कुरआन के सर मंढी जा रही है जिसे वास्तविक परिवर्तन ही कहा जाएगा।

फिर कालम निगार ने इस पर ही बस नहीं किया है बल्कि एक सितम यह भी किया कि फ़तवा भी दे दिया है कि " जो लोग हुजूर सल्ल0 के वसीले से माफ़ी चाहने से इन्कार करते हैं और घमड़ करते हैं वे कप्टी और घमंडी है।"

इन साहब ने क़लम चलाकर तमाम सहाबा, तबअ ताबअीन इमाम और मुहद्दिसीन सब को(अल्लाह अपनी पनाह में रखे) कपटी और घमंडी बना दिया है क्योंकि किसी सहाबी (रज़ि0) ताबअी, इमाम और मुहद्दिस ने वह वसीला नहीं अपनाया जिसका स्वीकरण उल्लिखित कालम निगार ने किया है और किसी ने भी नबी सल्ल0 की वफ़ात के बाद आपके वास्ते और वसीले से न मग़फ़िरत की दुआ की और न किसी अन्य प्रकार की दुआ की। सारे सहाबा, ताबअीन सीधे अल्लाह ही से दुआ करते थे। इस मसले को समझने के लिए हज़रत उमर रज़ि0 का यह अमल काफ़ी है कि वे अकाल में नबी करीम सल्ल0 के चचा हज़रत अब्बास रज़ि0 से बारिश की

Www.IslamicBooks.Website

दुआ क़राया करते थे (अर्थात ज़िन्दा बुजुर्ग का वसीला पकड़ते थे) और फ़रमाते थे–

" ऐ अल्लाह! हम पहले तेरे नबी से वसीला करते (अर्थात दुआ कराते) थे तो तू हमें पानी पिलाता था (अर्थात बारिश भेजता था) अब हम तेरे पास अपने नबी के चचा का वसीला लेकर आए हैं (अर्थात उनके वसीले और ज़रिए से दुआ करते हैं) तो हमें सीराब कर।" रावी बयान करता है इसके बाद बारिश आ गयी।

(बुखारी, मिश्कात– 1133)

इस घटना से पता चला कि सहाबा किराम ने नबी सल्ल0 की वफ़ात के बाद उनका " वसीला" नहीं पकड़ा अर्थात उनके वसीले से दुआएं नहीं मांगी न उनकी क़ब्र मुबारक पर जाकर उनसे मदद मांगी यद्यपि सहाबा किराम रज़ि0 नबी करीम सल्ल0 के जीवन में आपसे दुआएं कराते थे। सही बुखारी में आता है कि मदीना मुनव्वरा में अकाल पड़ा। एक बार नबी करीम सल्ल0 खुतबा दे रहे थे कि एक आराबी आया और कहने लगा–ऐ अल्लाह के रसूल जानवर मर गए और लोग भूखे मर गए आप अल्लाह से बारिश की दुआ कीजिए आपने दुआ की तो उसी दिन बारिश शुरू होकर अगले जुमा तक रही। फिर दूसरे जुमे को बारिश की अधिकता के कारण मकान गिरने की शिकायत करके बारिश रोकने की दुआ को कहा गया। आपने फिर बारिश रुक जाने की दुआ की। जिसके बाद बारिश थम गयी।

इसी प्रकार हदीस की किताबों में बहुत सी घटनाएं मौजूद हैं जिनसे मालूम होता है कि विभिन्न अवसरों पर सहाबा किराम रज़ि0 ने आपसे दुआओं की विनती की और आपने उनके लिए दुआएं कीं। यह है ज़िन्दों के वसीले अर्थात ज़रिए से दुआ कराना जो हदीसों से

Www.IslamicBooks.Website

साबित है लेकिन मृत बुजुर्गों को वसीला बनाकर दुआ करना, इसका सबूत सहीह हदीसों में नहीं मिलता, न सहाबा ताबअीन ने यह वसीला अपनाया है।

हनफ़ी फ़ुक़्हा का फ़तवा

सहाबा (रज़ि0) व ताबअीन के बाद इमामों का दौर है इनमें से भी किसी इमाम ने भी ऐसा नहीं किया बल्कि इमाम अबु हनीफ़ा रह0 और अन्य फ़ुक़्हा का अक़ीदा और मत भी है कि मुर्दा बुजुर्गों के वसीले से दुआ करना नाजायज़ है। अतएव हिदाया में है जो हनफ़ी फ़िक़्ह की अत्यन्त विश्वसनीय किताब है'

" यह मकरूह है कि आदमी अपनी दुआ में इस तरह कहे कि या अल्लाह बिहक़ फ़लां या अम्बिया और रसूलों के सदक़े (मेरा काम बना दे मेरी हाजत पूरी कर दे) इसलिए कि मख़लूक़ का कोई हक़ ख़ालिक़ पर नहीं है। (हिदाया 1– 64)

और दुर्रे मुख़्तार में भी लगभग यही बात कही गयी है–

और फ़िक़्ह अकबर जो इमाम अबु हनीफ़ा की किताब बतायी जाती है उसकी व्याख्या में मुल्ला अली क़ारी हनफ़ी रह0 फ़रमाते हैं–

" और इमाम अबु हनीफ़ा रह0 और उनके साथी (इमाम मुहम्मद व इमाम यूसुफ़) कहते हैं कि कोई आदमी इस तरह दुआ करे कि ऐ अल्लाह मैं बिहक़ फ़लां बुजुर्ग या बिहक़ फ़लां नबी या बिहक़ बैतुल हराम या इस प्रकार के किसी वास्ते से तुझ से सवाल करता हूं, तो यह सही नहीं, इसलिए कि अल्लाह पर किसी मख़लूक़ का कोई हक़ नहीं है कि उसका वास्ता देकर उससे मांगा जाए।

(शरह फ़िक़्ह अकबर पृ0 161)

मतलब यह कि सारांश यह है कि एक ग़ैर धार्मिक राजनीतिक

Www.IslamicBooks.Website

समाचार पत्र के कालम निगार को दोनों मामलों में विचार व्यक्त करते हुए एक तो कुरआन व हदीस का इल्म होना चाहिए। दूसरी सूरत में उसे इस प्रकार के फ़तवा बाज़ी से बचना चाहिए। यदि इनमें से किसी बात का ध्यान न रखा जाए तो फिर इस समाचार पत्र के सम्पादक का कर्तव्य है कि वह तस्वीर का दूसरा पहलू भी प्रकाशित करे। लेकिन अफ़सोस उल्लिखित अख़बार में इस ओर ध्यान नहीं दिया जाता।

पहली सितम्बर 1980 ई0 के नवाए वक़्त में शिर्क व बिदअत के शीर्षक से मियां अब्दुर्रशीद साहब ' नूरे बसीरत'' में फ़रमाते··हैं··

'' मुस्लिम समुदाय की एकता को खंडित करने में खुफ़िया यहूदी तहरीक के अलावा शिर्क व बिदअत के बारे में फैले भ्रम भी हैं अल्लाह के गुणों एवं विशेषताओं में किसी और को उनके बराबर समझना शिर्क है अल्लाह का शुक्र है कि कोई मुसलमान ऐसा नहीं करता, अब '' या रसूलुल्लाह'' कहने को शिर्क बना लेना या अक़ीदत से हाथ चूम लेने को शिर्क बताना खुली ज़्यादती है। अत्तहियात में अय्युहन्नबी के शब्द मौजूद हैं और नमाज़ों में सब अत्तहियात पढ़ते हैं यदि बुजुर्गों के पास आध्यात्मिकता के लिए जाना शिर्क है तो फिर उलमा के पास शरीअत का ज्ञान सीखने के लिए जाना क्यों शिर्क नहीं? डाक्टर के पास जाना क्यों शिर्क नहीं? शिर्क सबसे महान जुल्म है इसकी माफ़ी नहीं इसलिए किसी मुसलमान को बिना सोचे समझे मुश्रिक कहने से बचना चाहिए''।

यह लम्बा वाक्य इस लिए नक़ल किया गया है ताकि कालम निगार की पूरी बात सामने आ जाए। इस वाक्य में ग़लतियों के ऐसे नमूने हैं कि हैरत होती है एक ओर यह मानते हैं कि अल्लाह की ज़ात व सिफ़ात में किसी और को उनके बराबर समझना शिर्क है।

Www.IslamicBooks.Website

लेकिन दूसरी ओर यह दावा है कि....

"अल्लाह का शुक्र है कोई मुसलमान इस शिर्क को नहीं करता।

यद्यपि शिर्क की जो परिभाषा स्वयं कालम निगार ने की है उसके हिसाब से सारे क़ब्र परस्त मुश्रिक हैं आखिर जो बुजुर्ग मर गए हैं उनको निकट या दूर से पुकारने वाले का क्या यह अक़ीदा नहीं होता कि वे बुजुर्ग उसकी पुकार को सुन रहा है? उसकी हालत को देख रहा है और वह उसकी हाजत पूरी करने पर समर्थ है निश्चय ही यही अक़ीदा होता है। यदि यह अक़ीदा न हो तो ये लोग घरों में बैठ कर " या शैख़ अब्दुल क़ादिर शैअन लिल्लाह का वज़ीफ़ा कभी न पढ़ें।

"इमाम बरी इमाम बरी मेरी खोटी किस्मत करो खरी" का राग कभी न अलापें।

और " अली शहबाज़ करे परवाज़, राज़ दिलों का जाने" जैसी क़व्वालियां और गाने तैयार न हों।

क्या इस प्रकार मृत बुजुर्गों को इमदाद के लिए पुकारने वाले का यह अक़ीदा साबित नहीं होता कि वह अल्लाह के सिवा उन मरहूम बुजुर्गों को ग़ैब के इल्म जानने वाला, हाज़िर नाज़िर सुनने और देखने वाले, दिलों का हल जानने वाले, लाभ व हानि पहुंचाने वाले और हर दुआ को कुबूल कराने वाला नहीं समझता है और क्या ये सारे गुण खुदाई गुण नहीं है? अब दूसरों को भी इन गुणों वाला समझना आखिर शिर्क क्यों नहीं होगा? मात्र या रसूलुल्लाह कहने को या अंगूठा चूमने को कोई शिर्क नहीं कहता। ऐसे कहने वालों को " मुश्रिक" इसलिए कहते हैं कि वह केवल या रसूलुल्लाह ही नहीं कहता बल्कि उसका अक़ीदा होता है कि नबी सल्ल0 भी

Www.IslamicBooks.Website

अल्लाह की तरह आलिमि मा काना वमा यकूना हैं, हाज़िर,व नाज़िर समीअ व बसीर हैं। शैख अब्दुल क़ादिर जीलानी को भी ऐसा ही समझा जाता है बल्कि यही अक़ीदा उनका हर छोटे बड़े बुजुर्ग बल्कि सच्चे झूटे और बनावटी बुजुर्ग के लिए भी रखते हैं यदि शक हो तो लीजिए हम हवाला पेश किए देते हैं।

मौलाना अहमद रज़ा खां बरेलवी लिखतें हैं कि…

" इन्हीं सैयदी अहमद बहलमासी की दो पत्नियां थीं। सय्यदी अब्दुल अज़ीज़ दब्बाग़ रज़ि0 ने फ़रमाया कि रात को तुमने एक पत्नी के जागते दूसरी पत्नी से सम्भोग किया, यह नहीं चाहिए था। कहा हुजूर! वह उस समय सो रही थी। फ़रमाया सोती न थी सोते में ही जान डाल ली थी। कहा हुजूर को इसका पता कैसे चला? फ़रमाया जहां वह सो रही थी कोई पलंग और भी था? कहा– हां एक पलंग ख़ाली था। फ़रमाया उस पर मैं था, तो किसी वक़्त शैख मुरीद से अलग नहीं हर क्षण उसके साथ है।" (मलफ़ूज़ात भाग 2–169) फ़रमाइए! क्या यह खुदाई गुणों (कि वे हर क्षण उनके साथ हैं) मैं अपने पीर को बराबर का शरीक नहीं किया जा रहा है?

और सुनिए! मौलाना अहमद रज़ा खां साहब से सवाल होता है–

"अर्ज़ है हुजूर औलिया, एक समय में कुछ जगह हाज़िर होने की ताक़त रखते हैं? इर्शाद होता है– यदि वे चाहें तो एक समय में दस हज़ार शहरों में दस हज़ार जगह की दावत क़ुबूल कर सकते हैं। (मलफ़ूज़ात–1–113)

शैख़ अब्दुल क़ादिर जीलानी रह0 के अन्दर तमाम खुदाई गुणों को माना जाता है जिसका सबूत वह नज़्म है जी मासिक "रजाए मुसतफ़ा" में छपी है। इस नज़्म में शैख अब्दुल क़ादिर जीलानी

Www.IslamicBooks.Website

रह0 को क्या खुदाई तख़्त पर नहीं बैठा दिया गया है? आख़िर कौन सी खुदाई विशेषता ऐसी है जिसका स्वीकरण उनके लिए नहीं किया गया है? यही नहीं बल्कि अन्य बुजुर्गों के लिए भी ऐसी ही आस्था और ग़ुलू का प्रदर्शन किया गया है। नबी सल्ल0 के बारे में यह शेअर मस्जिदों में लिखा जाने और दुआओं में पढ़ा जाने लगा है।

' ऐ अल्लाह के रसूल! हमारी हालत पर दया की नज़र कर। ऐ अल्लाह के हबीब! हमारी बातों (फ़रियादों) को सुनिए। हम ग़म के समन्दर में डूबे हुए हैं हमारा हाथ पकड़ए और हमारी मुश्किलें आसान फ़रमा दीजिए।'

इसके अलावा हाथ जोड़कर सम्मान पूर्वक खड़े होना, सज्दा और परिक्रमा, ये सब उपासनाएं वे हैं जो केवल अल्लाह के लिए (और परिक्रमा उसके घर बैतुल्लाह के लिए)खास हैं। यदि यही कार्य अल्लाह के सिवा किसी और के लिए भी किए जाएंगे तो यह शिर्क फ़िल इबादत (उपासना के साथ शिर्क)होगा अब देख लिया जाए कि क़ब्रों पर सज्दे नहीं हो रहे हैं? क़ब्र के पत्थर के तावीज़ को चूमना और उस पर अपनी पेशानी रगड़ना क्या सज्दे से भिन्न चीज है? क्या अल्लाह की तरह मृत बुजुर्गों के नामों की नज़्रों व नियाजें नहीं दी जाती, इन्हीं की क़ब्रों पर ख़ाना क़ाबा की तरह ग़िलाफ़ नहीं चढ़ाए जाते। आख़िर वह कौन सा काम है जो केवल अल्लाह के लिए किया जाता हो और वह उन क़ब्रों पर न हो रहा हो? यहां तक कि ज़ालिमों ने नमाज़ें भी ग़ैरुल्लाह के लिए पढ़नी शुरू कर दी हैं। यह सलाते ग़ौसियह क्या है? यह शैख़ अब्दुल क़ादिर जीलानी रह0 के लिए पढ़ी जाती है। पढ़ते समय इसका रुख़ भी (शायद) बग़दाद की ओर होता है।

Www.IslamicBooks.Website

लेकिन मियां साहब फ़रमा रहे हैं.... " अल्लाह का शुक्र है कोई मुसलमान शिर्क नहीं करता।" यदि उपरोक्त उल्लिखित कार्य मुश्रिकाना नहीं हैं तो पता नहीं मुश्रिकाना कार्य क्या है? यद्यपि यही वे कार्य हैं जिनकी बुनियाद पर मक्का के काफ़िर मुश्रिक कहलाए और इन्हीं कार्यों पर स्वयं फ़िक़्ह हनफ़ी ने भी कुफ़्र व शिर्क का फ़तवा लगाया है। इस सिलसिले के कुछ हवाले विगत पृष्ठों में गुज़र चुके हैं कुछ और हवाले यहां प्रस्तुत हैं–

हनफ़ी मज़हब की किताब हिदाया में है–

" हमारी शरीअते इस्लामिया में यह कदापि जायज़ नहीं है कि कोई किसी को (अल्लाह के सिवा) किसी तरह का सज्दा करे और जो ऐसा करे वह काफ़िर है।"

यदि कोई कहे कि कोई व्यक्ति भी क़ब्र को या किसी पीर को सज्दा नहीं करता तो एक तो यह दावा ही ग़लत है क़ब्रों पर जाकर देख लिया जाए कि लोग क्या कुछ नहीं करते? दूसरे क़ब्र को चूमना और उसके सामने सर निहोड़ना और धरती को बोसा देना और पीर के क़दमों पर सर रख देना यह तो आम देखने में आता है। ये कार्य भी सज्दे ही की तरह हैं जिसकी व्याख्या भी हनफ़ी फ़ुक़हा ने कर दी है। अतएव दुर्रे मुख्तार पृ–699 पर लिखा है–

" इस तरह जो लोग उलमा और बुज़ुर्गों के सामने ज़मीन पर बोसा देते हैं यह हराम है और ऐसा करने वाला और इसे पसन्द करने वाला दोनों गुनहगार हैं क्योंकि ऐसा करना भी बुतों की पूजा करने जैसा है।"

और फ़तावा आलम गीरी में है–

" शहंशाह की उपाधि अल्लाह के लिए विशेष नामों में से हैं (अर्थात किसी और को इस उपाधि से पुकारना जायज़ नहीं) और

Www.IslamicBooks.Website

ज़मीन को बोसा देना यह सजदे के निकट है।" (2–96)

इन हवालों से स्पष्ट है कि मृत लोगों की क़ब्रों को चूमना और आस्था से उन्हें छूना यह सजदे ही की क़िस्म है जिसके करने वाले को फ़िक़्ह हनफ़ी काफ़िर बताती है।

क़ब्रों के चारों ओर परिक्रमा भी सामान्य बात है यद्यपि परिक्रमा भी केवल ख़ाना काबा के साथ ख़ास है। हनफ़ी फ़ुक़हा (धर्म शास्त्रियों)ने ख़ाना काबा के अलावा किसी और जगह के तवाफ़ को भी सख़्ती से रोका है और (इस कार्य से भी चिंता व्यक्त की है कि यह कुफ़्र करने जैसा है। अतएव मुल्ला अली क़ारी हनफ़ी शरह मनासिक में नबी सल्ल0 की क़ब्र मुबारक के बारे में लिखते हैं–

" नबी करीम सल्ल0 की क़ब्र शरीफ़ के चारों ओर परिक्रमा न करे इसलिए कि परिक्रमा ख़ाना काबा के साथ विशेष है अतः अम्बिया और औलिया की क़ब्रों के चारों ओर फिरना (परिक्रमा) हराम है और जो जाहिल लोग ऐसा करते हैं यद्यपि वे शक्ल व सूरत से मशाइख़ और उलमा हों उनका कोईभरोसा नहीं।"

और शरह ऐनुल इल्म में फ़रमाते हैं–

" न क़ब्र को छुए न ताबूत और दीवार को, क्योंकि ऐसा करना नबी सल्ल0 की क़ब्र के साथ भी मना है फिर अन्य लोगों कि क़ब्रों के साथ ऐसा करना किस तरह जायज़ होगा? और न क़ब्र को बोसा दे क्योंकि यह तो छूने से भी अधिक बुरा है अतः बोसा केवल असवद के साथ ख़ास है।"

और कुछ हनफ़ी किताबों में क़ब्र को छूना और बोसा देना ईसाइयों की आदत बतायी गयी है और इसी लिए इससे रोका है। यहां तक कि मेराजुदद रायत में है–

" काबा शरीफ़ के अलावा कोई व्यक्ति यदि किसी मस्जिद की

Www.IslamicBooks.Website

परिक्रमा भी करेगा तो ऐसे व्यक्ति के बारे में कुफ़्र का ख़तरा है।"

अब्दुन्नबी, अब्दुर्रसूल और पीर बख्श, हुसैन बख़्श, इमाम बख़्श आदि नाम भी क़ब्र परस्तों में सामान्य हैं। इसके बारे में भी फ़िक़्ह हनफ़ी की व्याख्या सुन लीजिए।

मुल्ला अली क़ारी हनफ़ी लिखते हैं।

" अब्दुन्नबी नाम रखना प्रत्यक्ष में कुफ़्र है या यह कि दास के मायना में हो।"

(शरह फ़िक़्ह अकबर– 238)

ये कुछ उदाहरण फ़िक़्ह हनफ़ी से इस बात के सबूत के लिए काफ़ी हैं कि नवाए वक़्त के कालम निगार का यह दृष्टिकोण किसी तरह भी उचित नहीं है कि कोई मुसलमान भी शिर्क नहीं करता या यह कि वह सही इस्लामी शिक्षा से अनभिज्ञ हो प्रायः मुसलमान उन कामों को कर रहे हैं जो खुले रूप से शिर्क के दाएरे में ही आते हैं।"

अब आइए उन कुछ उदाहरणों पर भी नज़र डालें जो नवाए वक़्त के कालम निगार ने अपने दृष्टिकोण के सबूत में पेश किए हैं। पहली मिसाल तो उन्होंने यह पेश की है कि अत्तहियात में अय्युहन्नबिय्यु के शब्द मौजूद हैं और नमाज़ों में यह अत्तहियात सब पढ़ते हैं।

अर्थात कालम निगार का मतलब यह है कि सारे ही मुसलमान अत्तहियात में अय्युहन्नबिय्यु सम्बोध कलिमा से पढ़ते हैं। तो क्या ये सब मुश्रिक समझे जाएंगे?

लेकिन हम कहेंगे कि यह विवेचन बिल्कुल कमज़ोर है क्योंकि अत्तहियात में ये शब्द हम स्वयं अपनी ओर से नहीं पढ़ते बल्कि हमें जो नमाज़ का तरीक़ा नबी सल्ल० ने सिखाया है और बताया है उसी के हिसाब से ये शब्द पढ़ते हैं जो इस्लाम और ईमान का

Www.IslamicBooks.Website

आवश्यक तक़ाज़ा है। स्वयं नबी सल्ल0 भी अपनी नमाज़ में अत्तहियात में ये शब्द उसी तरह पढ़ते थे आख़िर वे किस नबी को सम्बोधित करके उल्लिखित शब्द कहते थे?

इससे मालूम हुआ कि एक नमाज़ी अत्तहियात में जब अस्सलाम अलैक अय्युहन्नबिय्यु पढ़ता है तो उसका अक़ीदा कदापि यह नहीं होता कि नबी सल्ल0 सुन रहे हैं और मैं उनको सम्बोधित कर रहा हूं बल्कि हर मुसलमान ये शब्द मात्र नबी सल्ल0 की शिक्षा के अनुसार पढ़ता है। इन शब्दों का कोई संबंध उस सलात व सलाम से नहीं है जो गढ़ा हुआ है और आजकल पढ़ा जाता है क्योंकि इस की बुनियाद इस बिगड़े हुए अक़ीदे पर है कि नबी सल्ल0 हाज़िर व नाज़िर हैं, समीअ व बसीर हैं और ग़ैब का ज्ञान रखते हैं इसीलिए उल्लिखित सलाम वे इस अक़ीदे के अर्न्तगत खड़े होकर पढ़ते हैं कि नबी सल्ल0 मौजूद हैं और स्वयं सुन रहे हैं। एक मुसलमान कहलाने वाला व्यकित शिर्क करे तो वह मुश्रिक ही होगा।

2– आगे इर्शाद होता है–

" यदि बुजुर्गों के पास आध्यामिकता के लिए जाना शिर्क है तो फिर उलमा के पास शरीअत का ज्ञान सीखने के लिए जाना क्यों शिर्क नहीं –?

इसे कहते हैं "मारो घुटना फूटे आंख" बात हो रही है कि जो लोग मर चुके हैं उनका इस संसार से संबंध टूट गया है। लाभ हानि पहुंचाना तो बहुत दूर की बात है वे अब न किसी की बात सुन सकते हैं न सुना सकते हैं। इसे ज़िन्दा उलमा से ज्ञान हासिल करने से जोड़ना अत्यन्त मूर्खता व अल्पबुद्धि की बात है। सच है मुश्रिक से समझ व चिंतन, बुद्धि एवं सोच विचार की क्षमताएं ही छीन ली जाती

Www.IslamicBooks.Website

हैं आगे यह मूर्खता और बढ़ती है.... फ़रमाते हैं–

"स्कूल व कालेज में शिक्षा प्राप्त करने के लिए जाना क्यों शिर्क नहीं? डाकटर के पास जाना क्यों शिर्क नहीं?

सुबहानल्लाह! क्या कहने "नवाए वक़्त के कालम निगार की बुद्धि एवं सूझ बूझ के। यद्यपि मोटी सी बात है कि उलमा के पास जाना या स्कूल व कालेज जाना या डाक्टर के पास इलाज के उद्देश्य से जाना, ये तो सांसारिक ज़रूरतों का वह सिलसिला है जो स्वयं अल्लाह ने स्थापित किया है और इन साधनों को अपनाने का उसने हुक्म दिया है क्योंकि कायनात की व्यवस्था इन्हीं साधनों के अनुसार चल रही है। ये साधन नहीं अपनाए जाएंगे तो जीवन की गाड़ी एक क्षण के लिए भी नहीं चल सकेगी। इन साधनों को अपनाने वाला मुश्रिक कैसे हो सकता है? बहस तो है उन अलौकिक साधनों व तरीक़ों पर जो किसी को पुकारते और उससे (अर्थात मुर्दों से) मदद हासिल करने के बारे में। एक व्यक्ति जीवित है आप उससे कहें मेरा यह काम कर दे या मुझे थप्पड़ मार या कोई और काम कहें। वह आपके कहने के अनुसार सब कुछ करे तो यह ठीक है। दुनिया का सारा काम इसी तरह चल रहा है लेकिन एक व्यक्ति मर गया है मनों मिट्टी के नीचे दफ़न है बल्कि उसकी हडडियां तक भी सड़ गल गयी हैं अब ऐसे मुर्दे को मदद के लिए पुकारना कि मेरा फ़लां काम करदे मेरी फ़लां हाजत पूरी कर दे, उसे लाभ हानि का मालिक समझे, उसमें व्यवस्था के अन्दर तसर्रुफ़ करने का अख्तियार माने। उसे परोक्ष ज्ञान वाला जाने और उसे सुनने व देखने वाला समझे तो यह है अलौकिक तरीक़े पर पुकारना जो निश्चित रूप से शिर्क है। ज़िन्दों और मुर्दों को समान समझना बल्कि मुर्दों को अल्लाह की तरह मालिक समझना और

Www.IslamicBooks.Website

ज़िन्दों से भी ज़्यादा उनमें शक्ति एवं ताक़त समझाना ऐसी नादानी है जिसके डांडे खुले शिर्क से ही मिलते हैं।

आगे इर्शाद होता है–

" शिर्क महान जुल्म है उसकी माफ़ी नहीं इसलिए किसी मुसलमान को बे समझे बूझे मुश्रिक कहने से बचे रहना चाहिए।"

बेशक शिर्क महान जुल्म है जिसकी माफ़ी नहीं। यही कारण है कि जमाअत अहले हदीस सबसे ज़्यादा इसी मसले को महत्व देती है और लोगों को शिर्क से बचाने का प्रयास करती है। जमाअत अहले हदीस को व्यर्थ में लोगों को "मुश्रिक" कहने में कोई आन्नद नहीं आता उसे तो यह देखकर अत्यन्त आध्यात्मिक कष्ट होता है कि नबी सल्ल0 की उम्मत के जाहिल लोग जिन्हें तौहीद का रखवाला होना चाहिए था क़ब्रों के साथ वह सब कुछ कर रहे हैं। जो मुश्रिक अपने बुतों के साथ करते हैं। और क़ब्रों में दफन बुजुर्गों को उन अख्तियारों वाला समझते हैं जो केवल अल्लाह के साथ ख़ास हैं। अब तमाम मुश्रिकाना कामों को जारी रखने और मुश्रिकाना अक़ीदा रखने के बावजूद कालम निगार की यह इच्छा कि किसी मुसलमान को बिना सोचे समझे मुश्रिक नहीं कहना चाहिए बड़ी विचित्र बात है यद्यपि हम पहले स्पष्टीकरण कर आए हैं कि उल्लिखित मामलों को व कार्यों को करने वालों को स्वयं हनफ़ी फ़िक़ह काफ़िर व मुश्रिक और बुत परस्तों के समान क़रार दे रही है क्या उनका ख्याल है कि हनफ़ी फ़ुक़हा ने भी बिना सोचे समझे यूं ही फ़तवे दिए हैं। दूसरे शब्दों में अपनी ना समझी का सबूत उपलब्ध किया है और सूझ बूझ वाले हुए हैं तो केवल यही "नूरे बसीरत" लिखने वाले मियां अब्दुर्रशीद साहब जिनको खुला शिर्क व स्पष्ट शिर्क नहीं मालूम होता।

Www.IslamicBooks.Website

खिरद का नाम जुनूं रख दिया और जुनूं का ख़िरद
जो चाहे आप का "क़लम" करिश्मा साज़ करे

मतलब यह कि कालम निगार साहब की यह वही इच्छा है जिसके बारे में मौलाना अलताफ़ हुसैन हाली ने कहा है–

मगर मोमिनों पर कुशादा हैं राहें
परसतिश करें शौक़ से जिसकी चाहें

कुछ बिदअत के बारे में

बिदअत के बारे में "नवाए वक़्त" के कालम निगार लिखते हैं–

"बिदअत वह चीज़ है जो दीन में बिल्कुल नयी हो जिसका पहले से वजूद ही न हो जैसे नबी सल्ल0 के दौर में सुब्हानल्लाहि अल हमदुलिल्लाहि अल्लाहु अकबर उंगलियों के पोरों पर गिना करते थे अब यदि कोई इस उद्देश्य के लिए तसबीह का इस्तेमाल कर ले तो इसे बिदअत नहीं कहा जाएगा। इसी तरह उस दौर में कुरआन पाक का अनुवाद नहीं था मगर चूंकि कुरआन पाक सोच विचार और समझ बूझ के साथ पढ़ा जाता था और अनुवाद भी कुरआन पाक समझाने ही की कोशिश है इसलिए कुरआन के अनुवाद को बिदअत नहीं कहा जाएगा। उस दौर में कुरआन पाक को समझाने के लिए यह तरीक़ा नहीं अपनाया जाता था जिसे हम आजकल दर्स कहते हैं और जिसमें लोग घेरा बना कर बैठते हैं लेकिन चूंकि इस में कुरआन पर सोच विचार होता है इसलिए यह तरीका बिदअत नहीं कहलाएगा। इसी प्रकार घेरा बना कर ज़िक्र करना भी बिदअत नहीं क्योंकि कुरआन पाक में बार बार ज़िक्र करने का हुकम है और हुजूर अकरम सल्ल0 के मुबारक दौर में ज़िक्र होता था।"

("नवाए वक़्त लाहौर– 2 सितम्बर 1980)

Www.IslamicBooks.Website

इसके बाद 3 सितम्बर की दूसरी क़िस्त में उन्होंने इस अंदाज़ की कुछ बातें और की हैं (जिन्हें यदि ज़रूरत हुई तो आगे चल कर नक़ल किया जाएगा) और यह लिखा है कि हरेक को शिर्क व बिदअत करने से बचना चाहिए अर्थात जिस तरह शिर्क के मामले में जनाब का यह फ़रमाना था कि कोई मुसलमान शिर्क नहीं करता इसलिए किसी मुसलमान को मुश्रिक न कहा जाए। इसी तरह जनाब की राय बिदअत के बारे में है कि किसी काम को बिदअत न कहो यद्यपि बिदअत की जो परिभाषा स्वयं ने की है उसके हिसाब से दसियों व बीसों काम ऐसे हैं जो क़ब्र परस्तों में आम हैं वे बिदअत के अन्तर्गत आते हैं यद्यपि उन्हें बिदअत नहीं समझा जाता जैसे–

मुर्दों के लिए तीजा, सातवां, चालीसवां, कुरआन ख्वानी, कुलशरीफ़, मुर्दे को दफ़नाने के बाद चालीस क़दम पर आकर दुआ मांगना या जनाज़े की नमाज़ के तुरन्त बाद हाथ उठाकर दुआ करना और दफ़नाने के बाद क़ब्र पर खड़े होकर अज़ान देना, हर जुमरात को रूहों की वापसी का अक़ीदा, शबे बराअत की रस्में, रजब की बिदअत (कूंडे, सलातुर्रग़ाइब आदि) यौमे मीलाद का जुलूस और चराग़ां आदि। अज़ान से पहले सलात व सलाम, मीलाद की महफ़िल में सलात व सलाम के समय हाथ बांध कर खड़े होना क्या ये सारे काम बिदअत नहीं? क्या इन्हें दीन और सवाब का काम समझ कर नहीं किया जाता? कालम निगार साहब ने जो मिसालें दी हैं उनमें से एक तो तसबीह की मिसाल है। तसबीह बजाए स्वयं एक दीन का काम नहीं एक गिनने का यंत्र है (जबकि गिनती गिनने की एक चीज़) लेकिन इसके बावजूद इसके इस्तेमाल को भी बिदअत ठहराते हैं और इसके इस्तेमाल से रोकते हैं।

Www.IslamicBooks.Website

कुरआन के अनुवाद की मिसाल बिल्कुल ग़लत है आख़िर कुरआन को समझाने के लिए हर इलाक़े के उलमा अपनी अपनी ज़बान इस्तेमाल करते हैं। अनुवाद भी इसी तफ़हीम की एक शक्ल है जो दीन में वृद्धि नहीं बल्कि कुरआन व हदीस ही से इस का जवाज़ मालूम होता है। यह बिदअत के अन्तर्गत आता ही नहीं है।

अलबत्ता दर्से कुरआन पाक के हलक़े से बहुत से हलकों का स्वीकरण ग़लत है नबी करीम सल्ल0 सहाबा रज़ि0 को सम्बोधित करते थे तो प्राकृतिक रूप से हलका ही बन जाता होगा लेकिन आज कल ज़िक्र के जो विशेष हलक़े बना लिए गए हैं उनसे इन दर्स के हलकों का क्या ताल्लुक़? दोनों में ज़मीन व आसमान का फ़र्क़ है। यही कारण है कि इस प्रकार का ज़िक्र का हलक़ा एक बार हज़रत अब्दुल्लाह बिन मसऊद रज़ि0 ने देखा तो इस पर बड़े क्रोधित हुए और इसे गुमराही क़रार दिया। अतएव यह घटना सुनन दारमी में मौजूद है हम यहां पूरी घटना प्रस्तुत करते हैं–

" इमाम दारमी यह रिवायत लाए हैं कि हज़रत अबू मूसा अशअरी ने हज़रत अब्दुल्लाह बिन मसऊद रज़ि0 के पास जाकर कहाः मैने मस्जिद में कुछ लोगों को गोल दायरों (हलक़ों) में बैठे हुए देखा है जो नमाज़ का इन्तिज़ार कर रहे थे और उनके हाथों में छोटी छोटी कंकरियां हैं और दायरे में एक आदमी है जो कहता है सौ बार अल्लाहु अकबर कहो तो लोग उसके कहने से अल्लाहु अकबर कहते हैं। फिर वह कहता है सौ बार ला इला ह इल्लल्लाह कहो। फिर वे ला इलाह इल्लल्लाह कहते हैं। इसके बाद वह कहता है सौ बार सुबहानल्लाह कहो। फिर वे सुबानल्लाह कहते हैं।

हज़रत अब्दुल्लाह बिन मसऊद रज़ि0 ने यह सुनकर हज़रत अबु मूसा अशअरी रज़ि0 से कहा– तुमने यह देखकर उनको क्या

Www.IslamicBooks.Website

कहा? अबु मूसा अशअरी ने जवाब दिया– मैंने तो उन को कुछ नहीं कहा, आपकी राय और आदेश की प्रतीक्षा में हूं। आपने फ़रमाया तुमने उन्हें यह हुक्म क्यों नहीं दिया कि इसकी बजाए वे अपने गुनाहों की गिनती करें और नेकियां बर्बाद न होने की तुम उनको ज़मानत देते।

इसके बाद हज़रत अब्दुल्लाह बिन मसऊद रज़ि० स्वयं मस्जिद में पहुंचे और उन हलकों (गोल दायरों में) में से एक हलके के क़रीब खड़े होकर फ़रमाया तुम यह क्या कर रहे हो? उन्होंने जवाब में कहा– अबु अब्दुर्रहमान (अब्दुल्लाह बिन मसऊद की कुन्नीयत) हम (इन कंकरियों द्वारा) तकबीर, तहलील और तसबीह गिन रहे हैं। फ़रमाया– इसके बजाए अपने गुनाह गिनो, मैं तुम्हें ज़मानत देता हूं कि तुम्हारी नेकियों में से कोई चीज़ बर्बाद नहीं होगी। इसके बाद फ़रमाते हैं ऐ मुहम्मद की उम्मत! तुम कितनी जल्दी विनाश की ओर चल पड़े हो, अभी तो नबी सल्ल० के सहाबा बड़ी संख्या में मौजूद हैं और आपके कपड़े भी पुराने नहीं हुए और न अभी आपके बर्तन टूटे हैं (अर्थात आपके देहान्त को अधिक समय नहीं हुआ) मुझे उस ज़ात की क़सम है जिसके क़ब्ज़े में मेरी जान है या तो तुमने कोई ऐसा दीन तलाश कर लिया है जिसमें मुहम्मद के दीन से अधिक पथ प्रदर्शन है या तुम गुमराही के दरवाज़े खोल रहे हो?

उन्होने (विर्द व वज़ीफ़ा वालों ने) कहा– ऐ अब्दुर्रहमान! अल्लाह की क़सम हमारी नीयत तो केवल नेकी हासिल करने की है। तो जवाब में अब्दुल्लाह बिन मसऊद रज़ि० कहते हैं कितने ही नेकी की नीयत से अमल करने वाले उससे वंचित रहते हैं।"

(इसके बाद उन्होंने यह हदीस बयान फ़रमायी–)

Www.IslamicBooks.Website

" कुछ लोग होंगे जो कुरआन पढ़ेंगे लेकिन उसके हलक़ों से आगे नहीं बढ़ेगा। अल्लाह की क़सम ऐसे लोग शायद तुम्हीं ही में से ज्यादा हों।" फिर आप वहां से चले गए। हज़रत अम्र बिन सलमा बयान करते हैं कि जंग नहरवान में इन (हलका बांधकर ज़िक्र करने वालों) की बड़ी संख्या ख़ारिज के साथ थी और हम मुसलमानों पर तीर बरसा रही थी।"

इस घटना में देख लीजिए कि एक उच्च कोटि सहाबी उस ज़िक्र के हलक़े को गुमराही का दरवाज़ा खोलने के बराबर ठहरा रहे हैं जिसे कालम निगार जायज़ होने की सनद प्रदान कर रहे हैं। हमने यह पूरी घटना इसी लिए नक़ल की है कि इससे सुन्नत व बिदअत की हक़ीक़त स्पष्ट होती है और मालूम होता है कि दीन में अपनी ओर से कोई तरीक़ा गढ़ लेना भी बिदअत है। कालम निगार साहब की यह दलील ज़िक्र के हलके के स्वीकरण में कितनी हस्यास्पद है कि.....

" हलक़ा बना कर ज़िक्र करना बिदअत नहीं क्योंकि कुरआन पाक में बार बार ज़िक्र करने का हुकम है और नबी सल्ल0 के पवित्र कार्य काल में ज़िक्र होता था।"

इस बयान करने के तरीक़े को थोड़ा सामान्य कर दिया जाए तो दीन बच्चों का खिलौना बन कर रह जाएगा। कल कोई व्यक्ति कहे कि नमाज़ पांच समय की बजाए छः वक़्त पढ़नी चाहिए या ज़ोहर, असर और इशा के चार फ़र्ज़ों की बजाए आठ फ़र्ज़ रकअतें पढ़नी चाहिए। क्योंकि कुरआन ने नमाज़ की बड़ी ताकीद की है और रिसालत के दौर और सहाबा, ताबअीन के दौर में बड़ी पाबन्दी से मुसलमान नमाज़ का फ़रीज़ा अदा करते थे।

ज़कात ढाई प्रतिशत की बजाए पांच प्रतिशत होनी चाहिए

Www.IslamicBooks.Website

क्योंकि कुरआन ने ज़कात की भी बड़ी ताकीद की है और पहले ख़लीफ़ा ने ज़कात न देने वालों से जिहाद किया था। सच फ़रमाइए सलात व ज़कात में वृद्धि और इसके लिए नए तरीके ईजाद करने के लिए क्या यह दलील कोई महत्व रखती है कि कुरआन में इसका बार बार ज़िक्र है?

बार बार ज़िक्र होने का यह मतलब किस तरह हो गया कि इस काम को आप जिस तरह चाहें कर लें। बार बार ज़िक्र से केवल इसका महत्व ही मालूम होता है न कि इससे नए तरीके ईजाद करने की इजाज़त निकलती है उसे करना तो उसी तरीके से पड़ेगा जिस तरह नबी सल्ल० ने किया है। इसका सारा महत्व इसी सुन्नत के अनुसरण में है यदि यही चीज़ (सुन्नत का अनुसरण) खो गयी तो इसकी सारी अहमियत ही ख़त्म हो गयी वह सिरे से ख़ैर (भलाई) ही नहीं रहा। पूरा का पूरा शर बन गया। सुन्नत नहीं बिदअत हो गया। और सवाब के बजाए गुनाह का काम हो गया।

इसलिए जनाब! बिदअत की वह परिभाषा जो कि आपने की अर्थात–

" जो दीन में बिल्कुल नयी हो जिसका पहले से कोई वजूद ही न हो।" यह परिभाषा पूर्ण एवं मान्य नहीं है इसे पूर्ण व मान्य बनाने के लिए बिदअत की परिभाषा में यह वस्तु भी माननी पड़ेगी कि..

उसके प्रेरक और साधन भी नबी सल्ल० के ज़माने में मौजूद हों और कोई ख़ास रुकावट भी न हो। इसके बावजूद नबी सल्ल० ने उसे अपनाया न हो तो वह काम बिदअत होगा और शरीअत के कामों में व सुन्नत में गुलू करके अर्थात सीमा से आगे बढ़कर वृद्धि होगी यही बिदअत होगी।

उदाहरण स्वरूप नबी सल्ल० के ज़माने में भी मुसलमान मरते

Www.IslamicBooks.Website

रहे उनकी मग़फ़िरत के लिए, कुरआन ख्वानी के लिए, कुरआन भी मौजूद था लेकिन नबी सल्ल0 ने (साधनों व प्रेरक के बावजूद) मग़फ़िरत के लिए न कुल शरीफ़ किए, न कुरआन ख़्वानी की। केवल जनाज़े की नमाज़ पढ़ी या पढ़ायी और दफ़नाने के बाद खड़े होकर मग़फ़िरत की दुआ की। इस हिसाब से मुर्दे की मग़फ़िरत के लिए नमाज़े जनाज़ा और मग़फ़िरत की दुआ के अलावा दफ़न के बाद जो कुछ अब किया जाता है जैसे कुल शरीफ़, कुरआन ख़्वानी, तीजा, सातवां, चालीसवां, ही ल–ए इसक़ात आदि ये सब बिदअत होंगी अलबत्ता ईसाले सवाब के दो तरीक़े अपनाने जायज़ हैं जो विभिन्न हदीसों से साबित हैं।

इसी तरह किसी शरअी काम व सुन्नत में इबादत के तौर पर किसी प्रकार का मुबालग़ा व वृद्धि भी बिदअत होगी। इसके स्पष्टीकरण के लिए स्वयं नबी सल्ल0 के दौर की वह घटना काफ़ी है जो हदीसों में तीन व्यक्तियों की आती है कि एक व्यक्ति ने सारी रात जाग कर इबादत करने, दूसरे ने निरंतर सदैव रोज़े रखने और तीसरे ने शादी से बचने का इरादा ज़ाहिर किया। और उद्देश्य इन तीनों का ज़्यादा से ज़्यादा अल्लाह की इबादत था लेकिन जब नबी सल्ल0 को इन के इरादों का पता चला तो आपने फ़रमाया– मैं रात को सोता भी हूं और कुछ जाग कर इबादत भी करता हूं, कभी रोज़ा रख लेता हूं कभी छोड़ देता हूं। मैंने शादियां भी की हैं और पत्नियों के हक़ भी अदा करता हूं। अब तुमने जो उल्लिखित प्रतीज्ञा की है यद्यपि तुम्हारा उद्देश्य इनसे अल्लाह की ज़्यादा से ज़्यादा इबादत करना ही है लेकिन ये तरीक़े मेरी सुन्नत के ख़िलाफ़ हैं और जो मेरी सुन्नत से मुंह मोड़ेगा उसका कोई ताल्लुक़ मुझसे नहीं है।

(सही बुख़ारी व मुस्लिम मिश्कात –27)

Www.IslamicBooks.Website

इस हदीस की रोशनी में स्पष्ट हो जाता है कि किसी भी सुन्नत और शरअी कामों में बढ़ा चढ़ाकर अमल करने चाहे वह इबादत के उद्देश्य से ही क्यों न हो वृद्धि की जाएगी वह नबी सल्ल0 की सुन्नत के ख़िलाफ़ और बिदअत होगा।

मन क़ाला लाइलाह इल्लाहु दख़लल जन्न त (जिसने कहा ला इला ह इल्लाह वह जन्नत में दाखिल होगा का सही मतलब

नबी सल्ल0 के इर्शाद गरामी मन क़ाला ला इलाह इल्लल्लाह दख़लल जन्नत को सही रूप से समझने में अधिकांश लोगों ने ग़लती की है। उनका विचार है कि केवल कलिमा तौहीद के ज़बानी पढ़ लेने से जहन्नम से मुक्ति और जन्नत में दाखिले का टिकट मिल जाता है यद्यपि ऐसा नहीं है।

ऐसा समझने वाला अपने आपको धोखे में डालने वाला है क्योंकि न तो उसने कलिम ए तौहीद को समझा और न ही इस पर सोच विचार किया। क्योंकि इस कालिमे के वास्तविक मायना यह हैं कि तमाम क़िस्म के उपास्यों से विमुखता प्रकट की जाए और हर क़िस्म की उपासना केवल अल्लाह के लिए की जाए और अल्लाह की मर्ज़ी और मन्शा के अनुसार इस पर अमल किया जाए। अब जो व्यक्ति इबादत में इस कालिमे के अधिकारों की देख भाल नहीं करता, या कुछ इबादतों की अदाएगी तो करता है लेकिन इसी के साथ साथ ग़ैरुल्लाह की पूजा भी करता है जैसे मृत औलिया अल्लाह को पुकारना, उनके नाम की नज़्र नियाज़ मानना तो ऐसा व्यक्ति वास्तव में कलिमा ला इला ह इल्लल्लाह की बुनियाद को गिराता है। ऐसे व्यक्ति का दावा उसके लिए कोई लाभकारी न होगा और न ही उसे अल्लाह की यातना से बचा सकेगा। यदि केवल

Www.IslamicBooks.Website

ज़बान का इक़रार काफ़ी होता तो मुश्रिकीन नबी सल्ल0 से दुश्मनी न रखते और न उनसे जंग की नौबत आनी।

(हिदायतुल मुस्तफ़ीद 1– 242)

Www.IslamicBooks.Website

(13)

ग़लत अनुवाद व टीका करने पर रोक लगाने के क़ानून की मन्ज़ूरी

1987 ई0 में क़ौमी असेम्बली ने एक क़ानूनी मसविदे की सर्वसम्मति से मन्ज़ूरी दी थी जिसका उद्देश्य कुरआन की ग़लत अनुवाद व टीका को रोकना था। बाद में इस मसविदे का क्या हश्र हुआ? अल्लाह ही बेहतर जानता है फिर भी यह एक अच्छा क़ानून था जिसके बारे में अखबारों में पढ़कर खुशी हुई थी और इसका समर्थन निम्त प्रस्तुत सम्पादकीय में किया गया था और इस को कुछ और बेहतर बनाने के लिए कुछ प्रस्ताव भी प्रस्तुत किए गए थे। इस सम्पादकीय के महत्व को देखते हुए इसे समाचार सहित इस पुस्तक में शामिल किया जा रहा है। इसके बाद हम अपनी राए लिखेंगे। लेखक

इस्लामाबाद– 17 सितम्बर (विशेष संवाद दाता) आज क़ौमी असेम्बली ने ग़ैर मुस्लिमों से इस्लाम को सुशक्षिंत रखने और उन्हें अपने असत्य अक़ीदों के प्रचार प्रसार से रोकने के लिए एक क़ानून सर्व सम्मति से मन्ज़ूर किया है। इस क़ानून के अन्तर्गत अब पाकिस्तान भर में कोई ग़ैर मुस्लिम (क़ादियानी भी) कुरआन मजीद का अनुवाद व टीका मुसलमानों के ईमान व आस्था के विरुद्ध अपने अक़ीदे को बढ़ावा देने के लिए तैयार करके प्रकाशित नहीं कर सकेगा। यदि वह ऐसा करेगा तो दंड का हक़दार होगा। असेम्बली ने परिषद की ओर से प्रस्तुत इस संशोधित क़ानून को स्वीकृत कर

Www.IslamicBooks.Website

लिया अब इसके अन्तर्गत यदि कोई ग़ैर मुस्लिम कुरआन मजीद का अनुवाद करेगा या किसी आयते करीमा या मुसलमानों के अक़ीदे के विरुद्ध अनुवाद और टीका करेगा तो वह दंड का हक़दार होगा। धार्मिक एवं अल्प संख्यक मामलों के मंत्री हाजी मुहम्मद सैफुल्लाह खां ने कुरआन मजीद के प्रकाशन में ग़लतियों की रोक थाम के क़ानून प्रदत्त 1973 ई0 में संशोधन करने का बिल प्रस्तुत किया। इस बिल पर तक़रीर करते हुए हाजी सैफुल्लाह खां ने कहा कि इसका उद्देश्य यह है कि वीडियों रिकार्डिंग एवं टी वी सी डी की तैयारी में ग़लतियों को रोका जाए और ऐसे ग़ैर मुस्लिम लेखकों को दंड दिया जाए जो कुरआन मजीद का अनुवाद व टीका मुसलमानों के ईमान एवं आस्था के विरुद्ध करें और इसी के साथ कैसिट व सी डी तैयार करने वाला संस्थान भी दंड का हक़दार होगा।

(दैनिक नवाए वक़्त 18 सितम्बर 1987)

यह समाचार आपने पढ़ लिया। निसन्देह यह एक बड़ा अच्छा क़दम उठाया गया है लेकिन हमारे विचार में इससे भी ज़्यादा उन अनुवादों और टीकाओं का अवलोकन करके उनकी छान बीन करना ज़रूरी है जो स्वयं कुछेक मुसलमानों की ओर से प्रकाशित हो रही हैं और जिनमें बुज़ुर्गों की मान्य और सर्व सम्मति से प्रमाणिक सामगी के ख़िलाफ़ अपने गुमराह और शरारत पूर्ण गढ़े हुए धर्म को साबित करने के लिए अत्यन्त बे दर्दी के साथ कुरआन हकीम के भाव एवं भावार्थ में परिर्वतन से काम लिया गया है।

आज के अंक में हम एक अनुवाद एवं टीका के कुछ टुकड़े प्रस्तुत करके अपनी राए का स्पष्टी करण करते हैं। आशा है कि उल्लिखित क़ानून तैयार करने वाले इस महत्वपूर्ण पहलू की ओर भी अपना ध्यान आकृष्ट करेंगे। लीजिए कुछ मिसालें देखिए।

Www.IslamicBooks.Website

अनुवाद है मौलाना अहमद रज़ा खां बरेलवी का और टीका है मौलाना नईमुद्दीन मुरादाबादी की।

इस कुरआन मजीद के हाशिए पर इय्याक नसतअीन के अर्न्तगत यह लिख कर "मदद चाहे वास्ते से हो या बिला वास्ते हर तरह अल्लाह के साथ ख़ास है। वास्तविक मदद करने वाला वही है बाक़ी सयंत्र व सेवक व दोस्त आदि सब अल्लाह के मदद गारों के द्योतक हैं।" टीका कार लिखते हैं–

"इससे यह समझना कि औलिया व अम्बिया से मदद लेना शिर्क है असत्य अक़ीदा है क्योंकि सत्य के मुक़र्रब बन्दों की इमदाद अल्लाह की इमदाद है। दूसरों अर्थात ग़ैरों की मदद नहीं।" (कुरआन मजीद अनुवादक मौलाना अहमद रज़ा खां व टीका पर हाशिया उर्दू मौलाना नईमुद्दीन मुरादाबादी पृ0 3)

अर्थात कुरआन करीम की जिस आयत में मुसलमानों को यह हुक्म दिया गया है कि मदद भी इबादत की तरह केवल अल्लाह का हक़ है जिस तरह अल्लाह के सिवा किसी की इबादत जायाज़ नहीं (यदि किसी और की इबादत की जाएगी तो वह शिर्क करना होगा) इसी तरह मदद मांगना (अलौकिक तरीक़े व साधनों से मदद चाहना) भी अल्लाह के सिवा किसी और से जायज़ नहीं (यदि किसी और से अप्राकृतिक साधनों के तरीक़े से मदद मांगी जाएगी तो वह शिर्क होगा) उसी आयत से उल्लिखित टीका में शिर्क (अर्थात मृत औलिया व अम्बिया से अप्राकृतिक साधनों के तरीक़े से मदद) का जवाज़ साबित करने की निन्दित कोशिश करके वास्तविक परिवर्तन करने का गुनाह किया गया।

2– इसी टीका के हाशिए में व मिम्मा रज़क़नाहुम युनफ़िक़ून के अन्तर्गत लिखा है–

Www.IslamicBooks.Website

" ग्यारहवीं, फ़ातिहा, तीजा, चालीसवां आदि भी इसमें दाखिल हैं कि वे सब सदकए नाफ़िला हैं।" (पू0 – 14)

यद्यपि ग्यारहवीं हज़रत शैख़ अब्दुल क़ादिर जीलानी रह0 की खुशनूदी के लिए की जाती है और इसमें यह अक़ीदा मौजूद होता है की ग्यारहवीं से हज़रत पीर साहब खुश होंगे जिससे हमारे कारोबार में तरक्क़ी होगी। हमारी हाजतें पूरी होंगी अर्थात पीर साहब पूरी करेंगे और यदि हमने ग्यारहवीं में कोताही की तो पीर साहब नाराज़ होंगे जिससे हमारा कारोबार ठप्प हो जाएगा और हमारी हाजतें पूरी होने से रह जाएंगी।

इस अक़ीदे के अन्तर्गत अग्यारहवीं अल्लाह के लिए सदक़ए नाफ़िला नहीं बल्कि ग़ैरुल्लाह के लिए नज़्र है जो एक मुर्दा बुज़ुर्ग की कायनात में तसर्रुफ़ के अख्तियार रखने वाला समझकर उसकी रज़ामन्दी के लिए अदा की जाती है जो खुला शिर्क माना गया है इस खुले व स्पष्ट शिर्क को अल्लाह की राह में खर्च करने के मायना में दाख़िल करना कुरआन हकीम में सख्त घिनौना परिवर्तन करने जैसा है।

इसी तरह फ़ातिहा, तीजा और चालीसवां आदि की रस्में भी हिन्दुओं से ली हुई रस्में हैं जिनका इस्लामी शरीअत में कोई सबूत नहीं। इनको दीन का हिस्सा या सवाब समझकर करना बिदअत और दीन में परिवर्तन है। इन बिदअतों को भी अल्लाह की राह में खर्च करने में दाखिल करना वास्तविक परिवर्तन है। मय्यित के लिए ईसाले सवाब करना जायज़ और सही है लेकिन इसके लिए किसी दिन का ख़ास करना और सारी बिरादरी को जमा करने का कोई शरअी सबूत नहीं है। मय्यित के ईसाले सवाब के लिए यदि सदक़ा करना हो तो किसी ख़ास दिन को निश्चित किए बिना सदक़ा कर

Www.IslamicBooks.Website

दिया जाए और उसे पूरी बिरादरी के लोगों की बजाए ग़रीबों, पीड़ितों और असहाय में बांट दिया जाए।

व मिनन्नासि की टीका करते हुए हाशिए में यह टिप्पणी की गयी है–

" इससे मालूम हुआ कि किसी को बशर कहने में इसके कमालात व फ़ज़ाइल के इन्कार का पहलू निकलता है इसलिए कुरआन पाक में जगह जगह अम्बिया किराम को व्यक्ति या मनुष्य कहने गलो को काफ़िर कहा गया है और हक़ीक़त में अम्बिया की शान में ऐसा शब्द अदब से दूर और काफ़िरों का दस्तूर है।

इस टिप्पणी में तीन बातें कही गयी हैं–

1– किसी को बशर कहना उसके कमालात व फ़ज़ाईल का इन्कार है।

2– कुरआन में जगह जगह अम्बिया किराम को बशर कहने वालों को काफ़िर कहा गया है।

3– अम्बिया को बशर ठहराना और कहना काफ़िरों का दस्तूर है।

यद्यपि ये तीनों बातें कुरआन की स्पष्ट आयतों के ख़िलाफ़ हैं–

कुरआन में स्पष्ट शब्दों में तकरार के साथ अम्बिया के बशर होने का इक़रार किया गया है। यदि बशर के इक़रार में फ़ज़ाइल व कमालात का इन्कार है तो कुरआन करीम में अम्बिया के बशर होने को ज़ोर दार शब्दों में क्यों बयान किया गया है? कुरआन के इस बयान करने के अन्दाज़ से साफ़ मालूम होता है कि अम्बिया अलैहि0 को बशर मानने में (जैसा कि वास्तव में है भी) न उनका कोई अपमान है न उनके फ़ज़ाइल व कमालात का इन्कार है बल्कि अम्बिया का मूल पद और कमाल ही उनके बशर होने में है न की

Www.IslamicBooks.Website

उनकी बशरियत से इन्कार करने में। यही कारण है कि कुरआन करीम ने उनके बशर होने की विशेषता को अधिक प्रमुखता दी है और इसे प्रशंसनीय कहा है क्योंकि काफ़िर यह मानने के लिए तैयार नहीं थे कि एक बशर भी मनुष्यों का मार्ग दर्शक और रहनुमा बन सकता है? उनका विचार था कि नुबुवत के लिए कोई ग़ैर इन्सानी प्राणी होना चाहिए और जिस व्यक्ति ने उनके सामने नुबुवत का दावा किया था वह चूंकि उनकी क़ौम का ही एक व्यक्ति होता था जिसके परिवार और वंश को वे सब जानते थे इसलिए वे समझते थे कि यह तो हमारी ही क़ौम का व्यक्ति है हमारा ही रिश्तेदार है और हमारी ही तरह खाता पीता और बाज़ारों में चलता फिरता है इसे भी हमारी तरह सांसारिक चीज़ों की ज़रूरत है यह नबी कैसे हो सकता है? यह हमारा मार्ग दर्शक और रहनुमा कैसे हो सकता है? और पैग़म्बरी के शर्फ़ व कमालात से किस प्रकार सुसज्जित हो सकता है? इस लिए उन्होंने एक " बशर" को नबी और रसूल मानने से इन्कार कर दिया और यूं काफ़िर ठहरे। इस हक़ीक़त को कुरआन हकीम ने इन शब्दों में बयान किया–

" उनके पास उनके रसूल रोशन दलीलें लाए तो बोले क्या आदमी हमें राह बताएंगे? तो काफ़िर हुए।"

(अनुवाद अहमद रज़ा खां)

अनुवाद भी हमने मौलाना अहमद रज़ा खां बरेलवी का नक़ल किया है। इसे देख लीजिए और उल्लिखित हाशिए में जो दावा किया गया है उसे देख लीजिए और कुरआन करीम के फ़ैसले ले लीजिए कि अम्बिया अलै0 को बशर मानना और कहना कुफ़्र है या एक बशर को नबी और रसूल मानने से इन्कार कुफ़्र है

' बस एक निगाह पे ठहरा है फ़ैसला दिल का"

Www.IslamicBooks.Website

कुरआन की इस आयत पर जिसका अनुवाद अहमद रज़ा खां का और हाशिया मौलाना नईमुद्दीन मुरादाबादी का है ज़रा वह भी देख लीजिए कि किस तरह स्वयं अपने मत का खंडन कर दिया है? फ़रमाते हैं।

" उन्होंने बशर के रसूल होने से इन्कार किया और यह कमाल ना समझी और मूर्खता है फिर बशर का रसूल होना तो न मानऔर पत्थर का खुदा होना मान लिया।" (पृ0 888)

कैसा विचित्र तमाशा है कि काफ़िरो यही कमाल की मूर्खता और ना समझी है जो अब बरेलवी उलमा का मसलक क़रार पा गयी है और अम्बिया अलैहि0 के फ़ज़ाइल व कमालात का सारा का सारा आधार भी अब इसी कमाल बे अक़्ली व ना समझी पर रह गया है। सच है–

ख़िरद का नाम जुनूं रख दिया और जुनूं का ख़िरद
जो चाहे आपका हुसने करिश्मा साज़ करे

2– यह दावा है कि–

" कुरआन पाक में जगह जगह अम्बियाए किराम को बशर कहने वालों को काफ़िर कहा गया है।" कुरआन पाक पर बहुत बड़ा आरोप है। " जगह जगह" तो अलग रहा किसी एक स्थान पर भी कुरआन में यह नहीं कहा गया है अलबत्ता इस के विपरीत यह अवश्य कहा गया है कि काफ़िरों के लिए यह बात बड़ी अचरज वाली थी कि एक बशर भी रिसालत व नुबूवत की बुलन्दियों पर सुशोभित हो सकता है। इसलिए उन्होंने बशर को रसूल और मार्गदशक मानने से इन्कार करके कुफ़्र का रास्ता अख़्तियार किया। जिस प्रकार कि सूरह तग़ाबुन की उल्लिखित आयत में भी यही विषय बयान किया गया है।

Www.IslamicBooks.Website

कुरआन के इस टीकाकार का यह दुस्साहस कितना चंचल और विचित्र है कि कुरआन करीम का नाम लेकर वह बात उसकी ओर संबंधित कर रहा है हो कुरआन करीम में कहीं नहीं है। कुरआन की वास्तविक शिक्षा में परिवर्तन की इससे घिनौनी मिसाल शायद ही कोई हो सके?

3– यह दावा कि– "अम्बिया को बशर कहना काफ़िरो का दस्तूर है।

यह भी कुरआन पर आरोप एवं तोहमत और उसमें परिवर्तन है। सवाल यह है कि काफ़िर अम्बिया के बशर होने की बात क्यों करते थे? इसका स्पष्टीकरण भी कुरआन में मिलता है या नहीं? यदि इसका कारण मिलता है तो वह क्या है? क्या वह इसके अलावा भी कुछ और है कि वे नुबूवत और बशर होने को एक दूसरे से भिन्न समझते थे। उनका विचार था कि एक "बशर" रसूल नहीं हो सकता था कम से कम उसे बशर नहीं होना चाहिए (जैसा कि उल्लिखित टीकाकार और उनके हम अक़ीदा लोगों की भी राय है) उनकी इस हैरत को दूर करने के लिए अल्लाह ने अम्बिया की ज़बान से उनके बशर होने की बात कहलवायी और बार बार इस नुक्ते का स्पष्टी करण कराया। इस प्रकार मानो– अम्बिया को बशर कहना अल्लाह और स्वयं अम्बिया का दस्तूर रहा है। काफ़िरों का दस्तूर कदापि नहीं रहा है क्योंकि वे तो उनको नबी मानते ही न थे। वे तो बरेलवियों की तरह यही कहते रहे कि "बशर" रसूल नहीं बल्कि किसी बशर को रसूल मानने से इन्कार करना काफ़िरों का दस्तूर रहा है।

अब ये हमारे दोस्त स्वयं ही सोच लें कि काफ़िरों के दस्तूर को किस ने अपना अक़ीदा बना रखा हे।

Www.IslamicBooks.Website

इन कुछ मिसालों से ही स्पष्ट है कि उल्लिखित टीका में टीका के नाम पर यह किस तरह कुरआनी तथ्यों का इन्कार किया गया है इसलिए हम क़ानून का मसविदा तैयार करने वालों से कहेंगे कि वे इसका भी कोई इलाज सोचें कि आसतीन के सांप उन ग़ैर मुस्लिमों से ज़्यादा ख़तरनाक हैं जिनके लिए आपने क़ानून का मसविदा तैयार किया है।

और इसका एक ही हल है और इलाज है कि कुरआन की टीका के लिए सहाबा किराम (रज़ि0) के तरीक़े और उसूल को ज़रूरी ठहराया जाए।

(साप्ताहिक तन्ज़ीम अहले हदीस 13 अक्टूबर 1987)

Www.IslamicBooks.Website

(14)

हज़रत बिलाल (रज़ि0) से संबंधित घटना की हक़ीक़त

मासिक "मिन्हाजुल कुरआन" लाहौर (अंक नवम्बर 1987) और मासिक "रज़ाए मुस्तफ़ा" (अंक जनवरी 1980) में मुहद्दिस इब्ने असाकर के हवाले से हज़रत बिलाल रज़ि0 की एक घटना नक़ल की गयी है जिस में है कि नबी सल्ल0 की वफ़ात के बाद जब हज़रत बिलाल रज़ि0 शाम चले गए थे तो लगभग छः महीने बाद आप (सल्ल0) को सपने में देखा तो आपने फ़रमाया (इसके बाद पूरी रिवायत मिन्हाजुल कुरआन के अनुसार इस प्रकार है)

"ऐ बिलाल! तूने हमें मिलना छोड़ दिया क्या हमारी मुलाक़ात को तेरा जी नहीं चाहता।"

सपने से जागते ही ऊंटनी पर सवार होकर लब्बैक या सय्यिदी या रसूलुल्लाह कहते हुए मदीना मुनव्वरा की ओर चल दिए। जब मदीना में दाख़िल हुए तो सब से पहले मस्जिदे नबवी में पहुंच कर आप (सल्ल0) को तलाश करना शुरू किया। कभी मस्जिद में तलाश करते और कभी हुजरों में, जब न पाया तो– आपकी क़ब्र अनवर पर सर रख दिया और रोना शुरू कर दिया। फिर कहा– ऐ अल्लाह के रसूल आपने फ़रमाया था कि आकर मिल जाओ गुलाम हलब से हाज़िर है। यह कह कर बेहोश हो गए और मज़ार के पास गिर पड़े। काफ़ी देर बाद होश आया। इतने में सारे मदीने में ख़बर हो गयी कि मोअज्ज़िने रसूल हज़रत बिलाल रज़ि0 आए हैं। मदीना

Www.IslamicBooks.Website

तय्यबा के बूढ़े जवान, मर्द औरतें और बच्चे इकट्ठे हो गए और कहा– एक बार वह अज़ान सुना दो जो महबूबे खुदा को सुनाते थे। आपने फ़रमाया– मैं माफ़ी चाहता हूं क्योंकि मैं जब अज़ान पढ़ता था तो अशहदु अन्ना मुहम्मदर्रसूलल्लाह कहते समय आपकी ज़ियारत से मुर्शरफ़ होता था आपके दीदार से अपनी आंखों को ठंडक पहुंचाता था अब किसे देखूंगा?

कुछ सहाबा ने मशवरा दिया कि हसनैन करीमैन रज़ि0 से कहा जाए। जब वे हज़रत बिलाल को अज़ान के लिए कहेंगे तो वे इन्कार न कर सकेंगे। एक साहब जाकर शहज़ादों को बुला लाए। इमाम हुसैन रज़ि0 ने बिलाल का हाथ पकड़ कर कहा–

"बिलाल आज हमें वही अज़ान सुनाओ जो हमारे नाना जान को सुनाते थे।"

बिलाल से इन्कार न हो सका। अतः उसी जगह खड़े होकर अज़ान देना शुरू की जहां हुजूर सल्ल0 की ज़िन्दगी मे देते थे। इसके बाद का हाल रिवायत में यूं बयान हुआ है–

"जब आपने ऊंची आवाज़ में अज़ान के शुरू के कालिमात अदा करना शुरू किए तो मदीना वाले सिसकियां लेकर रोने लगे आप जैसे जैसे आगे बढ़ते गए भावनाओं में वृद्धि होती गयी। जब अशहदु अन्ना मुहम्मदर्रसूलल्लाह के कलिमात पर पहुंचे तो सारे लोग यहां तक कि पर्दे वाली औरतें भी घरों से बाहर निकल आयीं। सभी यह कल्पना करने लगे कि जैसे रसूले खुदा दोबारा तशरीफ़ ले आए हैं (रोने गिड़ गिड़ाने का अजीब मन्ज़र था) आप (सल्ल0) की वफ़ात के बाद मदीना वालों पर इस दिन से बढ़कर इतनी करुणा कभी नहीं सवार हुई।"

(मिन्हाजुल कुरआन– पृ0 17–19)

Www.IslamicBooks.Website

हज़रत बिलाल की घटना की तहक़ीक़

हज़रत बिलाल रज़ि0 की यह घटना (अज़ान वाली घटना) किसी मुसतनद रिवायत से साबित नहीं जिसकी दलीलें निम्न हैं–

1– हाफ़िज़ इब्ने हजर रहिम0 ने " अल असाबा" में हज़रत बिलाल रज़ि0 के अनुवाद में इस घटना का सिरे से कोई उल्लेख नहीं किया। केवल यह लिखा है–

"हज़रत बिलाल (रज़ि0) नबी सल्ल0 की वफ़ात के बाद जिहाद के उद्देश्य से मदीना से चले गए थे यहां तक कि शाम में वफ़ात पा गए।"

2– "अल इस्तीआब" में दूसरी किताब हाफ़िज़ इब्ने अब्दुल बर्र की " अल इस्तीआब" है इसमें भी इस घटना का कोई उल्लेख नहीं है अलबत्ता इस में जिहाद के उद्देश्य से शाम जाने की रिवायत थोड़े विस्तार के साथ मौजूद है जिसके शब्द इस प्रकार हैं–

"जब नबी सल्ल0 की वफ़ात हो गयी तो हज़रत बिलाल रज़ि0 ने मुल्क शाम जाने का इरादा किया, हज़रत अबु बकर रज़ि0 ने फ़रमाया– "तुम मेरे ही पास रहो।" हज़रत बिलाल ने कहा– ' यदि आपने मुझे अल्लाह के लिए आज़ाद कराया था तो मुझे अल्लाह की तरफ़ जाने के लिए छोड़ दीजिए।" (अर्थात अल्लाह की राह में जिहाद के लिए जाने दीजिए) आपने यह बात सुनकर उनको जाने की इजाज़त दे दी। अतएव हज़रत बिलाल रज़ि0 शाम चले गए और वहीं रहे यहां तक कि वफ़ात पा गए।"

3– सहाबा किराम रज़ि0 के हालात में तीसरी किताब उसदुल ग़ाबा" है। इस किताब में हाफ़िज़ इब्नुल असीर ने यह घटना लिखी है– लेकिन बिना सनद के। देखिए(उसदुलग़ाबा 1–207–208)

अलबत्ता यह घटना हाफ़िज़ ज़हबी रह0 ने " सियर

Www.IslamicBooks.Website

ऐअलामुन्नुबला'' में सनद के साथ नक़ल की है और अन्त में इसके बारे में यह फ़ैसला दिया है–

'' इसकी सनद कमज़ोर है (भरोसा करने योग्य नहीं) है

अर्थात हाफ़िज़ ज़हबी ने यह फ़ैसला कर दिया कि सनद की दृष्टि से यह रिवायत किसी काम की नहीं है। इसके अलावा मुल्ला अली क़ारी हनफ़ी रह0 ने भी इसका उल्लेख अपनी मौजूआत की किताब में किया है और इसके बारे में कहा है–

'' हज़रत बिलाल रज़ि0 का नबी सल्ल0 का सपने में देखकर मदीने वापस आकर अज़ान देना और मदीना वालों का इस पर रोना धोना, ये सब बे असल हैं और इसका मन गढ़त होना स्पष्ट है।''

(पू0 413)

जनाब प्रो ताहिरुल क़ादरी ने ''अज्ज़लात वल बशर फ़िस्सलात अला खैरुल बशर'' से यह रिवायत नक़ल की है और '' अस्सलात'' में इब्ने असाकर के हवाले से दर्ज की गयी है लेकिन इब्ने असाकर की तारीख़ का जो खुलासा ''तहज़ीब तारीख़ इब्ने असाकर'' के नाम से छपा है उसमें यद्यपि हज़रत बिलाल रज़ि0 का उल्लेख बड़े विवरण के साथ मौजूद है लेकिन यह रिवायत इसमें दर्ज नहीं है। देखिए– (3–3017 315) अर्थात जिस मुहिद्दस के हवाले से यह रिवायत नक़ल होती आयी है उसकी प्रकाशित पुस्तक में यह रिवायत ही नहीं है।

फिर भी सनद की दृष्टि से यह रिवायत विश्वास योग्य नहीं है। प्रो0 साहब उल्लिखित अपने समकालीन बरेलवी उलमा में ज्ञान एवं श्रेष्ठता की दृष्टि से प्रमुख समझे जाते हैं उन्हें इस प्रकार की रिवायत बयान करने से बचना चाहिए जो सनद के हिसाब से भी सही साबित नहीं है ताकि उनकी इल्मी साख घायल न हो।

Www.IslamicBooks.Website

इसके अलावा जब रिवायत ही विश्वास योग्य न हो तो इससे क़ामूस मुजद्दीन मुहम्मद बिन याक़ूब फ़ीरोज़ा बादी) के लेखक ने ज़ियारत रोज़ा ए रसूल पर जो विवेचन किया है और जिसे प्रो0 साहब ने विशेष रूप से बयान किया है वह विवेचन भी बेकार ही क़रार पाता है। इसी तरह " रजाए मुस्तफ़ा" के लेखक ने भी इससे कई बातों पर विवेचन किया है। जैसे–

○ ज़ियारत रोज़ ए अक़दस।

○ नबी की क़ब्र की ज़ियारत की नीयत से सफ़र करना।

○ नबी सल्ल0 का जिन्दा रूप में वास्तविक जीवित व मुख्तार व सब कामों को करने में समर्थ होना और फिर इससे यह नतीजा निकाला है कि बरेलवी मसलक हक़ और नजदी वहाबी धर्म असत्य है जो शाने रिसालत व हदीस मा अना अलैहि व असहाबी के विरुद्ध है। (रज़ाए मुस्तफ़ा– 8)

जहां तक रोज़ए अक़दस की ज़ियारत की बात है उसकी ज़ियारत करने में कोई मतभेद नहीं। अहले हदीस भी नबी की क़ब्र की ज़ियारत को मुसतहब समझ कर जाते हैं और इसको मानते हैं।

मतभेद है तो दूसरी बात में कि तक़र्रुबन नबी की ज़ियारत की नीयत से सफ़र करके जाना सही है या नहीं? क्योंकि ऐसा सफ़र हदीसे रसूल के ख़िलाफ़ है। हदीस की रू से तक़र्रुब की नीयत से केवल मस्जिदे हराम (ख़ाना काबा), मस्जिदे नबवी और मस्जिदे अक़सा का सफ़र करना जायज़ है इनके अलावा किसी और जगह का तक़र्रुबी सफ़र सही नहीं है।

रज़ाए मुस्तफ़ा के लेखक ने उल्लिखित घटना हज़रत बिलाल रज़ि0 से विवेचन करते हुए उल्लिखित हदीसे सहीह के ख़िलाफ़ न केवल नबी की क़ब्र की ज़ियारत की नीयत से सफ़र को जायज़

Www.IslamicBooks.Website

क़रार दिया है बल्कि सहाबा की अधिकांश सहमति का भी दावा कर दिया है यद्यपि जिस उल्लिखित रिवायत पर इतना बड़ा दावा किया गया है वह रिवायत ही सिरे से साबित नहीं।

" शाख़ नाज़ुक पे जो आशियाना बनेगा ना पाएदार होगा"

सहाबा की सहमति तो बाद की बात है पहले घटना का सही साबित होना तो निश्चित हो जाए। हक़ीक़त यह है कि हज़रत बिलाल रज़ि० का शाम जाकर मदीना वापस आना किसी भी सही रिवायत से साबित नहीं। सही रिवायत की रू से आप शाम जाने के बाद वापस नहीं आए और वहीं इन्तिक़ाल हो गया।

" रज़ाए मुस्तफ़ा" के लेखक ने अनेक हवाले बयान किए हैं लेकिन किसी भी हवाले में यह घटना सनद के साथ बयान नहीं हुई। सब में बिना सनद के बयान हुई है। इसलिए जब तक हदीस के पक्के उसूल के अनुसार रिवायत पूरी सनद और सिलसिलए सनद के तमाम प्रमाणिक और ठोस सबूत प्रस्तुत नहीं कर दिए जाएंगे इससे विवेचन सही नहीं होगा।

बाक़ी रहा इससे वास्तविक जीवन पर विवेचन? और फिर कामों को करने में समर्थ होना? ये दोनों बातें कुरआन व हदीस की प्रमाणिक दलीलों के बिल्कुल ख़िलाफ़ हैं। बरेलवी इस प्रकार की निराधार रिवायतों के आधार पर यदि इस प्रकार के अक़ीदे रखतें हैं तो यह अक़ीदे उन्हीं को मुबारक हों लेकिन कोई सच्चा मुसलमान कुरआन व हदीस के ख़िलाफ़ अक़ीदा रखना गवारा नहीं कर सकता जब तक कि उसके सबूत में कोई मज़बूत, स्पष्ट और दो टूक दलील पेश नहीं कर दी जाती।

अल्लाह का शुक्र है कि अम्बिया की वफ़ात के मसले पर हम अपने उन सम्पादकीय कालमों में ज़रूरी बहस कर चुके हैं जो

Www.IslamicBooks.Website

ज़ियाए हरम में प्रकाशित लेख के जवाब में है जिसे हमारे पाठक भी पढ़ चुके हैं जिससे मसले की स्थिति स्पष्ट हो जाती है।

नबी की वफ़ात पर मिन्हाजुल कुरआन की रिवायत

फिर भी अतमामें हुज्जत के तौर पर हम और अधिक हवाले बरेलवी मकतबे फ़िक्र के तर्जुमान मासिक " मिन्हाजुल कुरआन" से पेश करते हैं। लीजिए देखिए कि हक़ीक़त किस बे शर्मी से इन्कार किया जा रहा है।

1– इमाम शाअबी रह0 हज़रत अब्दुल्लाह बिन ज़ैद अन्सारी रज़ि0 के बारे में नक़ल करते हैं कि एक दिन उन्होंने नबी सल्ल0 की सेवा में हाज़िर होकर अर्ज़ की–

" अल्लाह की क़सम या रसूलल्लाह आप मुझे अपनी जान, माल और घर वालों से अधिक प्रिय हैं यदि मैं आकर आपकी (रोज़ाना) ज़ियारत न कर पाऊं तो मेरी मौत हो जाए।"

यह कहने के बाद वह अन्सारी सहाबी बे तहाशा रोने लगे। नबी सल्ल0 ने रोने का कारण पूछा तो यूं बोले–

" या रसूलल्लाह! मैं यह सोच राह हूं कि एक दिन आप दुनिया से तशरीफ़ ले जाएंगे और हम पर भी मौत आ जाएगी। जन्नत में आप अम्बिया अलैहि0 के साथ बुलन्द दर्जात पर पदासीन होंगे और हम यदि जन्नत में गए भी तो आपके दर्जे से कहीं दूर होंगे। आप सल्ल0 ने इस पर कोई जवाब न दिया तो अल्लाह ने यह आयत उतारी–

व ममं युतीउल्लाहु वर्रसूलु फ़उलाइ क मअल्लज़ीन अन्अम

2– हज़रत अब्दुल्लाह बिन मसऊद रज़ि0 से रिवायत है कि नबी सल्ल0 ने फ़रमाया–" मेरी ज़ाहिरी हयात और मेरा[1] विसाल

1– मौत को मौत ही कहना चाहिए। असल अरबी शब्द भी यही है मौत को " विसाल"

Www.IslamicBooks.Website

दोनों तुम्हारे लिए भलाई का सबब हैं।

दूसरे स्थान पर इसकी हिकमत का उल्लेख करते हुए फ़रमाया–

"जब अल्लाह किसी उम्मत पर अपनी विशेष कृपा करने का इरादा कर लेता है तो उस उम्मत के नबी को" विसाल;" (मिलाप) प्रदान करता है और उस उम्मत के लिए शफ़ाअत का सामान कर देता है और जब किसी उम्मत की हलाकत का इरादा करता है तो उसको ज़ाहिरी ज़िन्दगी ही में यातना, का शिकार बनाकर हलाक कर देता है और उस उम्मत की हलाकत द्वारा अपने प्यारे नबी की आंखों की ठंडक प्रदान करता है।

उपरोक्त हदीस में शब्द फ़र्त की व्याख्या करते हुए मुल्ला अली क़ारी लिखते हैं–

" फ़र्त किसी स्थान पर आने वालों की ज़रूरतों को उनके आने से पहले उपलब्ध करने वाले व्यक्ति को कहा जाता है फिर अपने बाद आने वाले की सिफ़ारिश करने वाले के लिए इस्तेमाल होने लगा।

इस उम्मत पर अल्लाह की कितनी बड़ी कृपा है कि आखिरत में पेश होने से पहले उसके लिए हुज़ूर सल्ल0 को सिफ़ारिशी बना दिया गया। इसी लिए आपने फ़रमाया– मेरा विसाल भी तुम्हारे लिए दयालुता है। जब यह बात तै हो गयी कि उम्मत के हक़ में दोनों दयालुता हैं तो अब देखना यह है कि इन दोनों में बड़ी नेमत कौन सी है? तो साफ़ सी बात है कि आप का दुनिया में तशरीफ़ लानाउम्मत

का नाम देने में अक़ीदे की वही ग़लती है कि मुक़र्रबान बारगाहे इलाही को मौत नहीं आती केवल दुनिया से ज़ाहिरी पर्दा कर जाते हैं और अल्लाह से जा तिलत ` हैं। विसाल के शाब्दिक अर्थ भी मिलने के हैं इसलिए मौत को विसाल का नाम देने से बचना चाहिए। (लेखका)

Www.IslamicBooks.Website

के हक़ में ऐसी महान नेमत है कि उसके द्वारा ही दूसरी नेमत हासिल हुई।

इमाम जलालुद्दीन सीवती रह0 उपरोक्त सवाल का जवाब देते हुए शरीअत का उसूल बयान करते हैं कि–

" शरीअत ने जन्म के अवसर पर अक़ीक़ा का हुक्म दिया है और यह बच्चे के पैदा होने पर अल्लाह के शुक्र और खुशी को प्रकट करने की एक सूरत है लेकिन मौत के समय ऐसी किसी चीज़ का हुकम नहीं दिया बल्कि मातम करने से मना किया है। शरीअत के उपरोक्त उसूल का तक़ाज़ा है कि रबीउल अव्वल शरीफ़ में आप सल्ल0 की विलादत के अवसर पर खुशी प्रकट की जाए न वफ़ात पर ग़म।"

इसी मसले पर बात चीत करते हुए मुफ़्ती इनायत अहमद काकोरी हरमैन शरीफ़ैन के हवाले से लिखते हैं–

" उलमा ने लिखा है कि इस महफ़िल में ज़िक्र वफ़ात शरीफ़ न होना चाहिए इसलिए कि यह महफ़िल खुशी मीलाद शरीफ़ के लिए आयोजित होती है। ग़म करना इस महफ़िल में अनुचित है। हरमैन शरीफ़ैन में कदापि वफ़ात को लेकर ज़िक्र नहीं होता।"

(तवारीख़ हबीबुल्लाह–15)

(मासिक मिन्हाजुल कुरआन नवम्बर 1987)

मिनहाजुल कुरआन की असल रिवायत पर सोच विचार कीजिए इसके अनुवाद को न देखिए। जहां मौत और वफ़ात के शब्द का अनुवाद हर जगह विसाल से किया गया है।

पहली रिवायत में सहाबा फ़रमाते कि यह धारणा कि आप निकट ही मौत से दोचार हो जाएंगे।" और जन्नत में बुलन्द दर्जात पर पदासीन हो जाएंगे। इसके जवाब में हुजूर सल्ल0 ने यह नहीं

Www.IslamicBooks.Website

फ़रमाया कि नहीं तुम ग़लत समझे हो मुझे तो मौत ही नहीं आएगी बल्कि अल्लाह ने यह आयत उतार कर ईमान वालों को तसल्ली देदी कि आपको मौत तो बेशक आएगी लेकिन नेक लोगों को जन्नत में आपका साथ नसीब होगा।

दूसरी रिवायत के शब्दों में आपने फ़रमाया "मेरी ज़िन्दगी भी तुम्हारे लिए बेहतर है और मेरी मौत भी तुम्हारे लिए बेहतर है।"

अन्य वाक्यों में भी क़ ब ज़ नबिय्य ह (अपने नबी की रूह क़ब्ज़ कर लेता है) आपकी वफ़ात पर ग़म प्रकट नहीं करना चाहिए। ज़िक्र वफ़ात शरीफ़, ज़िक्र क़िस्सा वफ़ात आदि किस तकरार व व्याख्या से नबी सल्ल0 की मौत और वफ़ात का ज़िक्र आया है। इन तमाम रिवायतों व इबारतों में नबी सल्ल0 की वफ़ात की व्याख्या कुरआन व हदीस के ठीक ठीक अनुसार है– अनुवाद के इस मफ़हूम को स्पष्ट करने की ज़रूरत नहीं है जैसा कि प्रो0 ताहिरुल क़ादरी साहब ने अपने तौर पर कोशिश की है जो हक़ीक़त में – क्या बने बात जहां बात बनाए न बने ही की तर्जुमान है। इन रिवायतों और वाक्यों को उन कुरआन व हदीस की दलीलों की रोशनी में आप देखें जो पिछले पृष्ठों में प्रकाशित हो चुकी हैं तो मसला पूरी तरह स्पष्ट हो जाता है।

इन स्पष्ट दलीलों के बाद रज़ाए मुस्तफ़ा का यह दावा कि बरेलवियों का मसलक सही है और वे मा अना अलैहि व असहाबी की तरह हैं एक मजनूं की बड़ से ज़्यादा हैसियत नहीं रखता। भला जो लोग कुरआन और हदीस सहीहा के ख़िलाफ़ मन गढ़त अक़ीदे व कर्म अपनाए हुए हों वे किस तरह मा अना अलैहि व असहाबी का मिसदाक़ हो सकते हैं? वे तो मन अहदस फ़ी अमरिना हाज़ा मा लै स मिन्हु फ़ हुवा रद्दुन, (बुख़ारी व मुस्लिम) के मिसदाक़ मर्दूद और

Www.IslamicBooks.Website

ग़ायब व ख़ासर हैं न कि सहाबा किराम रज़ि0 की सही रविश पर चलने वाले हैं।

(साप्ताहक तन्ज़ीम अहले हदीस लाहौर 22 जनवरी– 1988)

कमाल दर्जे की निष्ठा शिर्क को छोड़े बिना संभव नहीं

" जो व्यक्ति अपने आपको अल्लाह के हवाले कर दे और व्यवहार में वह भला हो उसने वास्तव में एक भरोसे योग्य सहारा थाम लिया।" (लुक़मान–22)

इस आयत की टीका में हाफ़िज़ इब्ने कसीर रह0 फ़रमाते है।.....

जिस व्यक्ति ने अपने आपको केवल अल्लाह के सामने झुका दिया है अर्थात अपने कर्मों में निष्ठा पैदा कर ली है और उसके आदेशों से मुंह न फेरने की प्रतीज्ञा कर ली है और उसकी भेजी हुई शरीअत का अनुसरण करने के लिए तैयार हो गया। इसी लिए तो उसकी दूसरी विशेषता यह बयान की गयी कि " व हुवा मोहसिनुन" अर्थात अपने अमल व किरदार और उसके आदेशों के अनुसरण और उसके मना करने वाले मामलों से बचने पर तैयार हो।

अतः यह आयत इस बात की गवाह है कि कमाल दर्जे की निष्ठा उस समय तक संभव नहीं जब तक की मनुष्य शिर्क को बिल्कुल न छोड़ दे और शिर्क और मुश्रिकीन से विमुख न हो जाए और उनसे अपना संबंध विच्छेद न कर ले।

(हिदायतुल मुस्तफ़ीद – 1– 251)

Www.IslamicBooks.Website

(15)

कौन कहता है कि अम्बिया और औलिया मरे नहीं? कौन कहता है कि वे मर गए?

जवाब

मासिक " ज़ियाए हरम लाहौर (सितम्बर 1987) में एक लेख" "कौन कहता है कि वे मर गए?" के शीर्षक से प्रकाशित हुआ। लेख का आरंभ इन शब्दों के साथ हुआ–

" कुरआन मजीद में स्पष्ट रूप से यह इर्शाद है कि... " हरेक को मौत का मज़ा चखना है।" जो भी इस दुनिया में आया है एक दिन इस फ़ना होने वाली जगह से कूच भी करना है।" (पृ0 – 85)

कुरआन मजीद के उल्लिखित अल्लाह के फ़रमान और उसके मफ़हूम के स्पष्टीकरण के बाद जो अपनी जगह बिल्कुल सही बयान किया गया है जिसमें मुख्य रूप से हरेक जी ने मौत का मज़ा चखना है जो भी इस दुनिया में आया....." की सामान्य स्थिति विचारणीय है लेकिन इसके बाद लेखक बडे दुस्साहस से इस अल्लाह के इर्शाद से यूं इन्कार फ़रमाने लगे हैं–

" लोग कहते हैं कि सब ने मरना है लेकिन मैं कहता हूं कि सब ने नहीं मरना बल्कि शब्द " मरना" अम्बिया, औलिया किराम के लिए इस्तेमाल करना भी अनुचित है।"

अर्थात पहले स्वयं यह स्वीकार कर आए हैं कि इर्शाद बारी तआला कुल्लु नफ़सिन ज़ाइक़तुल मवति के हिसाब से सब को मरना है लेकिन अब कहते हैं कि–

Www.IslamicBooks.Website

" लोग कहते हैं कि सब को मरना है"

यद्यपि यह दावा लोगों का नहीं बल्कि स्वयं अल्लाह का स्पष्ट इर्शाद है लेकिन अब चूंकि इसका खंडन लेखक को करना था इसलिए इर्शादे बारी तआला को ' लोग कहते हैं" बना दिया और फिर इसका खंडन इस तरह करते हैं....

" लेकिन मैं कहता हूं कि सबको नहीं मरना है।"

अर्थात अल्लाह तआला तो कुरआन में स्पष्ट शब्दों में फ़रमाता हैं कि " सबको मरना है" जिसे लेखक ने स्वयं ही नक़ल किया है मगर अल्लाह के इस " स्पष्ट इर्शाद" का खंडन इस तरह करते हैं कि "सबको नहीं मरना है।"

माशा अल्लाह कितने साहस की बात है कि अल्लाह के स्पष्ट इर्शाद तक का खंडन किया जा रहा है।

आगे इर्शाद होता है–

" बल्कि शब्द " मरना" अम्बिया किराम, औलिया किराम के लिए इस्तेमाल करना भी अनुचित है।"

जनाब लेखक महोदय! ज़रा बताएं कि अम्बिया किराम और औलिया किराम के लिए शब्द "मरना" अनुचित क्यों है? क्या वे प्राणी नहीं? यदि प्राणी हैं तो हर नबी वली को मरना है जिस प्रकार तमाम अम्बिया सिवाए हज़रत ईसा अलैहि0 के मर चुके हैं और ईसा अलैहि0 भी अपने समय पर इस धरती पर उतरने के बाद मौत का शिकार होंगे। मौत से बचाव उन्हें भी हासिल नहीं।

क्या स्वयं कुरआन करीम में अल्लाह ने नबी करीम सल्ल0 को सम्बोधित करते हुए नहीं फ़रमाया–

" ऐ पैग़म्बर! तू भी मरने वाला है और वे भी सब मरने वाले हैं।"

(जुमर–30)

Www.IslamicBooks.Website

सूरह आले इमरान में फ़रमाया–

" क्या यदि मुहम्मद (सल्ल0) मर गए या क़त्ल कर दिए गए तो क्या तुम अपनी एड़ियों पर (इस्लाम से) फिर जाओगे?" (144)

"ऐ पैग़म्बर! हमने आप से पहले किसी भी मनुष्य के लिए सदैव रहना नहीं किया (इस उसूल से आप भी सदैव नहीं रहेंगे)

"क्या यदि आप मर जाएंगे तो क्या वे (काफ़िर) सदैव रहेंगे?" (34)

अर्थात सदैव किसी को नहीं रहना आपको न आपके विरोधी काफ़िरों को, मौत का सामना सब को करना होगा।

" हर वस्तु समाप्त होने वाली है रहने वाली ज़ात रब्बे जुल जलाल वल इकराम के लिए है।" (रहमान–26–27)

"सिवाए अल्लाह की ज़ात के, हर चीज़ हलाक होने वाली है।"

(क़सस–88)

कुरआन की इन स्पष्ट और मोहकम आयतों की मौजूदगी में यह कहना– " अम्बिया और औलिया के लिए शब्द " मरना" इस्तेमाल करना भी "अनुचित" या यह दावा कि– "सबको नहीं मरना है;; किस प्रकार सही हो सकता है?

कुरआन सच्चा है? जो कहता है कि सबको मरना है और अम्बिया और औलिया को भी मरना है या लेखक सच्चा है जो कहता है " सबको नहीं मरना है" बल्कि अम्बिया और औलिया के लिए शब्द " मरना" इस्तेमाल करना भी अनुचित है?" दोनों में से किसे सच्चा समझना सही है?

लेखक की दलीलें

संभव है किसी के ज़हन में यह उलझन पैदा हो कि लेखक भी कुरआन को मानने का दावा कर रहा है फिर वह कुरआन को झुठलाने की यह चंचल और विचित्र हरकत किस तरह कर सकता

Www.IslamicBooks.Website

है? इसलिए निश्चय ही इसके बारे में उसके पास भी कोई दलील होगी जो उसके दावे की बुनियाद होगी।

तो लीजिए! यह भ्रम भी दूर कर लीजिए। लेखक के उपरोक्त वाक्यों में पेश की जाने वाली दलीलें भी देख लीजिए और फिर सोचिए कि वास्तव में कुरआनी हक़ीक़त का खंडन करने के लिए कोई दलील उसके पास मौजूद है? लेखक फ़रमाते हैं–

" अल्लाह के वली मरा नहीं करते बल्कि वे तो जीते हैं। मौत से पहले अपने आपको मार डालते हैं और सदैव के लिए जीवित रहते हैं।"

देखिए कितना बड़ा दावा है कि " अल्लाह के वली मरा नहीं करते" लेकिन दलील? अरबी की एक कहावत नक़ल की है और वह भी ग़लत। सही कहावत इस तरह है– " तुम मर जाओ इससे पहले कि तुम्हें मौत आए।" इस कहावत का मतलब केवल यह है कि मौत के आने से पहले पहले मौत की तैयारी कर लो। कहीं ऐसा न हो कि अचानक मौत आ जाए और तुम ने मौत (अर्थात आख़िरत) के लिए तैयारी न की हो।

इस कहावत से भी यही साबित होता है कि हर बशर के लिए मौत है जो ऐसी हक़ीक़त है कि उससे मुंह नहीं फेरा जा सकता। इससे कुरआन करीम के इस उसूल की कि हर जान के लिए मरना है नफ़ी नहीं होती और न औलिया के न मरने का स्वीकरण होता है।

सदैव के लिए ज़िन्दा रहने का मतलब यदि यह है कि अपने कारनामों के कारण उनका नाम ज़िन्दा रहता है और लोग उनके चरित्र एवं आचरण का प्रचार करते रहते है। तो यह मतलब बेशक सही है। ऐसी ज़िन्दा जावेद ज़िन्दगी हर क़ौम के प्रख्यात लोगों को हासिल होती है इसके लिए तो वली नबी की शर्त भी नहीं है लेकिन

Www.IslamicBooks.Website

यहां जिस ज़िन्दगी पर बहस हो रही है वह यह नहीं है। इस ज़िन्दगी में तो किसी का मतभेद ही नहीं है क्योंकि ऐसे ज़िन्दा व जावेद लोगों की मौत को तो सब मानते हैं अलबत्ता उनकी सेवाओं और कारनामों को हम इतिहास में ज़िन्दा देखते हैं क्योंकि वे इतिहास में ज़िन्दा और मौजूद रहते हैं। लेकिन लेखक के निकट तो इतिहास में ज़िन्दा रहना कदापि नहीं है बल्कि उनके निकट तो बिल्कुल सांसारिक जीवन ही की तरह शारीरिक जीवन है यद्यपि ऐसा जीवन सदैव के लिए किसी को भी नहीं दिया गया है। सदैव का जीवन केवल अल्लाह के लिए है बाक़ी हरेक चीज़ के लिए फ़ना है। तो अरबी कहावत जो लेखक ने पेश की वह तो न हदीस है न कुरआनी आयत है तो उनकी दलील है कहां....?

दूसरी दलील लेखक की यह है कि....

" दुनिया मोमिन के लिए जेलख़ाना है और काफ़िर के लिए बाग़ है।"

हमारी समझ में यह नहीं आता कि इस फ़रमाने नबी के किस शब्द से यह मतलब निकलता है कि अम्बिया और औलिया मरते नहीं हैं सदैव ज़िन्दा रहते हैं।

तीसरी दलील यह है कि....

" कुरआन मजीद में हज़रत सुलेमान अलैहि0 की अनोखी वफ़ात का ज़िक्र देखें इसी तरह अन्य अम्बिया किराम की वफ़ात को देखें। हुजूर सल्ल0 की वफ़ात को देखें। मतलब यह कि अम्बिया और अन्य लोगों की मौत में बड़ा फर्क़ है।"

यह चुटकुला भी खूब है कि पहले तो यह दावा कर चुके हैं कि अम्बिया और औलिया मरते नहीं और अब इस वाक्य में कहा जा रहा है कि अम्बिया किराम और अन्य लोगों की मौत में बड़ा फ़र्क़ है।"

Www.IslamicBooks.Website

मतलब यह कि मौत को तो मान ही लिया गया है जब कि सिरे से मौत से ही इन्कार था अब बात केवल फ़र्क़ की रह गयी है लेकिन जनाब ने फ़र्क़ का स्पष्टी करण नहीं किया कि अम्बिया और अन्य लोगों की मौत में क्या फ़र्क़ है? और किस तरह फ़र्क़ है?

कुरआन मजीद में हज़रत सुलेमान अलै0 की वफ़ात का उल्लेख किया गया है लेकिन इसमें इस प्रकार का तो कोई अनोखा पन नज़र नहीं आता कि जिससे मरने के बाद उनका ज़िन्दा रहना भी मालूम हो। इसी तरह किसी भी नबी की वफ़ात से उसका सदैव ज़िन्दा रहना मालूम नहीं होता। नबी करीम सल्ल0 की वफ़ात में भी ऐसा कोई नया पन नहीं कि जिससे नफ़्स मौत ही का इन्कार किया जा सके जैसा कि लेखक का उद्देश्य मालूम होता है।

लेखक के नक़ल किए गए वाक्यों व इबारतों के किसी टुकड़े से ऐसी कोई दलील नहीं मिलती कि जिससे कुल्लु नफ़्सिन जाइक़तुल मवति का इन्कार और अम्बिया और औलिया के मरने के बाद भी " सांसारिक जीवन का इक़रार होता हो अलबत्ता इसके बाद लेखक ने यह लिखकर कि....

" इसी तरह अम्बिया किराम के बाद गुलाम औलिया का मक़ाम भी इसी तरह है यहां केवल कुछ औलिया किराम की घटनांए नक़ल की जाती है–"

उन्होंने 12 घटनांए नक़ल की हैं जिनमें बताया गया है कि मरने के बाद फ़लां फ़लां बुजुर्ग लोगों को यदा कदा मिलते रहे हैं यह देवमालाई दास्तानें अगलें पन्नों में देखें ताकि कुरआन व हदीस की पक्की दलीलों के मुक़ाबले उनके ख़राफ़ाती क़िस्से कहानियों का जादू टूट जाए। इन मन गढ़ंत घटनाओं से यह बात इन्शाअल्लाह सबूत तक पहुंच जाएगी कि अम्बिया और औलिया के

Www.IslamicBooks.Website

न मरने की कोई शरअी दलील इस टोली के पास नहीं है।

निराधार हिकायतें

पिछले पृष्ठों में जो बताया गया है कि " ज़ियाए हरम" लाहौर के लेखक ने कुछ प्रख्यात और अ प्रख्यात बुजुर्गों की ओर मन्सूब करके बारह घटनाएं इस संबंध में कि औलिया मरते नहीं हैं दलील के रूप में बयान की हैं। ये घटनाएं हम यहां शब्द शब्द बयान कर रहे है। है तो यह एक व्यर्थ का काम और शायद हमारे पाठक इसे पसन्द भी न करें लेकिन हम चाहते हैं कि अहले हदीस साथी भी ये देवमालाई हिकायतें पढ़ें ताकि उन्हें अन्दाज़ा हो कि अल्लाह तआला ने कुरआन व हदीस की नेमत से नवाज़ कर और केवल उन्हीं से वाबस्ता रख कर कितना बड़ा परोपकार किया है और निराधार हिकायतें और क़िस्सों से सुरक्षित रख कर किस प्रकार गुमराही और शिर्क व बिदअत से उनको पाक साफ़ रखा है।

तो लीजिए..... वायदानुसार यह बरेलवी ख़राफ़ात भी आपकी सेवा में प्रस्तुत है हमारी राय अन्त में देखें। (लेखक)

1– हज़रत अबु सईद ख़राज़ रज़ि0 फ़रमाते हैं कि मैं मक्का में था। एक दिन बाब बनी शीबा में मैंने एक नवजवान की मय्यित को देखा। मैंने जब उनकी ओर नज़र डाली तो नवजवान मय्यित ने मुस्कुराकर मुझ से ख़िताब किया और कहा–

" ऐ अबु सईद! क्या आप नहीं जानते कि ज़िन्दा ज़िन्दा ही हैं यदि मर जाएं तो वे केवल एक घर से दूसरे घर में चले जाते हैं।"

(शरहुस्सुदूर– 86)

2– " हज़रत अबु तुराब बख़्शी रहिम0 का देहान्त बसरा के मरूस्थल में हुआ और देहान्त के बरसों बाद जब वहां से कोई क़ाफ़िला गुज़रा तो देखा कि आप हाथ में सोंटा लिए क़िब्ले की

Www.IslamicBooks.Website

ओर मुंह किए खड़े हैं और होंट खुश्क हैं मगर इसके बावजूद कोई दरिन्दा आप के पास न फटकता था।"

(तज़किरतुल औलिया– 173)

3– हज़रत शाह अमरोहवी रह0 के देहान्त पर कफ़न दफ़न के बाद मस्जिद के सेहन में नमाज़ के लिए जहां आप अपनी ज़िन्दगी में तशरीफ़ रखा करते थे जनाज़ा रखा गया। बाद नमाज़ जनाज़ा हर चन्द लोगों ने कोशिश की मगर वहां से जनाज़ा न उठा। लोगों ने आपकी पत्नी को इसकी ख़बर दी तो उन्होंने कहला भेजा कि यदि नहीं उठते तो मैं स्वयं आती हूं। जिस समय जनाज़े पर ये शब्द सुनाकर उठाया गया जनाज़ा तुरन्त उठ गया।"

(शजरतुल अम्बिया – 158)

4– मियां नूर बख़्श महारवी रह0 से मन्कूल है कि कोट मिठन के निकट एक क़ाज़ी साहब ने क़िबला आलम ख्वाजा नूर मुहम्मद महारवी रह0 से कहा कि हज़रत आप से एक वायदा लेता हूं कि जब मैं मर जाऊं तो आप मेरा जनाज़ा पढ़ाएं। फ़रमाया– इन्शा अल्लाह मैं ही तुम्हारा जनाज़ा पढाऊंगा। क़ाज़ी साहब अभी ज़िन्दा थे कि हज़रत क़िब्ला आलम का देहान्त हो गया। क़ाज़ी साहब को चिंता हुई कि अब हज़रत क़िब्ला आलम मेरे ज़नाज़े की नमाज़ कैसे पढ़ाएंगे। कुछ समय बाद क़ाज़ी साहब का देहान्त हो गया। जब उनका जनाज़ा तैयार करके जंगल की ओर ले गए तो क्या देखते हैं कि एक घुड़ सवार घोड़ा दौड़ाता हुआ आ रहा है और चार पांच आदमी पैदल उसके साथ दौड़ते आ रहे हैं। जब निकट आए तो हर आदमी ने पहचान लिया कि हज़रत क़िबला आलम हैं। सब ने क़दम बोसी की और उन सब के दिल से यह बात निकल गयी कि हज़रत क़िब्ला आलम मर चुके हैं आपने क़ाज़ी साहब के जनाज़े की नमाज़

Www.IslamicBooks.Website

पढ़ायी और नज़रों से गायब हो गए। उस समय लोगों को एहसास हुआ कि हज़रत क़िब्ला आलम रह0 तो वफ़ात पा चुके हैं। यहां तो केवल वायदे को पूरा करने के लिए तशरीफ़ लाए थे।"

(मुनाक़िबुल महजूबीन–112)

5– हज़रत शैखुल इस्लाम इमाम नासिरुद्दीन मालिकी रह0 का जब देहान्त हुआ कुछ नेक लोगों ने उनको सपने में देखा। पूछा अल्लाह ने उनके साथ क्या किया? कहा जब मुन्किर नकीर ने मुझे सवाल के लिए बिठाया, इमाम मालिक रह0 तशरीफ़ लाए और उनसे फ़रमाया– " ऐसा व्यक्ति भी इसकी ज़रूरत रखता है कि उससे खुदा और रसूल पर ईमान लाने के बारे में सवाल किया जाए, हट जाओ इसके पास से। यह फ़रमाते ही नकीरैन मुझ से अलग हो गए। और जब मशाइख़ किराम, सूफ़िया खतरों व सख्ती के समय दुनिया व आख़िरत में अपने अनुयायियों मुरीदों का ध्यान रखते हैं तो मज़हब के इन पेशवाओं का कहना ही क्या है जो ज़मीन की मीख़े (मोटी कील) हैं और दीन के स्तंभ और नबी सल्ल0 की उम्मत पर उसके अमीन।"

(हयातुल मौत फ़ी सिमाअुल अमवात– 1112–113)

6– "इमाम याफ़ओ के कथनानुसार एक व्यक्ति हज़रत मुहम्मद बिन अबी कबीर हुकमी रह0 की सेवा में देहान्त के बाद हाज़िर हुआ और विनती की कि इसे अपनी दोस्ती का शर्फ़ बख़्शें आप क़ब्र से निकलें उस से दोस्ती की प्रतीज्ञा की।"

(जामेअ करामाते औलिया– 536)

7– हज़रत मुहम्मद बिन हसीन रह0 ने कहा कि मैं बीमार था और ज़िन्दगी और मौत के ग़म से बड़ा दुखी था। इतने में हज़रत ख्वाजा अबुल हसन ख़रक़ानी रह0 तशरीफ़ लाए और फ़रमाने लगे

Www.IslamicBooks.Website

कि ऐ मुहम्मद बिन हसीन! क्यों घबराते हो? खुदा पाक के फ़ज़्ल से तुम अच्छे होने वाले हो और फ़रमाया कि मौत से कदापि डरना नहीं और देखो यदि मैं तुम से तीस साल पहले भी मर गया तब भी तुम्हारी आखिरी घड़ी के समय इन्शा अल्लाह अवश्य हाज़िर हो जाऊंगा।

हज़रत मुहम्द हसीन रह0 कहते हैं कि मैं अच्छा हो गया और जब कि हज़रत शैख़ अबुल हसन खरक़ानी रह0 की वफ़ात को तीस साल हो चुके थे कि मुहम्मद बिन हसीन की आख़िरी घड़ी आ गयी और यकायक मुहम्मद बिन हसीन रह0 अन्तिम घड़ी की हालत में अदब से सीधे खड़े हो गए और कहने लगे "आइए..... आईए..... वाअ लैकुम अस्सलाम।" तब उनके बेटे ने पूछा कि हज़रत आप किस को देखते हैं? उन्होंने कहा कि बेटा शैख़ हबुल हसन ख़रक़ानी रह0 अपने वायदे के अनुसार बड़ी मुद्दत के बाद तशरीफ़ लाए हैं और यह तशरीफ़ लाना इसलिए हुआ है कि मौत से न डरूं एक नूरानी जमाअत आपके साथ जवां मर्दों की है।" यह कहा और सांस उखड़ने लगा और मर गए। (ख़ज़ी न ए मारफ़त–63)

8– हज़रत सुलतानुल आरिफ़ीन सुलतान बाहु का पहला मक़बरह जो चुनाब नदी के पश्चिमी तट पर क़िला कहरगान के मध्य में चौखंडी अर्थात चार दीवारी की ओर था। झंडा सिंह और गंडा सिंह लाहौरी के हमले के कारण हज़रत सुलतानुल आरिफ़ीन रह0 की संतान विभिन्न दिशाओं में हिजरत कर गयी। केवल कुछेक फ़क़ीर और ख़लीफ़े खानक़ाह में रहते थे।

सौभाग्य वश दरिया क़िले तक आ पहुंचा और उसे गिरा दिया। फिर क़ब्रों तक जा पहुंचा। फ़क़ीरों और ख़लीफ़ों ने बाक़ी मज़ारों को निकाल कर सन्दूकों में रख लिया और हज़रत सुलतानुल

Www.IslamicBooks.Website

आरिफ़ीन का मक़बरा वहीं रहा। आपका सन्दूक़ न मिल सका।

फ़क़ीर और ख़लीफ़े निराश होकर रोने लगे कि या शैख़ हुजूर के पाक शरीर का सन्दूक नहीं मिलता और नदी का पानी निकट आ रहा है। इस सूरत में हुजूर की सन्तान देहाती हो जाएगी और फ़क़ीर परेशान हो जाएंगे। अतः फ़क़ीरों और ख़लीफ़ों को हुजूर से इर्शाद हुआ कि "हम अवश्य बाहर निकलेंगे मगर जो व्यक्ति हमारे शरीर को छूने के लायक़ और योग्य होगा वह कल सुबह सवेरे सूरज निकलने के क़रीब यहां आएगा वह हमारा सन्दूक निकालेगा और दरिया नहीं चढ़ेगा।"

दर्वेशों को इस इशारे से तसल्ली हुई और ग़ैबी हिकमत का इन्तिज़ार करने लगे। जब निर्धारित समय आया तो एक सब्ज़ लिबास पहने बुर्का वाला व्यक्ति ज़ाहिर हुआ। उसने चेहरे से नक़ाब उठायी और आते ही निसंकोच उसी मिट्टी में से जो फ़क़ीरों और ख़लीफ़ों ने खोद रखी थी हज़रत सुलतानुल आरिफ़ीन का सन्दूक निकाला। लोग जमा हो गए। उन्होंने ज़ियारत की। देखा तो हज़रत उसी तरह सोए हुए थे और बालों से गुस्ल के पानी की बूंदें टपक रही थी। जब सन्दूक खोला गया तो मीलों तक खुश्बू फैल गयी। अधिकांश लोगों को वज्द आ गया।

(मुनाकिब सुलतानी– 150–151)

9– हज़रत बाबा फ़ज़्ल दीन कलियामी रह0 बड़े पाए के बुज़ुर्ग गुज़रे हैं। कलियाम अवान रावल पिंडी से लगभग पन्द्रह सोलह मील दूर लाहौर की सड़क के निकट स्थित है। बाबा साहब का सिलसिला चिश्ती या साबिरिया था आपके पीर तरीक़त हज़रत हाफ़िज मुहम्मद शरीफ़ खां देहलवी बाबर बादशाह की सन्तान में से थे और उनका मज़ार भी कलियाम शरीफ़ में है।

Www.IslamicBooks.Website

तल्लीनता की अधिकता के कारण हज़रत बाबा साहब से ज़ाहिरी तौर पर नमाज़ छूट गयी थी। एक बार स्थानीय उलमा ने कहा– "हम आपका जनाज़ा नहीं पढ़ेंगे।" फ़रमाया मेरा जनाज़ा इल्मे शरीअत का इतना बड़ा शेर पढ़ाएगा कि तुम लोगों को मजबूर होकर शामिल होना पड़ेगा। आपने बहुत समय पहले हज़रत क़िबला आलम गोलड़वी से कह रखा था कि ये मौलवी लोग मेरे हाल से बे ख़बर हैं और कहते हैं कि तुम्हारा जनाज़ा नहीं पढ़ाएंगे अतएव आपको आकर मेरा जनाज़ा पढ़ाना होगा। उधर अपने सेवकों को भी वसीयत कर दी थी कि मेरा जनाज़ा पीर साहब पढ़ाएंगे। हज़रत फ़रमाते थे कि जिस रात उनका देहान्त हुआ उन्होंने सपने में आकर मुझसे फ़रमाया " पीर जी मैं मर गया हूं आकर जनाजा पढ़ा जाओ।"

रिवायत है कि हज़रत क़िबला आलम को जनाब बाबा साहब बसती कलियाम के बाहर ज़िन्दा भी नज़र आए थे। जब आपने पूछा कि बाबा आप तो यहां फिर रहे हैं मैं जनाज़ा किसका पढ़ाऊंगा? फ़रमाया कि मुझसे यह नहीं हो सकता कि आले रसूल मेरे घर में आएं और मैं उनका स्वागत न करूं।" (मेहरे मुनीर–400–401)

10– हज़रत मखदूम अलाउद्दीन साबिर कलियरी रह0 ने विसाल से पूर्व हज़रत हमीदुद्दीन नागौरी रह0 को एक इलाक़े में अपना नायब बनाकर भेजा था और हुक्म दिया कि फ़राइज़ से फ़राग़त पाकर वापस लौट आना और जब तुम कलियर की ज़मीन पर क़दम रखोगे तो ठोकर खाकर ज़मीन पर गिर पडोगे तो समझ लेना कि मेरा मुर्शिद दुनिया से कूच कर गया है। अतएव ऐसा ही हुआ। जब मुर्शिद की खानक़ाह पर पहुंचे तो देखा कि हज़ारों लोग हज़रत साबिर की नमाज़े जनाज़ा पढ़ने के लिए मौजूद हैं लेकिन

Www.IslamicBooks.Website

नमाज़ पढ़ाने के लिए कोई साहस नहीं करता क्योंकि जनाज़े की नमाज़ ऐसे व्यक्ति को पढ़ाना थी जो हज़रत साबिर रह0 से ज़्यादा उच्च हैसियत रखता हो।

आख़िर कार लोगों ने देखा कि एक घोड़े पर सवार नक़ाब पोश उतरा। उसने घोड़ा बांधा और जनाज़े की नमाज़ पढ़ायी। जब नक़ाब पोश वापस जाने के लिए घोड़ा खोलने लगा तो हज़रत हमीदुद्दीन नागौरी ने हज़ारों लोगों की मौजूदगी में मालूम किया कि ऐ अल्लाह के बन्दे तुम कौन हो ? क्या नाम है ? कहां जाना चाहते हो? ज़रा बताते जाना। नक़ाब पोश ने कहा– ऐ हमीदुद्दीन! यदि हक़ीकत को जानना ही चाहते हो तो इन सब लोगों की भीड़ को यहां से हटा दो क्योंकि–

खांसां दी गल उलमां आगे नहीं मुनासिब करनी
मीठी खीर पका मुहम्मद कुतयां आगे धरनी

जब लोग चले गए तो नक़ाब पोश ने नक़ाब उठाया तो शैख़ हमीदुद्दीन नागौरी ने देखा कि हज़रत साबिर कलियरी स्वयं सामने खड़े हैं। कहा– कि हज़रत एक तरफ़ तो आप का जनाज़ा पड़ा है और उधर आप ज़िन्दा हैं। फ़रमाया वह मक़ामे फ़ना है और यह मक़ामे बका है।" (तज़किरतुल औलिया –98–99)

11– हज़रत ख्वाजा बाक़ी बिल्लाह रह0 से एक व्यक्ति ने सवाल किया कि हज़रत फ़ना और बक़ा किसको कहते हैं? आपने फ़रमाया जब मेरा देहान्त हो जाए तो जो व्यक्ति मेरे ज़नाज़े की नमाज़ पढ़ाएगा उसी से यह मसला मालूम करना वह तुझे बता देगा। यह व्यक्ति इन्तिज़ार में रहा। कुछ समय बाद आप का देहान्त हो गया। मुरीदों ने कफ़न दफ़न के बाद जैसे हुजूर ने फ़रमाया था कि मेरा जनाज़ा एक घुड़ सवार आकर पढ़ाएगा।

Www.IslamicBooks.Website

लोग इस इन्तिज़ार में थे कि इतने में एक व्यक्ति प्रकट हुआ उस व्यक्ति ने हज़रत की जनाज़े की नमाज़ पढ़ायी। वे बुजुर्ग नमाज़ पढ़ाकर जाने लगे तो उस व्यक्ति को हज़रत बाक़ी बिल्लाह की बात याद आ गयी। उनके पीछे पीछे चल दिया। कुछ दूर जाने के बाद उसने आवाज़ दी कि हज़रत मेरी एक बात सुनते जाइए । उन्होंने कहा तुम थोड़ा आगे आ जाओ। कुछ और दूर जाने के बाद उन्होंने कहा– कि मैं तुझे दूर इसलिए ले आया हूं कि तेरी गुज़ारिश ऐसी है कि लोगों के सामने उसको प्रकट नहीं कर सकता। उसने कहा– "हज़रत मै यह पूछना चाहता हूं कि फ़ना किसे कहते हैं और बक़ा किसे कहते हैं? तो हज़रत ने तुरन्त अपने चेहरे से नक़ाब उतार दिया। उसने जो देखा तो ख्वाजा बाक़ी बिल्लाह रह0 स्वयं ही थे। तो फ़रमाया– जिसका जनाज़ा पढ़ाया है वह फ़ना है और यह बक़ा है। और यह कह कर तुरन्त नज़रों से ग़ायब हो गए।

(फ़ना फ़िल्लाह अर्थात अहवाले औलिया– अल्लाह – 31)

12– हज़रत ख़्वाजा अलाउद्दीन अत्तार रह0 मरजुल मौत में हज़रत ख़्वाजा बुजुर्ग ख़्वाजा बहाउद्दीन नक़्श बन्दी को मौजूद देखते थे उनसे बातें करते और उनकी बातों को सुनते थे।

(हज़रातुल कुदस दफ़्तर प्रथम–222)

(मासिक ज़ियाए हरम") लाहौर– सितम्बर 1987)

हमारा मत

हिकायात व क़िस्से आपने उपरोक्त पंकितयों व पृष्ठों में पढ़ लिए हैं। इनमें विचारणीय बात है हवालों की है जिन किताबों के हवाले दिए गए हैं वे निम्न हैं।

शरहुस्सुदूर , तज़किरतुल औलिया, शजरतुल अम्बिया, हयातुल मौत फ़ी बयान सिमाअुल अमवात, ख़ज़ीन ए मारफ़त,

Www.IslamicBooks.Website

मुनाक़िब सुलतानी, मेहर मनीर, तज़किरा औलिया ए चिश्त, फ़ना फ़िल्लाह अर्थात अहवाल औलिया अल्लाह और हज़रातुल कुदस।"

अर्थात कोई भी घटना कुरआन व हदीस के हवाले से बयान नहीं हुई है। सब हवाले अल्पज्ञान रखने वाले लेखकों की किताबों के हैं जिससे यह बात साबित हो जाती है कि अम्बिया व औलिया के न मरने की या मरने के बाद सांसारिक जीवन की कोई शरअी दलील उन के पास नहीं है अलबत्ता स्वयं की गढ़ी हुई दास्तानें, देवमालाई हिकायतें और क़िस्सों (जो झूठे और निराधार हैं) के ढेर हैं जिससे यह तो मालूम होता है कि.....

हक़ीक़त ख़राफ़ात में खो गयी
यह उम्मत रिवायात में खो गयी

लेकिन किसी मसले का स्वीकरण व जांच इन गढ़ी हुई दास्तानों से नहीं होती और न हो सकती है। इन किताबों पर आप और अधिक सोच विचार करेंगे तो यह बात स्पष्ट होगी कि ये सारी किताबें बुज़ुर्गों के हालात में लिखी गयी हैं जो उनके अंधे अक़ीदत मन्दों ने लिखी हैं और बे सरूपा करामाती घटनाएं लिख कर उनकी बुज़ुर्गी शान को अधिक से अधिक बढ़ाने की कोशिश की गयी है। फिर "मक़ामे फ़ना" और "मक़ामे बक़ा" की जो स्वयं गढ़ कर व्याख्या की गयी है और जिसके हिसाब से मरने वाले बुज़ुर्ग बल्कि कई बुज़ुर्गों ने अपने जनाज़े की नमाज़ स्वयं ही आकर पढ़ाई है बड़ी ही विचित्र है। एक ओर उनकी मुर्दा लाश पड़ी हुई है और लोग उनके जनाज़े की नमाज पढ़ने के लिए इन्तिज़ार में खड़े हैं और दूसरी ओर वही मुर्दा व्यक्ति घोड़े पर सवार होकर आते हैं और अपनी जनाज़े की नमाज़ स्वयं पढ़ाकर चले जाते हैं। यह अजीब पहेली है.....

Www.IslamicBooks.Website

"एक मुअम्मा है समझने का न समझाने का"

यह मक़ामे बक़ा तो नबी करीम सल्ल0 तक को हासिल नहीं हुआ। यदि इसकी कोई हक़ीक़त होती तो सबसे पहले नबी सल्ल0 इस तरह घोड़े पर सवार होकर तशरीफ़ लाते और अपने जनाज़े की नमाज़ स्वयं पढ़ाते क्योंकि आप तो सारे लोगों के कथनानुसार इस कायनात के सबसे श्रेष्ठ और उच्चतम व्यक्ति हैं। जब आपके जनाज़े की नमाज़ आप से कम तर दर्जे के लोगों ने पढ़ी तो आपके बाद कायनात में कोई ऐसा व्यक्ति है कि उसकी नमाज़े जनाज़ा आम लोग मात्र इस वहम के आधार पर न पढ़ें कि पढ़ने वालों में मय्यित से श्रेष्ठ व्यक्ति कोई नहीं? इस उंची अक़ीदत और किसी को उसकी सीमा से आगे बढ़ा देने की बीमारी ने ही इस प्रकार की बे सरूपा, निराधार दास्तानें और हिकायतें लिखायी हैं।

जिसने मृत बुजुर्गों को " मक़ामे बक़ा पर पदासीन करके उन्हें अल्लाह के गुण बक़ा में शरीक ठहरा लिया है।

(तन्ज़ीमुल हदीस लाहौर)

Www.IslamicBooks.Website

(16)

पक्की क़ब्रों की मनाही पर हदीस

पिछले पृष्ठों में प्रस्तुत बहस से यद्यपि यह बात स्पष्ट होकर सामने आ जाती है कि क़ब्रों को पक्का बनाने, उन पर गुम्बद और कुब्बे बनाने और किसी प्रकार की इमारत निर्माण करने या उनके साथ मस्जिद बनाने की शरीअत में कोई गुंजाइश नहीं, क्योंकि इन चीज़ों से उनकी पूजा पाठ का दरवाज़ा खुलता है फिर भी और अधिक स्पष्टीकरण के लिए इस सिलसिले में आने वाली हदीसे निम्न हैं। इसके बाद फ़िक़्ह हनफ़ी की व्याख्या भी प्रस्तुत की जाएगी। (लेखक)

1– " हज़रत जाबिर रज़ि0 से रिवायत है कि नबी सल्ल0 ने क़ब्रों को पक्का करने, उनके ऊपर बैठने और उनपर इमारत निर्माण करने से मना किया है।"

(जामेअ तिर्मिज़ी 1–170)

2– " हज़रत अबु हय्याज असदी बयान करते हैं कि मुझसे हज़रत अली रज़ि0 ने फ़रमाया क्या मैं तुझे ऐसे काम के लिए नियुक्त न करूं जिसके लिए मुझे नबी सल्ल0 ने नियुक्त किया था यह कि जो भी तस्वीर हो उसे मिटा डालो और जो भी क़ब्र ऊंची हो उसे ज़मीन के बराबर कर दो।" (सही मुस्लिम –2–666)

इमाम नववी इस हदीस के अन्तर्गत लिखते हैं–

" इस हदीस से पता चला कि सुन्नत यह है कि क़ब्र ज़मीन से ज़्यादा ऊंची न की जाए और न कोहान की तरह बनाई जाए बल्कि केवल एक बालिशत ऊंची रखी जाए (जैसा कि दूसरी दलीलों से

Www.IslamicBooks.Website

मालूम होता है) और छत की तरह चौकोर रखी जाए।" यह हदीस जामेअ तिर्मिज़ी में भी है। इमाम तिर्मिज़ी यह हदीस दर्ज करके फ़रमाते हैं–

" हज़रत अली रज़ि0 की यह हदीस बहुत अच्छी है कुछ विद्वानों के निकट इसी पर अमल है। वे यह ना पसन्द करते हैं कि क़ब्र ज़मीन से ऊंची रखी जाए (अर्थात ज़मीन के बराबर रखना बेहतर है) शाफ़ओ रह0 फ़रमाते हैं कि मैं क़ब्र को ज़्यादा ऊंचा करना ना पसन्द करता हूं। क़ब्र केवल इतनी ऊंची की जाए कि जिस से यह मालूम हो कि यह क़ब्र है ताकि कोई इसे रौंद न सके और न इसपर बैठ सके। (जामेअ तिर्मिज़ी 1– 70)

3– सुमामा बिन शुफ़य्यी बयान करते हैं कि हम रुम की ज़मीन रूदिस में हज़रत फुजाला बिन उबैद रज़ि0 के साथ थे कि हमारे एक साथी का वहां देहान्त हो गया, तो हज़रत फुज़ाला ने (साथी को दफ़नाने के बाद) हुक्म दिया कि इसकी क़ब्र को (ज़मीन के) बराबर कर दिया जाए। फिर हज़रत फुज़ाला रज़ि0 ने फ़रमाया कि (मैंने यह हुक्म इसलिए दिया है कि) मैंने नबी सल्ल0 को भी क़ब्रों को ज़मीन के बराबर करने का हुक्म देते हुए सुना है।"

(सही मुस्लिम –2–666)

4– अपनी अन्तिम बीमारी में नबी सल्ल0 ने फ़रमाया जिसके बाद आप दुनिया से चले गए।

" अल्लाह यहूद व नसारा (यहूदियों और ईसाइयों) पर लानत करे उन्होंने अपने पैग़म्बरों की क़ब्रों को सज्दा गाह बना लिया।"

दूसरी रिवायत के शब्द इस प्रकार हैं–

" ख़बर दार! तुम से पहले लोगों ने अपने पैग़म्बरों और नेक बन्दों की क़ब्रों को सज्दा गाह (इबादत की जगह) बना लिया। याद

Www.IslamicBooks.Website

रखना! तुम क़ब्रों को सज्दा गाह न बना लेना। मैं तुम्हें इससे रोकता हूं।" (सही मुस्लिम 3– 276)

क़ब्रें सज्दा गाह और उपासना स्थल उस समय बनती हैं जब उन्हें पक्का बना लिया जाता है या उसपर कोई गुम्बद और इमारत निर्माण कर दी जाती है। इस दृष्टि से यह हदीस भी क़ब्रों को पक्का बनाने या उनपर गुम्बद आदि बनाने की मनाही की दलील है।

5– हज़रत अली रज़ि0 फ़रमाते हैं कि नबी सल्ल0 एक जनाज़े में शरीक थे। आपने (उस अवसर पर) फ़रमाया ....." तुम में से कौन है जो मदीने में मौजूद हर बुत को तोड़ डाले, हर क़ब्र को बराबर कर दे और हर तस्वीर को मिटा डाले।" ए क व्यक्ति ने कहा, अल्लाह के रसूल! मैं इस काम के लिए तैयार हूं। अतएव वह गया लेकिन मदीना वालों से डर कर वापस आ गया। हज़रत अली रज़ि0 ने पेश कश की कि ऐ अल्लाह के रसूल मैं जाकर यह काम करता हूं। अतएव वे गए और वापस आकर उन्होंने रिपोर्ट दी कि मैंने हर बुत को तोड़ डाला, हर क़ब्र को ज़मीन के बराबर कर दिया और हर तस्वीर को मिटा डाला। नबी सल्ल0 ने फ़रमाया– " आइन्दा इस प्रकार का कोई काम किसी ने किया तो निश्चय ही उसन उस दीन का इन्कार किया जो नबी सल्ल0 पर उतारा गया।"

(मुसनद अहमद बिन हम्बल 8–70, 72)

कुछ आवश्यक स्पष्टी करण

पिछले पृष्ठों में " मुसन्नम" और " मुसत्तह" के शब्द आए हैं। मुसन्नम का मतलब है छत की तरह चौकोर शक्ल में क़ब्र बनाना। कुछ उलमा मुसत्तह क़ब्र बनाने के भी क़ाइल हैं लेकिन आम सहमति मुसन्नम ही के हक़ में है क्योंकि सही रिवायत में आता है

Www.IslamicBooks.Website

कि नबी सल्ल0 और हज़रत अबु बक्र रज़ि0 की क़ब्रें भी कोहान की तरह बनी हुई हैं। (अहकामुल जनाइज़ – 154)

इस तरह कुछ रिवायतों में क़ब्रों को ज़मीन के बराबर करने का जो हुक्म आया है उसका मतलब बिल्कुल ज़मीन के बराबर कर देना नहीं है बल्कि दूसरी रिवायत के साथ मिलाकर इसका मतलब यह होगा कि ज़मीन से ज़्यादा ऊंची क़ब्र न बनायी जाए बल्कि ज़मीन से केवल एक बालिशत ऊंची रखी जाए जिस तरह नबी सल्ल0 ने अपने बेटे हज़रत इबराहीम की क़ब्र एक बालिशत रखी थी। (फतहुल रब्बानी 8–75)

सुनन बैहेक़ी की एक और रिवायत भी है जिसे अल्लामा अलबानी ने ' हसन" कहा है इसमें है कि नबी सल्ल0 की क़ब्र मुबारक भी ज़मीन से लगभग एक बालिश्त ऊंची बतायी गयी थी। (बैहेक़ी 3– 410)

हनफ़ी फ़िक़ह और पक्की क़ब्रें

हमारे देश की बहुसंख्यक फ़िक़ह हनफ़ी की अनुयायी है। उपरोक्त हदीसों के बाद और अधिक किसी फ़िक़ह के हवालों की ज़रूरत तो नहीं रहती फिर भी अन्तिम रूप से बात सिद्ध करने के लिए फ़िक़ह हनफ़ी के कुछ हवाले भी प्रस्तुत हैं–

1– इमाम अबु हनीफ़ा के ख़ास शिष्य और फ़िक़ह हनफ़ी के प्रथम संग्रह कर्त्ता इमाम मुहम्मद अपनी किताब किताबुल आसार में लिखते हैं–

" क़ब्र इतनी ऊंची करो कि वह क़ब्र मालूम हो ताकि वह रौंदी न जा सके। इमाम मुहम्मद कहते हैं यही हमारा मसलक है। हम यह भी कहते है कि क़ब्र से जो मिट्टी निकलती है उससे ज़्यादा मिट्टी

Www.IslamicBooks.Website

क़ब्र पर न डाली जाए। हमारे निकट यह भी मकरूह (हराम) है कि क़ब्र को पक्का किया जाए या उसको (मिट्टी से ही) लीपा जाए या उसके पास मस्जिद या कोई निशानी स्थापित की जाए या उस पर लिखा जाए और यह भी मकरूह (हराम) है कि क़ब्र पर पक्की ईंटों की कुछ तामीर करायी जाए या क़ब्र के अन्दर उसका इस्तेमाल किया जाए। अलबत्ता क़ब्र पर पानी के छिड़कने में कोई हरज नहीं है।

हमें इमाम अबु हनीफ़ा ने ख़बर दी है वे कहते हैं हमें हमारे शैख़ ने यह मरफ़ूआ हदीस बयान की कि नबी सल्ल0 ने क़ब्र को चौकोर बनाने और पक्की करने से मना फ़रमाया है इमाम मुहम्मद कहते हैं यही हमारा मसलक है और यही इमाम अबु हनीफ़ा का कथन है।

2– इमाम अबु हनीफ़ा के दूसरे शिष्य क़ाज़ी अबु यूसुफ़ अपनी किताब में लिखते हैं।

" इमाम अबु हनीफ़ा अपने इमाम इब्राहीम से रिवायत करते हैं कि वे इस बात को मकरूह (हराम) जानते थे कि क़ब्र पर कोई अलामत (निशानी) रखी जाए या क़ब्र पर पक्की ईंट इस्तेमाल की जाए और क़ब्र को पक्का किया जाए।" (किताबुल आसार –84)

3– फ़िक़्ह हनफ़ी की विश्वसनीय किताब " अलहिदाया" में है।

" क़ब्र के लिए पक्की ईंट और लकड़ी का इस्तेमाल मकरूह (हराम) है इसलिए कि ये दोनों चीज़ें किसी इमारत को पक्का बनाने के लिए इस्तेमाल की जाती हैं जबकि क़ब्र (पक्की की बजाए) बोसीदगी की जगह है इसके अलावा पक्की ईंट में आग का असर होता है। (अलहिदाया फ़तहुल क़दीर 2– 139)

4– फ़तावा आलमगीरी जिसके बारे में कहा जाता है कि उसे पांच सौ हनफ़ी उलमा व फ़ुक़हा ने सम्पादित किया है और

Www.IslamicBooks.Website

आजकल के हनफ़ी उलमा पाकिस्तान में भी फ़तावा आलमगीरी को लागू करने की मांग करते हैं। इस में लिखा है–

" क़ब्र एक बालिशत ऊंची कोहान की तरह बनायी जाए वर्गाकार नहीं, उसे पक्का न किया जाए। अलबत्ता पानी छिड़कने में कोई हरज नहीं और मकरूह (हराम) है कि क़ब्र पर कोई इमारत बनायी जाए या उस पर बैठा या सोया जाए या उसे रौंदा जाए या वहां पेशाब पाख़ाना किया जाए या कोई बोर्ड आदि लगाया जाए ताकि निशानी क़ायम रहे।"

क़ब्र के पास वे सारे काम मकरूह (हराम) हैं जो सुन्नत से साबित नहीं और सुन्नत से केवल दो ही बातें साबित व मशहूर हैं एक क़ब्र की ज़ियारत, दूसरी वहां खड़े होकर उनके हक़ में दुआ करना।" (फ़तावा आलमगीरी 1– 166)

5– लगभग यही बात जो फ़िक़्ह हनफ़िया की उपरोक्त किताबों से नक़ल की गयी हैं फ़िक़्ह हनफ़ी की एक और महत्व पूर्ण किताब बहरुर्राइक़ शरह कन्जुदक़ाइक़ भाग 2– पृ0 194 में भी है।

एक आवश्यक स्पष्टीकरण

फ़िक़्ह हनफ़ी की उपरोक्त किताबों में युकरह नुकरह (मकरूह है या हमारे निकट मकरूह है) के जो शब्द आए हैं इस का मतलब कराहते तहरीमी है कराहते तन्ज़ीही नहीं है जैसा कि कुछ लोग दावा करते हैं और फिर इस बुनियाद पर उपरोक्त कामों को करने को जायज़ समझ लेते हैं हमारी इस बात की दलील फ़िक़्ह हनफ़ियह ही में बयान यह उसूल है कि जब फ़ुक़हा के कलाम में कराहत का शब्द पूर्णतः इस्तेमाल हो तो इस कराहत से तात्पर्य तहरीम (हराम होना) है अतएव फ़तावा शामी में यही कहा गया है देखें–

(रद्दुल मुहतार, शरह दुर्रेमुख्तार–1–207)

Www.IslamicBooks.Website

(17)

क़ब्रों की ज़ियारत और दुआ

उपरोक्त बहस का सारांश यह है कि मृत लोगों या क़ब्रों में दफ़न लोगों से मदद मांगने की निम्न सूरतें हैं–

1– मृत बुजुर्ग कायनात में तसर्रुफ़ करने का, लाभ हानि पहुंचाने का और हरेक की दूर या निकट की फ़रियाद सुनने और उसे पूरा करने, मश्किलें दूर करने और हाजत पूरी करने का अख़्तियार रखता हो। यह सूरत खुला शिर्क है और इस अक़ीदे वाला मुश्रिक है।

2– वे स्वयं तो अख़्तियार नहीं रखते लेकिन चूंकि वे अल्लाह के मुक़र्रब बन्दे हैं इसलिए उनके वास्ते से और उनके सामने हाजात पेश करते हैं वे फिर अल्लाह की बारगाह में हमारी दुआओं की कुबूलियत की सिफ़ारिश करते हैं।

यह सूरत भी मुश्रिकाना है क्योंकि इसमें वही अक़ीदा मौजूद है जो मक्का के मुश्रिक रखते थे। इसके अलावा यह अक़ीदा भी कुरआन की शिक्षाओं के ख़िलाफ़ है। कुरआन तो स्पष्ट रूप से बताता है कि क़ब्र वालों को कोई बात नहीं सुनायी जा सकती और यह सूरत है ही इस अक़ीदे पर आधारित कि हम जब चाहें और जो चाहें क़ब्र वालों को सुना सकते हैं।

3– किसी क़ब्र पर जाकर या किसी बुजुर्ग का नाम लेकर इस प्रकार दुआ करे कि बिहुर्मत फ़लां या फ़लां के सदक़े या अल्लाह मेरा फ़लां काम कर दे, मेरी हाजत पूरी कर दे फ़लां मुश्किल से नजात प्रदान करदे।

Www.IslamicBooks.Website

यह सूरत मुश्रिकाना तो नहीं है अलबत्ता ग़ैर मसनून तरीक़े से दुआ मांगना अवश्य है। नबी सल्ल0 ने इस तरह कभी दुआ नहीं मांगी। सहाबा किराम रज़ि0 ने भी इस तरह कभी दुआ नहीं की। किसी हदीस सहीहा से इस तरह दुआ करने का सबूत नहीं मिलता।

इसके अलावा दुआ के लिए किसी क़ब्र पर जाने की ज़रूरत नहीं। किसी की महिमा एवं प्रताप का वास्ता देने की ज़रूरत नहीं। सीधे रूप से बिना किसी वास्ते और वसीले के अल्लाह से दुआ करे। अलबत्ता अपने सद कर्मों के वास्ते और वसीले से दुआ करना जायज़ है जैसे यह कहे ऐ अल्लाह! मैंने फ़लां काम केवल तेरी प्रसन्नता के लिए किया था। उसके वास्ते और वसीले से मेरी दुआ कुबूल कर ले।

जिस तरह कि एक हदीस में तीन लोगों की घटना आती है जो एक गुफ़ा में फंस गए थे और उनमें से हरेक ने अपने अपने नेक अमल के वास्ते से दुआ की तो अल्लाह ने गुफ़ा का मुंह खोल दिया।

कुरआन की आयत वबतगू इलैहिल वसील त (माइदा–35) से यही तक़्वा और सद कर्मों का वसीला मुराद है।

○ इसी प्रकार किसी जीवित भले बुजुर्ग द्वारा दुआ करानी भी जायज़ है जिस तरह हज़रत उमर फ़ारूक़ रज़ि0 ने अकाल के अवसर पर नबी सल्ल0 के चचा हज़रत अब्बास रज़ि0 से दुआ करायी थी।

○ इसी तरह क़ब्रस्तान में जाना मसनून अमल है लेकिन ख़ास ख़ास क़ब्रों (जो मज़ार या दरगाह कहलाती हैं) पर जाने से बचना चाहिए क्योंकि वह क़ब्रस्तान के हुक्म में नहीं है।

○ क़ब्रस्तान में जाने का उद्देश्य मौत को याद करना है और दुनिया की समाप्त होने वाली ज़िन्दगी को महत्व हीन समझना है।

Www.IslamicBooks.Website

क़ब्रस्तान में जाकर यह दुआ पढ़नी मसनून है– अनुवाद–

" ऐ ख़ामोश घरों के मोमिनों! तुम पर सलामती हो। यदि अल्लाह ने चाहा तो निश्चय ही हम भी तुम्हें मिलने वाले हैं। हम अल्लाह से अपने लिए और तुम्हारे लिए आफ़ियत के इच्छुक हैं।"

(रवाह मुस्लिम मिश्कात)

इस दुआ में मुर्दों से सम्बोधित करके अल्लाह से उनके लिए और अपने लिए दुआ की गयी है। यह दुआ हमें नबी सल्ल0 ने सिखलायी है और जिस तरह सिखायी है उसी तरह पढ़ना हमारे लिए ज़रूरी है। मुर्दे हमारी दुआ सुनते हैं या नहीं? हमें इससे कोई लेना देना नहीं न उनका सुनना आवश्यक है उद्देश्य तो केवल दुआ है।

○ इस मसनून दुआ या इनकी मग़फ़िरत और यातना से नजात के लिए अपनी ज़बान से दुआ करने के अलावा किसी और चीज़ का सबूत नहीं जिस तरह कि लोग फ़तिहा पढ़कर या कोई और कुरआनी सूरह पढ़कर मुर्दों को बख़्शते हैं या उनकी मग़फ़िरत की दुआ के लिए इस तरीक़े को ज़रूरी समझते हैं यह तरीक़ा बिल्कुल ग़लत है।

मुर्दों के लिए फ़ातिहा ख्वानी, या कुरआन ख़्वानी का कोई सबूत नहीं मिलता न इस तरीक़े से उनके हक़ में मग़फिरत की दुआ ही होती है क्योंकि सूरह फ़ातिहा या कुरआन करीम की किसी और सूरह में मुर्दों की मग़फ़िरत के लिए कोई दुआ के शब्द ही नहीं हैं दुआ के शब्द तो उसी दुआ में हैं जो नबी सल्ल0 ने हमें क़ब्रस्तान वालों के लिए सिखाई है जो अभी ऊपर लिखी गयी है इसलिए केवल यही दुआ क़ब्रस्तान में जाकर करनी चाहिए। यह दुआ याद न हो तो अपनी ज़बान में मुर्दों की मग़फ़िरत के लिए करे।

Www.IslamicBooks.Website

○ हर जुमा को मां बाप की क़ब्र की ज़ियारत करने की फ़ज़ीलत में एक रिवायत आती है लेकिन यह रिवायत मौजूअ़ है।

○ इसी प्रकार शबे बराअत, मुहर्रम या अन्य खास अवसर पर क़ब्रस्तान जाना किसी सही रिवायत से साबित नहीं। क़ब्रस्तान जब चाहें जाएं। खास अवसरों पर जाने की ज़रूरत नहीं है।

○ अपने किसी रिश्तेदार की ख़ास क़ब्र पर हाथ उठा कर भी मग़फ़िरत की दुआ करनी जायज़ है।

○ क़ब्र पर फूल आदि चढ़ाने का रिवाज भी ग़ैर मसनून है जिससे बचना चाहिए।

○ क़ब्रों पर रोशनी करना भी जायज़ नहीं। एक तो यह बिदअत है दूसरे बेजा पैसों का खर्च, तीसरे आतिश परस्तों की नक़ल और उनकी समानता है।

○ कुछ लोग बुजुर्गों से मदद मांगने के तो क़ाइल नहीं होते लेकिन क़ब्रों में दफ़न बुजुर्गों से रूहानी लाभ उठाने को मानते हैं अतएव वे बुजुर्गों की क़ब्रों पर चिल्ला कशी या मुराक़बा करते हैं और समझते हैं कि इस तरह उनसे लाभ हासिल होगा। यह धारणा भी ग़लत है। यदि क़ब्रों से यह लाभ उठाना जायज़ या संभव होता तो सहाबा किराम रज़ि0 नबी करीम सल्ल0 की क़ब्र से जरूर आध्यात्मिक लाभ हासिल करते लेकिन किसी सहाबा ने ऐसा नहीं किया। इसलिए क़ब्रों से लाभ हासिल करने की रस्म भी सूफ़ियों की एक ऐसी बिदअत है जिससे शिर्क का रास्ता ही साफ़ होता है।

तौहीद की तीन क़िस्में

तौहीद की तीन क़िस्में हैं। तौहीद रबूबियत (पालनक्रिया) 2– तौहीद उलूहियत (ईश्वरत्व) 3– तौहीदे सिफ़ात।

1– तौहीदे रबूबियत का मतलब है कि इस कायनात का

Www.IslamicBooks.Website

ख़ालिक़ मालिक, राज़िक़ और मुदब्बिर केवल अल्लाह तआला ही है इस तौहीद को मुश्रिक भी मानते हैं जैसा कि कुरआन ने मक्का के मुश्रिकों का स्वीकरण नक़ल किया है।

2– तौहीद उलूहियत (ईश्वरत्व) का मतलब है कि इबादत की सारी की सारी क़िस्मों का हक़दार केवल अल्लाह है और इबादत हर वह काम है जो किसी ख़ास हसती की प्रसन्नता या उसकी अप्रसन्नता के डर से किया जाए। इसलिए नमाज़, रोज़ा हज और ज़कात केवल यही इबादत नहीं हैं बल्कि किसी ख़ास हसती से दुआ विनती करना उसके नाम की नज़्र व नियाज़ देना, उसके सामने हाथ बांधे खड़े होना, उसकी परिक्रमा करना, उससे लोभ और भय रखना आदि भी इबादत है। तौहीद उलूहियत यह है कि ये सारे काम केवल अल्लाह ही के लिए किए जाएं।

क़ब्रपरस्ती के रोग में फंसे लोग इस तौहीद उलूहियत में शिर्क करते हैं। और उपरोक्त इबादतों की बहुत सी क़िसमें वे क़ब्रों में दफ़न लोगों और मृत बुज़ुर्गों के लिए भी करते हैं।

3– और तौहीदे सिफ़ात का मतलब है कि अल्लाह के जो गुण कुरआन व हदीस में बयान हुए हैं उनको किसी तावील के बिना मान लिया जाए और वे गुण उस अंदाज में किसी और के अन्दर न मानें। जैसे जिस प्रकार उसका गुण इल्म ग़ैब है या दूर और निकट से हरेक की फ़रियाद सुनने पर वह समर्थ है। कायनात में हर तरह के काम करने का उसे अख़्तियार हासिल ह या इस प्रकार के और अल्लाह के गुणों में से कोई गुण भी अल्लाह के सिवा किसी नबी, वली या किसी भी व्यक्ति के अन्दर न माना जाए। यदि माना जाएगा तो यह शिर्क होगा।

अफ़सोस है कि क़ब्रों के पुजारियों में शिर्क की यह क़िस्म भी

Www.IslamicBooks.Website

आम है और उन्होंने अल्लाह के उपरोक्त गुणों में बहुत से बन्दों को भी शरीक कर रखा है। क़ब्र की ज़ियारत के समय तौहीद की ये क़िस्में भी ध्यान में रहनी चाहिए ताकि कोई मुसलमान किसी भी क़ब्र वाले के अन्दर अल्लाह के ख़ास गुणों में से कोई गुण तसलीम करे और न उसके लिए किसी प्रकार की इबादत करे क्योंकि किसी को भी अल्लाह के गुणों वाला समझना या उसके लिए इबादत की कोई क़िस्म अख़्तियार करना, उस बुज़ुर्ग और वली को अल्लाह का शरीक ठहराना है इसी का नाम शिर्क है जो आल्लाह अख़िरत में माफ़ नहीं करेगा। मुश्रिक पर जन्नत हराम है।

Www.IslamicBooks.Website

(18)

नबी की क़ब्र की ज़ियारत की शरअ़ी हैसियत

क़ब्रों की ज़ियारत के मसाइल में एक अत्यन्त महत्व पूर्ण मसला नबी सल्ल0 की क़ब्र की ज़ियारत है। यह तो हर इल्म वाला जानता है कि नबी सल्ल0 ने यह फ़रमाया है– " मेरी क़ब्र को ईद (मेला) न बनाना, तुम जहां कहीं भी हो मुझ पर दुरूद पढ़ो तुम्हारा दुरूद मुझ तक पहुंच जाता है।"

इसी तरह आपका यह फ़रमान भी है–

" मेरी क़ब्र को तुम बुत न बना लेना कि उसकी पूजा शुरू कर दी जाए (याद रखना) उस क़ौम पर अल्लाह की कठोर यातना उतरी जिसने अपने नबियों की क़ब्रों को सज्दागाह (और उपासना स्थल) बना लिया।

(क़ायदा अज़ीमा– इमाम इब्ने तैमिया)

इन दोनों हदीसों का उद्देश्य यह है कि नबी सल्ल0 की क़ब्र मुबारक को अपने हित के लिए ज़ियारत गाह न बनाया जाए क्योंकि यही चीज़ किसी भी क़ब्र के ईद (मेला) या उपासना स्थल बनने का साधन बनती है। यही कारण है कि नबी सल्ल0 की क़ब्र भी किसी खुली जगह पर बनाने की बजाए हज़रत आइशा रज़ि0 के हुजरे में बनायी गयी ताकि लोगों का वहां आना जाना अधिक न हो। अतएव ऐसा ही हुआ। सहाबा किराम रज़ि0 के दौर में हम देखते हैं कि सहाबा किराम रज़ि0 मस्जिदे नबवी में नमाज़ अदा करने के लिए आया करते थे इसी तरह दूसरे शहरों से भी लोग हज़रत अबु बकर रज़ि0, हज़रत उमर रज़ि0, हज़रत अली रज़ि0, हज़रत उसमान

Www.IslamicBooks.Website

रज़ि0 से मिलने और दरबारे ख़िलाफ़त में बहुत से मसाइल के हल के लिए आया करते थे हाज़िरी दिया करते थे और खुलफ़ाए राशिदीन का दरबारे ख़िलाफ़त मस्जिदे नबवी ही था।

लेकिन लोग नबी सल्ल0 की क़ब्र की जियारत के लिए हज़रत आइशा रज़ि0 के हुजरे में जाने की ज़रूरत नहीं समझते थे न कोई वहां जाता ही था। यदि सहाबा व ताबओन के दौर में ज़ियारत क़ब्रे नबवी की यह दैनिक चर्चा होती तो निश्चय ही किताबों में इस का ज़िक्र होता। इतिहास कार व सीरत पाक लिखने वालों की ख़ामोंशी स्पष्ट रूप से इस बात की निशान देही करती है कि उस दौर में नबी सल्ल0 की क़ब्र को शरअी दृष्टि से बजा तौर पर वह महत्व नहीं दिया गया जो महत्व इस मसले को उस दौर के बाद फ़ित्ना व फ़साद के दौर में दे दिया गया है बल्कि नबी सल्ल0 की क़ब्र की ज़ियारत की फ़ज़ीलत में हदीसें तक गढ़ ली गयी हैं। इसके बारे में कोई सही हदीस नहीं। इमाम इब्ने तैमिया लिखते हैं " इस बारे में जो हदीस मिली वह ज़ईफ़ और मौजूअ हदीसें हैं"

इसका दूसरा कारण यह मालूम होता है कि नबी सल्ल0 पर सलात व सलाम पढ़ने का हुक्म है। सलाम तो अत्तहियात में अस्सलामु अलै क अय्युहन्नबिय्यु के शब्दों से पढ़ लिया जाता है और दुरूद शरीफ़ भी अत्तहियात के बाद पढ़ लिया जाता है। इसके अलावा अन्य समयों में भी दुरूद पढ़ा जाता है और इस बारे में नबी करीम सल्ल0 का फ़रमान है कि तुम जहां कहीं भी हो दुरूद मुझ तक फ़रिश्तों द्वारा पहुंचा दिया जाता है। इसी तरह नबी सल्ल0 ने फ़रमाया है कि अज़ान के बाद जो व्यक्ति भी अल्लाहुम्मा रब्बा हाज़िहिद दाअवतित्ताम्मति वस्सलातिल क़ाइमति आति मुहम्मदि निल वसीलत वल फ़ज़ील त वब असहु मक़ामम महमूदा निल्लज़ी व

Www.IslamicBooks.Website

अत्तहु पढ़ेगा उसके लिए मेरी शफ़ाअत हलाल हो जाएगी। इस दुआ के द्वारा नबी सल्ल0 के हक़ में भलाई की दुआ हो जाती है। मानों चौबीस घन्टों या रात व दिन में कम से कम पांच बार यह दुआए खैर और अनेक बार सलात व सलाम हर मुसलमान आपके लिए पढ़ता है इसलिए क़ब्र मुबारक पर जाने की ज़रूरत ही बाक़ी नहीं रहती क्योंकि क़ब्र पर जाकर भी यही काम करना मसनून है जो एक मुसलमान दिन और रात में अनेक बार करता है। सहाबा किराम रज़ि0 और ताबओन ने जो शरीअत की सही पहचान रखने वाले थे इस वजह से नबी सल्ल0 की क़ब्र की ज़ियारत को मामूल बनाने की ज़रूरत नहीं समझी।

तीसरा कारण यह हदीसे रसूल है कि तीन मस्जिदों के अलावा किसी और जगह का सफ़र न किया जाए।

इस हदीस के शब्द ख़बर के है लेकिन अभिप्राय इससे वर्जन है क्योंकि उसूल है कि ख़बर को ख़बर पर समझना आपत्ति जनक हो तो उसे वर्जन पर समझा जाता है जिस तरह एक और हदीस के शब्द हैं ला यबी अु हाज़िरून लिबादिन (सही बुख़ारी व मुस्लिम) " कोई शहरी किसी देहाती के लिए विक्रय न करे।

इसमें अन्दाज़ ख़बर का है लेकिन तात्पर्य वर्जन है।" किसी जान को उसकी ताक़त से ज़्यादा तकलीफ़ न दी जाए।" यह भी कलिमा ख़बर का है लेकिन अर्थ वर्जन का है। कुरआन करीम और हदीसों से इसके अनेक उदाहरण प्रस्तुत किए जा सकते हैं। इसके अलावा इसे यदि ला तुशद्दुर्रिहालु पढ़ लिया जाए तो इसकी भी गुंजाइश है और यह कालिमा वर्जन है। इस सूरत में तो वर्जन के अर्थों में कोई संदेह ही नहीं रहता है।

इस हदीस का मतलब यह नहीं है कि उपरोक्त तीन मस्जिदों

Www.IslamicBooks.Website

(मस्जिदे नबवी, मस्जिदे हराम और मस्जिदे अक़सा) के अलावा किसी भी जगह का सफ़र ही जायज़ नहीं है क्योंकि यह मतलब लिया जाएगा तो फिर तिजारत, जिहाद, ज्ञान की तलाश, किसी रिश्तेदार से मुलाक़ात या किसी नेक आदमी की ज़ियारत आदि किसी भी काम के लिए सफ़र करना जायज़ नहीं होगा जबकि इस को कोई भी मानता नहीं है। सारे उलमा और धर्म शास्त्री एवं हदीसों के विद्वानों का मत है कि उपरोक्त उद्देश्यों के लिए सफ़र जायज़ है क्योंकि उपरोक्त उद्देश्यों के लिए सफ़र में किसी विशेष जगह की पवित्रता व आस्था केन्द्र नहीं होता और हदीस जिस पर बहस चल रही है उसका उद्देश्य यह है कि किसी भी जगह को पवित्र व शुभ समझ कर अल्लाह की समीपता की प्राप्ती के लिए सफ़र न किया जाए क्योंकि इस उद्देश्य के लिए तक़र्रुबी सफ़र केवल तीन मस्जिदों ही के लिए जायज़ है।

जैसे तूर पहाड़ है। कोई व्यक्ति इस उद्देश्य के लिए वहां जाए कि यह पहाड़ इस दृष्टि से पवित्र एवं शुभ है कि यहां अल्लाह हज़रत मूसा अलैहि0 से हम कलाम हुआ था वहां जाने से मुझे भी विशेष सवाब और अल्लाह की समीपता हासिल होगी तो इस दृष्टि कोण से यह सफ़र इस हदीस के ख़िलाफ़ होगा अलबत्ता एक एतिहासिक स्थल को देखने की दृष्टि से उसका सफ़र जायज़ होगा।

हदीस के इसी मफ़हूम को देखते हुए शैखुल इस्लाम इब्ने तैमिया रह0 और दूसरे अन्य उलमा ने यह लिखा है कि जब कोई मुसलमान मदीना जाने करने का इरादा करे तो ज़ियारत और समीपता के लिए उसकी नीयत मस्जिदे नबवी की होनी चाहिए।

जब वह मस्जिदे नबवी पहुंच जाएगा तो नबी सल्ल0 की

Www.IslamicBooks.Website

मुबारक क़ब्र की ज़ियारत का अवसर उसे आप से आप मिल जाएगा। इस तरह हदीसे रसूल के ख़िलाफ़ भी इसका अमल नहीं होगा और क़ब्र मुबारक की ज़ियारत का गौरव भी हासिल हो जाएगा।

यह सावधानी बरतने का एक अच्छा उदाहरण था लेकिन बिदअत के अनुयायियों ने इमाम इब्ने तैमिया के उस दृष्टिकोण को मिटाने और उसकी बुनियाद पर उन्हें बदनाम करने की बड़ी घिनौनी कोशिश की है। यद्यपि इमाम तैमिया ने यह नहीं कहा है कि नबी की क़ब्र की ज़ियारत नाजायज़ है बल्कि इसका जवाज़ मुसतहब के बराबर है अलबत्ता हदीस रसूल की पवित्रता को देखते हुए इस बात की नसीहत करते हैं कि सफ़र करते समय नीयत मस्जिदे नबवी की जियारत की न रखी जाए। वहां जाकर फिर क़ब्र मुबारक की भी ज़ियारत कर ली जाए। इमाम साहब का यह दृष्टिकोण उपरोक्त शरअी दलीलों और सहाबा किराम व ताबअीन के चरित्र एवं कर्म के ठीक ठीक अनुसार है। काश मुसलमान विद्वान बिदअत व तास्सुब का चशमा उतार कर इसे देखें।

क़ब्र पर खड़े होकर क्या पढ़ा जाए?

नबी अकरम सल्ल0 की मुबारक क़ब्र पर खड़े होकर क्या पढ़ा जाए? हज़रत अब्दुल्लाह बिन उमर रज़ि0 का यह अमल नक़ल हुआ है कि वे–

" अस्सलातु वस्सलामु अलै क या रसूलल्लाहि" पढ़ा करते थे इसलिए यदि कोई पढ़ना चाहे तो यह भी पढ़ सकता है अलबत्ता उस का अक़ीदा यह नहीं होना चाहिए कि आप यह सलात व सलाम सुन भी रहे हैं। कुछ रिवायतों में जो यह आता है कि निकट से दुरूद पढ़ने वाले की आवाज़ मैं सुनता हूं यह रिवायत सनद के

Www.IslamicBooks.Website

हिसाब से सही नहीं है इसलिए सुनाने की नीयत से न पढ़ा जाए केवल सुन्नत समझ कर सलाम पढ़ा जाए कि आप ही का फ़रमान है कि जब तुम क़ब्र वालों के पास से गुज़रो तो अस्सलाम अलैकुम या अहलल कुबूर पढ़ा करो। इस हिसाब से क़ब्र मुबारक पर खड़े होकर सलाम पढ़ना मसनून अमल है। इसके अलावा आम मसनून दुआ " अस्स्लाम अलैकुम या अहलल कुबूर....." और दुरूदे इबराहीमी पढ़ा जा सकता है।

Www.IslamicBooks.Website

(19)

सुलतान बिन अब्दुल अज़ीज़ और क़ब्रों का ध्वस्त किया जाना

1988 ई0 में लंदन (ब्रिटेन) में हरमैन शरीफ़ैन की सुरक्षा के सिलसिले में एक भव्य अन्तर्राष्ट्रीय इस्लामी सम्मेलन आयोजित हुआ था जिसमें इंग्लैंड और यूरोप के उलमा के अलावा पूरे इस्लामी जगत के विशिष्ठ विद्वान और मुस्लिम संगठनों के नेता भी शरीक हुए थे। तीन दिन यह कान्फ्रेंस चलती रही। अरबी, उर्दू और अंग्रेजी तीनों भाषाओं में तक़रीरें हुई व लेख पढ़े गए। हर अरबी तक़रीर का अंग्रेजी और हर अंग्रेजी तक़रीर का अरबी में और उर्दू में सारांश पेश किया जाता था।

मैंने यह लेख इसी सम्मेलन के लिए लिखा था लेकिन समय की कमी के कारण इसका सारांश ही वहां प्रस्तुत किया जा सका था। अब यहां यह पूरा लेख दिया जा रहा है। (लेखक)

ईरान की धरती पर जनाब खुमैनी के नेतृत्व में जो क्रान्ति आयी उसके बारे में बड़े ज़ोर शोर से यह प्रौपगंडा किया गया कि यह "इस्लामी क्रान्ति" है और मुस्लिम जगत के मार्ग दर्शन के लिए मुसलमानों को खुमैनी के रूप में एक महान नेता व नायक मिल गया है। इस प्रारांभिक प्रौपगंडे से अच्छे अच्छे बा ख़बर लोगों की आंखें

Www.IslamicBooks.Website

चुंधिया गयीं। बहुत से लोग भ्रम का शिकार हो गए और बहुत सों ने इन्कलाबे ईरानी से बड़े सुहाने सपने देखना शुरू कर दिए।

लेकिन ईमानी सूझ बूझ रखने वाले विद्वान और शीआ धर्म की वास्तविक्ता से बा ख़बर लोग इस भ्रम का श्किार नहीं हुए। उन्होंने इसे ख़ालिस शीआ इन्क़लाब ही समझा जिससे पिछले इतिहास की रोशनी में भलाई की आशा नहीं की जा सकती थी। इसे उन्होंने बेहरत तौर पर मुस्लिम समुदाय के लिए सख़्त ख़तरनाक क़रार दिया और मुसलमानों को इसके फ़ैलते हुए जाल में फंसने से बचाने की कोशिश की।

अल्लाह का शुक्र है कि इन कोशिशों से और स्वयं ईरानियों के इस्लाम दुश्मन चरित्र एवं इरादों से मुसलमानों पर ईरानी इन्क़लाब की असल हक़ीक़त खुल कर आशकारा हो गयी खास तौर से हज के दिनों में मक़ामाते मुक़द्दसा में कुछ साल वे जिस प्रकार के हंगामें करते रहे जिस का भरपूर प्रदर्शन भी किया और जिसके नतीजे में सैंकड़ों लोग मौत का शिकार हो गए जिनमें अधिकांश ईरानी प्रदर्शन कारी और दंगाई थे।

इसके अलावा पाक व हिन्द और लन्दन आदि में ईरानी नेताओं ने कुछ तथा कथित सुन्नी जुब्बा व दस्तार वालों को अपने साथ मिलाकर " हज सेमिनार", अलकुदस सेमिनार, हिजाज़ कान्फ्रैंस के सुहाने व सुन्दर शीर्षकों से प्रोग्राम आयोजित किए जिनमें मुस्लिम जगत की एक मात्र इस्लामी हुकूमत और हरमैन शरीफ़ैन की रक्षक हुकूमत के विरुद्ध ज़हर उगला। उस पर आरोप लगाकर उसे बदनाम करने का प्रयास किया गया और अजीब अजीब प्रकार के हास्य स्पद मुतालबे रखे गए। जैसे.....

O मक्का व मदीना को खुला शहर क़रार दिया जाए

Www.IslamicBooks.Website

O इनका प्रबन्ध मुस्लिम जगत के प्रतिनिधियों पर आधारित कमेटी के हवाले किया जाए।"

O पवित्र स्थानों की बे हुर्मती का निवारण किया जाए।"

इन तमाम पहलुओं पर जिनका संबंध इन मांगों से है विद्वान, ज्ञानी, पत्रकार, लेखक आदि इन पर काफ़ी रोशनी डाल चुके हैं इस लेख में केवल अन्तिम नुक्ते के बारे में एक पहलू का स्पष्टीकरण करना अभिप्राय है और वह है इसकी इतिहासिक पृष्ठ भूमि अर्थात वे " पवित्र स्थान" कौन से हैं जिनके अनादर का दावा करके उसके निवारण की मांग निरंतर की जा रही है।

वस्तुस्थिति यह है कि हरमैन शरीफ़ैन में मुसलमानों के "पवित्र स्थान" हरम काबा, मस्जिदे नबवी, रोज़ ए रसूल और अन्य मस्जिदे हैं। और यह अल्लाह का शुक्र है कि ये सारे के सारे स्थान न केवल पूरी तरह सुरक्षित हैं बल्कि इनका प्रबन्ध व देख रेख इतने उच्च स्तर पर सऊदी सरकार ने संभाला हआ है कि जिसे मानव कोशिशों की अन्तिम सीमा कहा जा सकता है जिसकी गवाही हर हाजी दे सकता है।

अब सवाल यह है कि इनके अलावा वे कौन से पवित्र स्थान हैं जिनका अनादर या जिन्हें ध्वस्त करने का आरोप सऊदी सरकार पर लगाया जाता है और उसके निवारण की मांग की जा रही है। तो हक़ीक़त यह है कि आज से साठ साल पूर्व की घटना है जब सऊदी हुकूमत के संस्थापक अर्थात नजद व हिजाज़ के शासक सुलतान बिन अब्दुल अज़ीज़ ने इस्लामी शरीअत के अनुसार उन तमाम क़ब्रों को जो कुब्बा नुमा बनी हुई थी और शरीअत से बे ख़बर लोग वहां ग़ैर शरअी हरकतें करते थे ढा दिया था और उनको आम सादा क़ब्रों की तरह बना दिया था ताकि लोग भविष्य में उस गुमराही का

Www.IslamicBooks.Website

शिकार न हों जिस तरह पहले चले आ रहे थे।

इन पक्की क़ब्रों और कुब्बों को ही ये लोग "पवित्र स्थान" का नाम देते हैं क्योंकि इनके निकट ये मज़ारात हैं अर्थात ज़ियारत की जगह और शुभ स्थान। यद्यपि हदीसे रसूल लातुशद्दरिहालु इल्ला इला सलासतिन मसाजिदल हदीस के अनुसार ऐसे शुभ और पवित्र स्थान जिनकी ज़ियारत के लिए शद्दे रिहाल की इजाज़त है केवल तीन हैं। मस्जिदे हराम, मस्जिदे नबवी और मस्जिदे अक़्सा। इस हदीस के अनुसार इन स्थानों के अलावा किसी जगह के लिए मुख्य रूप से तक़र्रुबी सफ़र जायज़ नहीं है।

लेकिन शिआ और अहले सुन्नत के लेबिल से सुसज्जित एक गिरोह– मौलाना अहमद रज़ा खां के अनुयायी, जो पक्की क़ब्र, कुब्बा और गुम्बद नुमा इमारत को मुक़द्दस, शुभ और मज़ार (ज़ियारत की जगह) समझते हैं शद्दे रिहाल करके वहां जाने को बड़ा सौभाग्य का कारण ही नहीं मानते, हाजतों के पूरा होने के लिए भी अकसीर समझते हैं! क़ब्रों में दफ़न लोगों को हाजत रवा, मुश्किल कुशा, समीअ व बसीर, हानि व लाभ का जिम्मेदार, सब कुछ करने का अख़्तियार रखने वाला और खुदाई गुणों वाला मानते है। जिसे हिन्द व पाक, ईरान और अन्य देशों में देखा जा सकता है। यही कारण है कि इन क़ब्रों पर ख़ाना काबा की तरह परिक्रमा की जाती है। ख़ाना काबा ही की तरह इन्हें मानों अर्क़ गुलाब से गुस्ल दिया जाता है, हज की तरह सालाना उर्स किए जाते हैं और इन्हें हज का बदल समझा जाता है।

इनके नाम की नज़्र व नियाज़ दी जाती है इनकी क़ब्रों पर सज्दा तक किया जाता है इनके नाम की जगह नमाज़े तक पढ़ी जाती हैं इनसे मदद मांगी जाती है इनसे फ़रियादें की जाती हैं।

Www.IslamicBooks.Website

मतलब यह कि इन क़ब्रों में दफ़न लोगों को ईश्वरत्व के दर्जे पर बैठा दिया जाता है और इनको खाना काबा की तरह पवित्र और शुभ समझा जाता है। यूं इस्लामी शरीअत के ठीक मुक़ाबले पर एक नयी शरीअत बना ली गयी है और इस्लाम के समानांतर एक नया दीन गढ़ लिया गया है जिसमें सुन्नत की जगह बिदअत की और तौहीद की जगह शिर्क की हुकूमत है जहां भय व उम्मीद का केन्द्र अल्लाह की ज़ात नहीं, मुर्दा बुजुर्ग हैं और जहां इन मृत बुजुर्गों ही को तमाम अख़्तियारात का स्त्रोत और सर चश्मा समझा जाता है।

साफ़ सी बात है कि कोई मर्दे मोमिन जिसे अल्लाह अपनी धरती पर शासक बनाए, सत्ता व अख़्तियारात प्रदान करे और शाही प्रताप व वैभव से नवाज़े वह इस प्रकार लात व मुनात के कारोबार सहन नहीं कर सकता अतएव नजद व हिजाज़ के शासक सुलतान बिन अब्दुल अज़ीज़ के नेतृत्व व अधिपत्य में जब ये पवित्र स्थान (हरमैन शरीफैन) आए और उन्होंने देखा कि.....

मगर मोमिनों पर कुशादा हैं राहें
परसतिश करें शौक़ से जिसकी चाहें

इस शेअर के मिसदाक़ लोग पक्की क़ब्रों और कुब्बों को पूजते हैं, उन्होंने अपना ध्यान अल्लाह से लगाने की बजाए मुर्दों से लगाया हुआ है तो उन्होंने वही काम किया जो नबी सल्ल० ने अपने जीवन में किया था और जिसे बाद में फिर हज़रत अली रज़ि० ने भी अपने ख़िलाफ़त के दौर में किया कि तमाम पक्की क़ब्रों और कुब्बे ढा दिए और उन्हें आम क़ब्रों की तरह कर दिया ताकि शरीअत से अनभिज्ञ लोग पहले की तरह वहां मुश्रिकाना काम न कर सकें जैसा कि हज़रत अली रज़ि० से रिवायत है कि उन्होंने अबु अलहय्याज असदी को यह फ़रमाया.....

Www.IslamicBooks.Website

" क्या मैं तुम्हें उस काम पर नियुक्त न करूं जो नबी सल्ल0 ने मुझ से कराया था और वह यह है कि जाओ जो भी तस्वीर मूर्ति तुम्हें नज़र आए उसे मिटा दो। और जो क़ब्र ज़्यादा ऊंची हो उसे बराबर कर दो।" (सही मुस्लिम– हदीस न0 969)

" इसी तरह नबी करीम सल्ल0 ने क़ब्रों को पक्का (चूना गच करने उन पर मुजावर बनकर बैठने और उनपर इमारत बनाने से मना किया है।" (सही मुस्लिम 2– 667)

" और नबी सल्ल0 ने यहूदियों और ईसाइयों पर इस कारण लानत की कि उन्होंने अपने पैग़म्बरों और नेक लोगों की क़ब्रों को सज्दा गाह बना लिया और आपने अपनी उम्मत को इस तरह करने से मना फ़रमाया– (सही मुस्लिम– हदीस न0 530)

" एक और हदीस में ऐसे लोगों को जो नेक आदमियों की क़ब्रों को सज्दा गाह (उपासना स्थल) बना लेते हैं अल्लाह के निकट सबसे बुरा ठहराया।"

(सही मुस्लिम 1– 378)

और हज़रत आइशा रज़ियल्लाहु अन्हा फ़रमाती हैं कि "नबी सल्ल0 की क़ब्र भी इसी डर की वजह से किसी खुली जगह की बजाए हुजरे के अन्दर बनायी गयी।" (सही मुस्लिम 1– 376)

सुलतान अब्दुल अज़ीज़ रह0 ने इस्लाम की इन स्पष्ट और दो टूक शिक्षाओं की रोशनी में पक्की क़ब्रों को ध्वस्त कर तमाम क़ब्रों को बराबर कर दिया।

क़ब्रें विशेष रूप से सहाबा किराम रज़ि0 और औलिया किराम रज़ि0 की क़ब्रें बेशक सम्मान योग्य हैं जिनका अनादर कदापि जायज़ नहीं लेकिन यदि किसी जगह क़ब्रें पक्की बना दी जाएं और

Www.IslamicBooks.Website

उन पर इमारतें खड़ी कर दी जाएं तो इस्लामी शरीअत के अनुसार उन क़ब्रों और कुब्बों को ढाकर उनको आम क़ब्रों में परिवर्तित कर देना क़ब्रों का अनादर कदापि नहीं है बल्कि यह इस्लामी काम है। यह नबी सल्ल0 के इर्शाद पर अमल करना है।

सऊदी अरब का महान एतिहासिक व इस्लामी कारनामा

सऊदी हुकूमत के संस्थापक जनाब सुलतान अब्दुल अज़ीज़ रह0 ने यही काम किया है जिसका स्पष्टीकरण और ताकीद हज़रत अली रज़ि0 की उपरोक्त रिवायत और अन्य रिवायतों में की गयी है और जिसपर अल्लाह का शुक्र है उनकी संतान भी चल रही है। यह इस्लाम की एक अत्यन्त महान सेवा है जिस का सौभाग्य अल्लाह ने इस दौर में सऊद की संतान को प्रदान किया।

पक्की क़ब्रें ढाने के अलावा उन्होंने कुछ नहीं किया, किसी क़ब्र का अनादर नहीं किया, किसी पवित्र स्थान को उन्होंने नहीं ढाया लेकिन दुर्भाग्य से हिन्द व पाक में जो इस्लाम प्रचलित है उस में पक्की क़ब्र और उन पर कुब्बों का निर्माण न केवल जायज़ है बल्कि वहां पूजा पाठ के अन्य काम भी अधिकता से किए जाते हैं इसलिए इस प्रकार के लोगों ने उस समय भी सुलतान अब्दुल अज़ीज़ के विरुद्ध यही प्रोपगंडा किया था जिसे अब साठ साल बाद विभिन्न तरीक़ों से फिर से किया जा रहा है।

यह 1924– 1925 ई0 की घटना है। मैं चाहता हूं कि इसको विस्तार के साथ यहां पेश कर दूं ताकि एक तो प्रोपगंडे की हक़ीक़त स्पष्ट हो जाए दूसरे सुलतान अब्दुल अज़ीज़ के उठाए गए क़दमों की स्थिति से लोग परिचित हो जाएं और लोग किसी भ्रम का शिकार न हों।

इस संबंध में सारे तथ्य और घटनाएं उस दौर में प्रकाशित हो

Www.IslamicBooks.Website

चुकी हैं जब सुलतान अब्दुल अज़ीज़ (शाह ख़ालिद, शाह फैसल और शाह फ़हद के पिता) ने हरमैन की धरती से शरीफ़ हुसैन मक्का (जो कि अंग्रेजों का समर्थक और मददगार था और जिसने व्यवहार में मुस्लिम जगत के मुसलमानों के लिए हज करना अत्यन्त मुश्किल कर दिया था) की सत्ता ख़त्म करके नजद व हिजाज़ की हुकूमत संभाली और सारी पक्की क़बें ध्वस्त करके उनको इस्लामी शरीअत के अनुसार कर दिया था।

सुलतान के इस साहसिक क़दम को चूंकि शरीअत के ख़िलाफ़ साबित नहीं किया जा सकता था इसलिए अंध विश्वासी मुसलमानों ने आरोप प्रत्यारोप का रास्ता अख़्तियार करके अपने दिल का बुख़ार निकाला। और इस तरह की मन गढ़त चीज़ें फैलाईं कि सुलतान बिन अब्दुल अज़ीज़ ने कई मस्जिदें ध्वस्त कर दी हैं। क़ब्रों का अनादर किया है और यह व्यक्ति अब रोज़ए रसूल का अनादर करने से भी बाज़ नहीं आएगा आदि आदि।

उस दौर में सही हालात जानने के लिए हिन्दुस्तान से उलमा का एक प्रतिनिधि मंडल ख़िलाफ़त कमेटी की ओर से (जिसमें उच्च कोटि के उलमा और सरकारी विशिष्ठ लोग भी थे) स्वयं हिजाज़ गया। वहां के हालात का निरीक्षण किया और वहां उच्च अधिकारियों और स्वयं सुलतान अब्दुल अज़ीज़ रह० से मिलकर असल हालात मालूम किए। इस मंडल ने वहां से वापस आकर जो रिपोर्ट दी वह उस समय प्रकाशित हो गयी थी। यहां इस रिपोर्ट के कुछ महत्वपूर्ण अंश प्रस्तुत किए जाते हैं ताकि क़ब्रों व कुब्बों के ध्वस्त होने के आरोपों की हक़ीक़त स्पष्ट हो जाए।

"प्रभावित होने वाले स्थानों का इस प्रकार सुधार करा दिया जाएगा कि उनका आदर व सम्मान स्थापित रहे और वे सुरक्षित रहें

Www.IslamicBooks.Website

लेकिन उनके दोबारा निर्माण के संबंध में साफ़ साफ़ फ़रमाया कि इस्लामी शहर में केवल इस्लामी शरीअत ही के अनुसार फ़ैसला किया जाएगा और उसी शरअी क़ानून को यहां लागू किया जाएगा जिसकी व्याख्या बुजुर्गों और चारों इमामों ने की है। यदि दुनिया के शोधकर्ता उलमा इसका फ़ैसला कर दें कि दोबारा इन स्थलों का निर्माण करना आवश्यक है तो मैं सोने चांदी से इन्हें निर्माण कराने के लिए तैयार हूं।

इसी प्रकार मदीना मुनव्वरा के समस्त आसार का दुनिया के शोध कर्ता उलमा जो फ़ैसला करेंगे उसी के अनुसार अमल किया जाएगा और उलमा के फ़ैसले से पहले की तमाम चीजें असली शक्ल पर क़ायम रखी जाएंगी अलबत्ता रोज़ए रसूल सल्ल0 के बारे में किसी बहस की ज़रूरत नहीं। उसकी सुरक्षा और बक़ा हर मुसलमान के लिए फ़र्ज़ है और जिसकी हिफ़ाजत के लिए मैं यह घोषणा करता हूं कि मैं अपनी जान और सारे परिवार को इस पर कुरबान कर दूंगा। इसलिए मैंने मदीना मुनव्वरा मे ऐसी सेना भेजी है जो सूझ बूझ वाली है और इन्शा अल्लाह वह तमाम पवित्र स्थानों की सुरक्षा एवं उनका आदर सम्मान करेगी।

हम प्रतिनिधि मंडल के सदस्यों ने केवल इसी ज़बानी बात चीत पर ही भरोसा नहीं किया बल्कि उन सारी समस्याओं के बारे में सुलतान अब्दुल अज़ीज़ से एक पत्र भी लिखवाया है जो रिपोर्ट के साथ अंकित है।

इस प्रतिनिधि मंडल ने सुलतान मरहूम से जो लिखित पत्र (घोषणा) हासिल किया था उसका अनुवाद रिपोर्ट से ही लेकर प्रस्तुत किया जा रहा है।

Www.IslamicBooks.Website

सार्वजनिक घोषणा

अब्दुल अज़ीज़ बिन अब्दुर्रहमान अलफ़ैसल अस्सऊद की ओर से माश्रिक़ व मग़रिब के मुसलमानों के नाम–

" अम्मा बाद! यह कि मैंने ख़िलाफ़त और जमीअतुल उलमा हिन्द के प्रतिनिधियों से उन समस्याओं के बारे में बात चीत की जिनकी जानकारी मुसलमानों के लिए ज़रूरी है और जिनके बारे में हमारे विचारों की हक़ीक़त जानना अहम है। पूरी निष्ठा व स्पष्टी करण के साथ बात चीत हुई और अल्लाह का शुक्र है हमारे और उन के बीच सारी समस्याएं बहस के दौरान आयीं और उन पर पूरी पूरी सहमति हो गयी।

सत्य के दुश्मन और असत्य के दोस्त आरोप प्रत्यारोप लगा रहे हैं और मुसलमानों में विभेद फैला रहे हैं इसके लिए अपनी पूरी कोशिश कर रहे हैं वे अपनी असत्य कोशिश से अल्लाह के नूर को बुझाने की कोशिश कर रहे हैं। वे सीधे सादे मुसलमानों के दिलों में ग़लत विचार पैदा कर रहे हैं जिन्हें सही हालात व स्थिति का पता नहीं है और जो नहीं जानते कि हमारी नीति क्या है? इन भ्रम फैलाने और बोहतान लगाए जाने की कोशिश के निवारण के लिए निम्त घोषणा करता हूं जिससे दलीलों की रोशनी में सत्य व असत्य की पहचान व फ़र्क़ हो जाएगा।

1– मैं उन क़ौमों का शुक्र अदा करता हूं जिन्होंने हमारे साथ सत्य के बचाव की कोशिश की और हिन्दुस्तानी क़ौम का मुख्य रूप से शुक्र अदा करता हूं कि उसने ऐसे समय में अरबों की हिमायत का बेड़ा उठाया और उनके विवाद को सुलझाने की ओर ध्यान दिया जब कि अरब स्वयं आपस की रंजिश और दुश्मनी का शिकार होकर अपने धार्मिक और राष्ट्रीय कर्तव्य को भूल चुके थे। मैं

Www.IslamicBooks.Website

इसलिए भी हिन्दुस्तान के मुसलमानों का आभारी हूं कि उन्होंने सबसे पहले मेरी दावत पर लब्बैक कहा। अल्लाह उन्हें इसका इनाम दे।

2' मैं अब भी इसी कथन पर कायम हूं जिसे मैंने मुस्लिम जगत के देशों को दावत देते समय व्यक्त किया था। मोतमर के आयोजित किए जाने की ज़रूरत है जो उन मामलों पर सोच विचार करे जो हिजाज़ के तमाम मुसलमानों के लिए महत्व रखते हैं। रास्तों के सुधार व सुरक्षा, हर आने वाले के लिए राहत व आराम के संसाधन की कुशादगी, डाक आदि की संभावना की सुविधा, ऐसे मामलों के प्रबंधों से संबंधित हिज़ाज़ में हम और वे मिलकर ज़िम्मेदारी कुबूल करें। रास्ते खुलने के [1] बाद शीघ्र ही ऐसी मोतमर इस्लामी की दावत फिर दी जाएगी।

3– हिज़ाज़ की पूर्ण स्वतंत्रता की सुरक्षा हम अपनी जान तक से करेंगे कि ग़ैर मुस्लिम का प्रभाव हिजाज़ में स्थापित न हों [2] इसमें हमारे दीन व शर्फ़ की सुरक्षा है।

4– पवित्र शहर का क़ानून इस्लामी शरी अत के अनुसार होगा और सारी समस्याओं का फ़ैसला विचार विमर्श के बाद सारे देशों के शोध कर्त्ता उलमा करेंगे।

5–मैं इस बात को बड़े ज़ोर दार शब्दों में आप से कहता हूं कि मदीना मुनव्वरा हर मन अमनन की हैसियत रखता है। इसमें कत्ल व रक्त पात व बर्बादी जायज़ नहीं। इसके शर्फ़ व सम्मान के कारण

1– सुलतान का उस समय तक हिजाज़ पर कन्ट्रोल नहीं हुआ था और कुछ इलाक़ों में अभी तक जंग या जंग की हालत मौजूद थी जिसके कारण रास्ते ख़राब थे।

2– सुलतान मरहूम के बारे में उनके दुश्मनों और धार्मिक विरोधियों ने यह अफ़वाह भी उड़ाई थी कि सुलतान अंग्रोजों का समर्थक है और अब वहां अंग्रेजों अधिपत्य हो जाएगा। सुलतान मरहूम ने इन शब्दों में इस अफ़वाह का खंडन किया है।

Www.IslamicBooks.Website

मैं लम्बे समय से केवल इस घेराव पर बस कर रहा हूं यद्यपि इसमें बड़ी भारी आर्थिक क्षति हो रही है और यद्यपि अल्लाह की मदद से मदीना मुनव्वरा पर एक घंटे में क़ब्ज़ा कर सकता हूं लेकिन मैं इस पवित्र शहर की सलामती चाहता हूं। मैंने लश्कर को आदेश दे दिया है कि किसी भी सूरत में मदीने पर हमला न करे और उस समय तक दाखिल न हो जब तक दुश्मन स्वयं हथियार डाल कर हमारे हवाले न कर दे। मदीना मुनव्वरा में जो इमारतें हैं उनके बारे में पहले की तरह ही अमल किया जाएगा।

हमारे दुश्मन यह मशहूर कर रहे हैं कि जब हम मदीना मुनव्वरा पर क़ब्ज़ा करेंगे तो रोज़तुर्रसूल सल्ल0 को ध्वस्त कर देंगे। कभी नहीं, कदापि नहीं कोई मुसलमान ऐसा नहीं केरगा। यदि कोई ऐसा करे तो मैं उसकी सुरक्षा में अपनी जान, माल, सन्तान कुरबान कर दूंगा। मैं अल्लाह के हरम मक्का और रसूल के हरम मदीना में कोई फ़र्क नहीं करता हूं। नबी सल्ल0 ने मदीने को हरम बनाया जिस तरह सैयदना इबराहीम अलैहि0 ने मक्का को हरम किया। मेरी अल्लाह से दुआ है कि उस काम की तौफ़ीक़ दे जिससे वह राज़ी हो।

मुहर सुलतान

28 ज़िलहिज्जा 1343 हि0

घोषणा के अनुसार अ़मल

मदीना के सम्मान के सिलसिले में सुलतान अब्दुल अज़ीज़ ने जो विश्वास दिलाया था उस पर कितनी सख़्ती से अमल किया गया इसका अन्दाज़ा सुलतान के उन आदेशों से किया जा सकता है जो उन्होंने अपनी इस सेना को दिए जो मदीना को फ़तह करने के लिए नियुक्त थी। उसका कुछ विवरण उसी दौर के एक हिन्दुस्तानी समाचार पत्र ने हिजाज़ के एक प्रख्यात समाचार पत्र के हवाले से

Www.IslamicBooks.Website

प्रकाशित किया था जो इस प्रकार है।

"इसी हफ़्ते की डाक में हमारे पास "उम्मुल कुरा" का जो पर्चा पहुंचा है उससे मालूम होता है कि इब्ने सऊद ने और अधिक सावधानी बरतने के लिए नजद के एक प्रसिद्ध विद्वान शैख़ उमर बिन सलीम को मदीना भेजा है ताकि वे शरअी हैसियत से सेना के घेराव की निगरानी करें और जंग के दौरान में किसी ऐसे कार्य को न करने दें जो मदीना के आदर के विरुद्ध हो। इसी के साथ एक अध्याधेश सेना के नाम भी भेजा है जिसमें अल्लाह का वास्ता देकर उसे आदेश दिया है कि हरम की सीमा में दुश्मनों के ख़िलाफ़ कोई जंगी कार्रवाई न करें। "उम्मुल कुरा" का बयान है कि नजदी सेना को सुलतान के इन निरंतर ताकीदी आदेशों से बहुत अधिक हानि उठाना पड़ी है अतएव वह एक बार की घटना बयान करता है कि जब नजदी सेना ने सुलतानी आदेशों के अनुसार हर प्रकार की जंगी कार्रवाइयों को बन्द कर दिया तो मदीने की घिरी हुई सेना को यह आभास हुआ कि अब शायद नजदियों का साहस टूट गया है और यह सोच कर उन्होंने ठीक फ़जर की नमाज़ के समय हमारे कैम्प पर हमला कर दिया।

शुरू में तो इस अचानक हमले से हमारी सेना में सख्त बिखराव पैदा हो गया और वह दो हिस्सों में बंट गयी मगर बाद में अपनी ताक़त जमा करके उन पर जवाबी हमला किया और उन्हें भारती हुई मदीना के निकट तक पहुंच गयी लेकिन ठीक शहर के सामने जब कि फ़तह के दरवाज़े बिल्कुल खुले हुए थे अचानक शैख़ उमर सलीम ने सेना को ललकारा कि ख़बरदार आगे न बढ़ना, सुलतान की अवज्ञा तुम्हें कठोर यातना का हक़दार बना देगी। आखिर मजबूर होकर हमारी सेना को रुक जाना पड़ा और मदीने

Www.IslamicBooks.Website

की पूर्ण विजय होते होते रह गयी।

इन हानियों से इब्ने सऊद की सेना में जैसी कुछ निराशा फैल रही होगी इसका अन्दाज़ा हर व्यक्ति कर सकता है लेकिन वह उच्च हैसियत व प्रतिष्ठा वाले इन्सान मदीना के आदर सम्मान की ख़ातिर न केवल इन बातों को सहन करता रहा बल्कि मुस्लिम जगत को सनतुष्ट करने के लिए अपनी सेना को ताकीद कर रहा है कि वे तिरस्कृत और पराधीन हिन्दुस्तानीयों के प्रतिनिधियों की निगरानी व निर्देश पर अमल करे [1] यद्यपि कोई स्वाभिमान बादशाह अपनी सेना के लिए इस तुच्छता को पसन्द नहीं करता।"

(अलजमी अत– दिल्ली– 10 दिसम्बर 1925)

यह सारा विवरण प्रकाशित हो चुका है। मैंने यह सारा मेटर "मसला–हिजाज़ पर नज़र" सम्पदित मौलाना सनाउल्लाह अमृतसरी 1925 से नक़ल किया है। यह तमाम जानकारी डा0 हकीम मलिक इनायतुल्लाह नसीम सोहदरवी ने अपनी किताब" मौलाना ज़फ़र अली खां और उनका अहद;; में भी नक़ल की है।

खिलाफ़त कमेटी के तीन प्रतिनिधि मंडल

खिलाफ़त के प्रतिनिधि मंडल के बारे में यह स्पष्टी करण कर देना अनुचिन न होगा कि तीन बार हिन्दुस्तान से खिलाफ़ कमेटी की ओर से प्रतिनिधि मंडल गए।

पहला मंडल 1924 ई0 में सैयद सुलेमान नदवी के नेतृत्व में गया जबकि शरीफ़ हुसैन और सुलतान अबदुल अज़ीज के बीच जंग हो रही थी। इस मंडल को शरीफ़ हुसैन के लड़के अमीर अली ने सुलतान अब्दुल अजीज़ तक न जाने दिया। आखिर कार दो महीने

1– सुलतान ने सेना को हुक्म दिया था कि वह हिन्दुस्तानी प्रतिनिधि मंडल की निगरानी में काम करे। यह इसी ओर इशारा है।

Www.IslamicBooks.Website

ठहरने के बाद यह प्रतिनिधि मंडल जद्दा से ही वापस आ गया।

दूसरा प्रतिनिधि मंडल 1925 ई0 में गया जिसमें मौलाना मुहम्मद अली जौहर, मौलाना जफ़र अली खां, मौलाना मुहम्मद इरफ़ान और शुएब कुरैशी थे और उस समय सुलतान की पेश क़दमी जारी थी जिसके कारण क़ब्रों व पवित्र स्थलों को गिराए जाने की अफ़वाहें फैल रही थी और इस कारण एक विशेष वर्ग की भावनाएं भी बड़ी गर्म थी। इस मंडल की रिपोर्ट उन दिनों प्रकाशित हुई जिसका कुछ हिस्सा इससे पूर्व गुज़र चुका है इसी दूसरे प्रतिनिधि मंडल की भेजी हुई हैं।

तीसरा प्रति निधि मंडल 1926 ई0 में उस समय गया जब पूरा हिजाज़ सुलतान अब्दुल अज़ीज़ के अधीन आ गया था और सुलतान ने वायदा के अनुसार एक मोतमर इस्लामी का आयोजन किया था जिस में हिजाज़ से संबंधित समस्याओं पर सोच विचार करना था। इसी मोतमर इस्लामी में शिर्कत करने के लिए यह प्रतिनिधि मंडल गया था। इसका नेतृत्व भी पहले मंडल की तरह सैयद सुलेमान नदवी ने किया था और इसके सदस्य मौलाना मुहम्मद अली जौहर, मौलाना शौकत अली और शुऐब कुरैशी थे।

इस अवसर पर हिन्दुस्तान से दो प्रतिनिधि मंडल और भी गए थे। एक अहले हदीस कान्फ्रेंस की ओर से और दूसरा जमीअतुल उलमा ए हिन्द की ओर से।

इस मोतमर इस्लामी में भी हिजाज़ की सलतनत और वहां ग़ैर मुस्लिम प्रभाव व दबाव आदि समस्याओं के साथ क़ब्रों को ध्वस्त करने की भी समस्या थी जिस पर बहस की गयी और हिन्दुस्तानी प्रतिनिधि मंडल का ध्यान आकर्षित कराया गया कि इस मामले में जल्द बाज़ी से काम लिया गया है जिसकी वजह से हिन्दुस्तानी

Www.IslamicBooks.Website

मुसलमानों में बेचैनी पायी जाती है। यदि यही काम मुस्लिम जगत के शौध कर्त्ता उलमा की राय हासिल करने के बाद किया जाता (जो आपकी राय से भिन्न न होती) तो ज़्यादा बेहतर होता। इसके जवाब में सुलतान मरहूम ने फ़रमाया–

आपने जो कुछ कहा सही है, मैं दिल से यही चाहता था लेकिन मुश्किल यह है कि आप लोग हमारी क़ौम से परिचित नहीं हैं। इनके पक्षपाती क़बाइल ने धमकी दी कि हमने इसलिए जिहाद और अपनी जान व माल कुरबान किया था कि शिर्क की रस्मों व स्थानों का ख़ात्मा और कुरआन व सुन्नत को स्थापित किया जाए। इसलिए जल्द से जल्द उन कुब्बों और इमारतों को ध्वस्त कर दिया जाए वर्ना हम स्वयं उनको गिरा देंगे। इस धमकी के बाद हमारे लिए दो ही सूरतें थी या उनको बल पूर्वक इससे रोकते या गिराने की अनुमति दे देते। पहली स्थिति में गृह युद्ध का खतरा था और दूसरी सूरत में फ़ित्ना व फ़साद का। जिससे मदीना वासियों को भी मुसीबत का शिकार होना पड़ता और दूसरी इमारतों को भी सदमा पहुंचता और उनकी मांग ग़ैर शरअी भी नहीं थी बल्कि खुदा और रसूल के हुक्म और किताब व सुन्नत के अनुसार थी। इसलिए मैंने चीफ़ जास्टिस से इच्छा प्रकट की कि वे स्वयं मदीना जाकर इस काम को अंजाम दें। जो चीज़ खुदा और रसूल के आदेशा नुसार है उसमें मतभेद न होना चाहिए।"

(देखिए हयाते सुलेमान)

मौलाना सुलेमान नदवी का स्पष्टीकरण

उपरोक्त विवरण की पुष्टि उस दौर के धार्मिक विद्वानों के लेखों से भी होती हुई मिलती है। अतएव मौलाना सुलेमान नदवी अपने एक अध्यक्षीय भाषण में जो उन्होंने जमीअतुल उलमा ए हिन्द

Www.IslamicBooks.Website

के सातवें अधिवेशन आयोजित कलकत्ता 1926 ई0 में पढ़ा था। लिखते हैं।

" अल्लाह का शुक्र है कि हिजाज़ में अशान्ति और जंग की बजाए शान्ति व भाइचारे का माहौल है। पिछले साल जो हाजी गए और इस साल जो प्रतिनिधि मंडल गया सबने रास्तों की सुरक्षा और क़बाइल के आज्ञा पालन और हालत की स्थिति के सामान्य होने की ख़बर दी है और सुलतान की व्यक्ति गत विशेषताओं और योग्यताओं की प्रशंसा की। जंग के दौरान कुछ पवित्र इमारतों के साथ अनादर की ख़बरें बहुत कुछ बढ़ा चढ़ा कर बतायी जाने वाली निकलीं।

हिजाज के सही आसार की सुरक्षा एवं जीवन की इच्छा हर मुसलमान दिल में मौजूद है और निश्चय ही आगे मोतमर इस्लामी का कर्तव्य होगा कि उनकी हिफ़ाज़त की ज़िम्मेदारी वर्तमान सरकार से हासिल करें इस संबंध में जमी अतुल उलमाए हिन्द से यह प्रार्थना बेजा न होगी कि पवित्र क़ब्रें मकबरे और पवित्र स्थान और आसारे सल्फ़ से जो कुछ शरअी अहकाम साबित हों। उनसे मुसलमानों को बाखबर करे और उलमाए " नजद व हरमैन" को भी इससे सहमत करने की कोशिश की जाए।

(जमी अतुल उलमाए हिन्द– 1–357)

मौलाना अबुल कलाम आज़ाद का स्पष्टीकरण

मौलाना अबुल कलाम आज़ाद मरहूम ने भी 1925 ई0 में अमीर इब्ने सऊद और हरमैन शरीफ़ैन और गुम्बदों के ध्वस्त की घटना के शीर्षक से एक अत्यन्त चिंतनीय लेख लिखा था। इस लेख से भी पिछले स्पष्टीकारण की पुष्टि होती है लेकिन इससे पहले कि मौलाना आज़ाद के लेख को प्रस्तुत किया जाए इस पृष्ठभूमि का

Www.IslamicBooks.Website

स्पष्टीकरण ज़रूरी है जिसमें यह लेख लिखा गया था।

सुलतान अबुल अज़ीज़ से पूर्व हिजाज़ (मक्का, मदीना और ताइफ़ आदि) का गवर्नर शरीफ़ हुसैन था जो तुर्की की खिलाफ़ते उसमानिया की ओर से नियुक्त था। शरीफ़ हुसैन खिलाफ़ते उसमानिया से विद्रोह करके न केवल अंग्रेज़ों से मिल गया था बल्कि उसने एक तरफ़ अरब के कुछ दूसरे हिस्सों जैसे शाम, फ़लस्तीन और इराक़ में अंग्रेज़ों और फ्रांसीसियों के लिए हस्तक्षेप का दरवाज़ा खोल दिया और दूसरी ओर उसने हरमैन शरीफ़ैन में जुल्म व अत्याचार का बाजार गर्म कर रखा था यहां तक कि दुनिया के मुसलमानों के लिए हज करना भी मुश्किल हो गया था।

अतएव अक्टुबर 1924 ई0 में सुलतान अब्दुल अज़ीज जो उन दिनों नजद व उसके आस पास के इलाक़े का शासक था मैदाने जंग में उतरने पर मजबूर हुआ। उसने अपने एक जरनैल खालिद बिन लूई को पेश क़दमी का हुक्म दिया। इसके नतीजे में ताइफ़ फ़तह हो गया और मक्का का रास्ता खुल गया। इन्हीं दिनों शरीफ़ हुसैन की हुकूमत से अलहदगी के बाद उसका बेटा अमीर अली हिजाज़ का बादशाह बन गया। इसी बीच सुलतान अब्दुल अज़ीज़ के असाकर ने हिजाज़ के बाक़ी हिस्से भी फ़तह कर लिए। आखिर अमीर अली जद्दा छोड़ कर जाने पर मजबूर हो गया। नजदी जरनैल (खालिद बिन लूई) ने ताइफ़ और मक्का में कुछ कुब्बे ध्वस्त करा दिए जहां लोग बुत परस्तों की तरह मुश्रिकाना रूप से इबादत किया करते थे जिस पर सुलतान के धार्मिक विरोधियों ने शोर मचा दिया।

मौलाना आज़ाद ने जब यह लेख लिखा उस समय सुलतान अब्दुल अज़ीज़ नजद से हिजाज़ पहुंच कर मक्का में उमूरे नाज़िम

Www.IslamicBooks.Website

बन चुका था फिर भी अमीर अली जद्दा पर क़ाबिज़ था जो हाजियों की बन्दरगार था और उसने हाजियों के लिए इस बन्दरगाह को बन्द कर दिया था अतएव सुलतान ने तुरन्त " क़नफ़ज़ह लैत" और राबग की बन्दरगाहों में हाजियों के उतरने का प्रबन्ध कर दिया। इस प्रकार यह लेख मानो हिजाज़ के आख़िरी फ़ैसला हो जाने और सुलतान अब्दुल अज़ीज़ के मलिकुल हिजाज़ कन्नजदैन बन जाने से पहले का है अब मौलाना के लेख का सारांश पढ़िए–

सबसे पहले मौलाना ने कुछ क़ब्रों व कुब्बों के गिराए जाने की ख़बर से जो परेशानी पैदा हुई उसके कारण गिनाए हैं जो निम्न हैं।

1– टेढ़ी सोच रखने वाले, असत्य प्रेमी अमीर अली के एजेन्टों और खिलाफ़त कमेटी से व्यकित गत बैर रखने वालों ने यह शोर मचाया। मौलाना के शब्दों में इस काम को सही समझने वाले सारे तत्व एक हो गए। जानकारी, तथ्यों की हक़ीक़त से अनभिज्ञ, पक्षपाती, निजी स्वार्थों के पुजारी, फ़साद फैलाने वालों ने एक हंगामा मचा दिया। एक ओर अमीर अली के एजेन्ट हैं दूसरी ओर वे लोग हैं जिन्हें मर्कज़ी खिलाफ़त या कमेटी या उसके कुछ सदस्यों से व्यक्तिगत मुख़ालिफ़त थी अतः वे भी पूरी सरगर्मी से इस में शरीक हो गए। (तबर्रुकात आज़ाद– पू0 262–263)

2– दूसरा कारण फ़िरक़ा बन्दियों का है लिखते हैं–

तीसरी ओर मुस्लिम समुदाय के शरीर का वह रोग है जो उन्हें बांट रहा है अर्थात धार्मिक गुट बन्दियों का सोया हुआ फित्ना, इसे भी चीख चीख़ कर जगाया जा रहा है कि लोगों में किसी न किसी तरह धार्मिक गुट बन्दी की आग भड़कायी जाए। (पृ0 263)

3– तीसरा कारण जन सामान्य की भेड़ चाल है। मौलाना लिखते हैं। मुसीबत हर तरह के लोगों के लिए है। वह केवल जोश

Www.IslamicBooks.Website

व भावना के प्राणी हैं न उनमें मस्तिष्क है न इरादा व अख्तियार। जब चाहते हैं थोड़ी देर के लिए उत्तेजित हो जाएं मुख्य रूप से ऐसी हालत में कि बड़ी आसानी से धार्मिक भावना को भड़काया जा सके। इस काम में न तो निष्ठा है न सच्चाई, झूठ का कारख़ाना कितना ही शक्ति शाली बनाया जाए आखिर उसे टूटना और विनष्ट ही होना है। सदैव रहने के लिए केवल हक़ीक़त ही है। (पृ0 264)

इसके बाद मौलाना ने मुसलमानों को सत्य के अनुसरण और सन्तुलित रूप से चितंन की दावत दी है कि हमें लोगों और जमाअतों से कोई ताल्लुक़ नहीं। हमारे समक्ष केवल उद्देश्य और उसूल हैं। हमें न अमीर इब्ने सऊद से कोई ताल्लुक़ है न शरीफ़ हुसैन से। इन दोनों से हमारी कोई व्यक्तिगत दुश्मनी नहीं है जो कुछ है इस्लाम के लिए है। यदि हम हरमैन शरीफ़ैन की सुरक्षा के लिए भी अपने अन्दर निष्पक्ष रूप से निष्ठा पैदा नहीं कर सकते तो हमें विश्वास कर लेना चाहिए कि हम इस्लाम के महत्वपूर्ण उद्देश्यों के लिए कुछ नहीं कर सकतें।"

फिर आगे लिखते हैं–

" यह पता है कि शरीफ़ हुसैन का ज़बरदस्ती का क़ब्ज़ा इस्लाम और मुसलमानों के लिए एक बड़ी बुरी एतिहासिक मुसीबत थी देश की मुहब्बत की दृष्टि से उसका देश निकाला हर अरब के लिए एक क़ौमी फ़रीज़ा था और शरअी आदेशानुसार सारी दुनिया के मुसलमानों पर फ़र्ज़ किफ़ाया था। हम मुसलमानाने हिन्द और ख़िलाफ़त कमेटी ने अमीर इब्ने सऊद से विनती नहीं की कि शरीफ़ हुसैन पर हमला कर दे और उसने स्वयं अपने तौर पर हमला किया तो शरीफ़ के आगे हाथ नहीं जोड़े कि ना मर्दों की तरह बिना मुक़ाबला किए भाग जाए। जो कुछ पेश आया वह वहां के हालात

Www.IslamicBooks.Website

का प्राकृतिक नतीजा था। स्वयं शरीफ़ हुसैन ही के दुष्कर्म ही इसका कारण बने। अधिकांश उसकी वह कार्य प्रणाली और बर्बरता पूर्ण अमल था जो 9साल से नजद वालों के ख़िलाफ़ किया जा रहा था अलबत्ता ख़िलाफ़त कमेटी का फ़र्ज था कि इस अवसर पर हालात में सुधार हेतु जो कुछ कर सकती थी उसमें कोताही न करती। अब फ़ैसला करना चाहिए कि उसने ऐसा किया या नहीं?

हर मनुष्य जिसका तास्सुब इतना अधिक न पहुंचा हो कि तथ्यों के इन्कार पर अड़ जाए, मानेगा कि ख़िलाफ़त कमेटी ने ताइफ़ पर हमले की ख़बर सुनते ही वह सब कुछ किया जो हिन्दुस्तान के मुसलमान या कोई ऐसी ही जमाअत जो मौजूदा हालात में कर सकती थी उसने नजद के हमले की ख़बर सुनते ही अमीर इब्ने सऊद के नाम लगातार कई सन्देश भेजने आरंभ कर दिए जिन में जंग व मारकाट को रोकने और तमाम पवित्र स्थानों व मज़ारात की सुरक्षा के लिए साफ़ शब्दों में ज़ोर दिया गया था।

अमीर इब्ने सऊद की ओर से जो जवाब मिले वह खिलाफ़त कमेटी के सन्देशों सहित हर समय प्रकाशित होते रहे। लड़ाई की बाबत अमीर का जवाब था कि " ज़िम्मेदारी उन पर नहीं शरीफ़ पर है। पवित्र स्थानों की सुरक्षा व सम्मान के बारे में जवाब वही था जो प्राकृतिक रूप से मुसलमान का हो सकता है अर्थात उनका पूर पूरा सम्मान किया जाएगा। ख़िलाफ़त कमेटी ने इस पर भी सन्तोष न किया। एक प्रतिनिधि मंडल भेजा ताकि इब्ने सऊद से मिलकर भविष्य के बारे में बात चीत हो सके।

इन प्रतिनिधियों ने वहां जाकर अमीर इब्ने सऊद की प्रशासनिक व्यवस्था को भली प्रकार देखा। वहां यह बात भी देखी और मालूम की कि कुछ क़बाइल नजद ने मक्का में दाखिल होकर

Www.IslamicBooks.Website

मक़बरों व कुब्बों के गुम्बद गिरा दिए और कुछ को पूरी तरह ध्वस्त कर दिया। उन्होंने इस बात पर पूरी सरगर्मी के साथ आपत्ति की और भविष्य के लिए इत्मीनान चाहा कि ऐसा न होगा। अमीर ने पूरी उदारता के साथ इनको सुना और आगे के लिए इत्मीनान दिलाया।

हर प्रकार की ग़लती और ग़लत फ़हमी सहन की जा सकती है लेकिन अज्ञानता और तास्सुब का क्या इलाज है? जिन जाहिलों ने सूझ बूझ और इन्साफ़ के खिलाफ़ क़सम खाली हो उन्हें कौई समझाए भी तो कैसे? क्योंकि हम इल्म व इन्साफ़ से अपील करते हैं लेकिन इल्म व इन्साफ़ को वजूद में नहीं ला सकते। हिजाज़ के मामले में हमारा संबंध शरीफ़ हुसैन से भी रह चुका है अब अमीर इब्ने सऊद से भी यही बात कहनी है जो घटनाएं घटित हुई और आगे घटने की संभावना है। जोश में आने और लड़ मरने की कोई बात नहीं। ठंडे दिल से केवल इतनी बात पर सोच विचार कर लो कि जहां तक हमारी कोशिश और उसके प्रभावित होने का संबंध है इन दोनों ज़मानों में परिस्थिति क्या रही हैं ?

इसके बाद मौलाना ने बताया है कि शरीफ़ हुसैन के पास सिवाए अंग्रेज के धोखा भरे वायदों के कोई ताक़त न थी। मर्कज़े इस्लाम उसका बहुदवेवाद और जुल्म इतना अधिक था कि पूरे इस्लामी इतिहास में अपनी मिसाल नहीं रखता। पूरे नौ साल तक न केवल मुसलमानाने हिन्द सारी दुनिया के मुसलमान उस से बेज़ार रहे और उसके विरोध में तैयार।

लेकिन इसके विपरीत अमीर अब्दुल अजीज़ इब्ने सऊद अरब की सब से बड़ी सशस्त्र ताक़त का मालिक है। उसने तलवार के बल पर शरीफ़ को भागने पर मजबूर किया और हिजाज़ पर क़बिज़ हो गया। उसने मर्कज़े इस्लाम को एक ऐसे फ़ित्ने से बचाया जिसे

Www.IslamicBooks.Website

सारे मुसलमानों को करना था। उसका हिजाज़ में दाखिला शान्ति व्यवस्था की शुभ सुचना था।

इसी के साथ हिन्दुस्तान के मुसलमानों के नुमाइन्दे वहां जाते हैं और उसकी सेना और उसके कमांडर शरीफ़ ख़ालिद की इस कार्रवाई पर आपत्ति प्रकट करते हैं कि कुछ मक़बरे व कुब्बे गिरा दिए गए। इनको गिराने के हक़ में यद्यपि उसके पास बहुत सी दलीलें व तथ्य थे फिर भी वह हिन्द के मुसलमानों की आपत्ति को सुनता है और आम घोषणा करता है और हर तरह से इत्मीनान दिलाता है इस प्रकार की कोई घटना अब नहीं घटेगी। अब ज़रा न्याय करो कि दोनों हालतों में से कौन सी हालत इत्मीनान के क़बिल है। क्या अक़्ल व न्याय का इतना अधिक अकाल पड़ गया कि इतनी साफ़ और स्पष्ट बात भी लोगों की समझ में न आएगी।

(तबर्रुकात आज़ाद– 272–277)

मौलाना अबुल कलाम का यह पूरा लेख बड़ा महत्व पूर्ण और अध्ययन करने योग्य है। हमने इसके आवश्यक हिस्से ही यहां दिए हैं जिनसे सुलतान अब्दुल अज़ीज़ के धार्मिक विरोधियों की आपत्तियों की पूरी हक़ीक़त स्पष्ट और सुलतान मरहूम के उठाए गए क़दमों की पुष्टि होती है।

Www.IslamicBooks.Website

मौलाना ज़फ़र अली खां का ना र ए हक़

मौलाना ज़फ़र अली खां ने भी अनेक नज़मों में सुलतान मरहूम और उनके विरोधियों के बारे में अपनी राय व्यक्त की है। यहां उनकी नज़मों से कुछ अशआर प्रस्तुत किए जाते हैं–

ख़तरा है शर्क़े अर्दुन व तफ़्रे इराक़
इब्ने सऊद शाह शरीअत नवाज़ को
यह इसलिए कि नजद में उसने किया है फ़ाश
दीने मुबीन के सीज़दा सद साला राज़ को
इस्लाम को जो अरब में क़र्नों से है नसीब
खोना वह चाहता नहीं इस इम्तियाज़ को

इब्ने सऊद को मिला मर्तबए यदुल्लाही
ताज़ा बहाना मिल गया रहमते कर दिगार को
आज़रियों को बज़्म में मोहलते रक़्स भी न दी
मुसतफ़वी चराग़ ने बू लहबी शरार को

नजदियों पर थोप दो इलज़ामें तौहीने हरम
ख़्वाह उन्होंने बुर्जी इस की एक भी ढाई न हो

हरम वालों की जमीअत जमीअत परेशां हो नहीं सकती
कि है इस दौर में शीराज़ा बन्द इब्ने सऊद उसका

न बचा फ़रेब फ़िरंग से कोई ताजोर कोई
मगर एक हरम का वह पासबां जो है सर ब सज्दा नमाज़ में

Www.IslamicBooks.Website

नहीं फ़ैज इब्ने सऊद का यह है लुत्फ़ रब्बे वदूद का
कि सल्फ़ के अहद की रौनक़े नज़र आ रही है हिजाज़ में

मौलाना ज़फ़र अली खां की ये नज़में उनके काव्य संग्रह में देखी जा सकती हैं। जगह की कमी उनको नक़ल करने में रोक है फिर भी दो शेअर और सुन लीजिए जिस में क़ब्रों के ध्वस्त किए जाने के मसले में शिआ बरेलवी गठ बंधन की ओर इशारा किया है जिसके मज़ाहिर आज भी शिआ लोगों के कुफ़रिया अक़ीदों और हरमैन शरीफ़ैन के बारे में उनके घिनौने इरादे स्पष्ट हो जाने के बावजूद नज़र आ रहे हैं। मौलाना ज़फ़र अली खां मरहूम इस सनवियत पसन्द एकता " सनवियत" के बारे में फ़रमाते हैं–

शिआ बरेलवी से गले मिल रहा है आज
और लखनऊ में दोनों का क़ारूरा मिल गया

शिओं और सुन्नियों में हो चला है इत्तिहाद
यह भी एक साज़िश कहीं यारो कलीसाई न हो

और कलीसाई साज़िश का यह दायरा और अधिक विकासित होता नज़र आ रहा है क्योंकि हम देख रहे हैं कि कुछ देशों और इलाक़ों में कुछ ऐसे लोग भी ईरानी इन्क़लाब का समर्थन कर रहे हैं जो इस्लामी हुकूमत की स्थापना के आवाहक और अलमबरदार हैं और यूं यह तसलीस (तीन में का एक एक में तीन) सुन्दर शीर्षकों से बिखराव और फूट का वह पुराना फ़ितना फिर से खड़ा करने की नापाक कोशिश कर रही है जो महीनों व साल की गर्दिशों में दब गया था।

इससे पूर्व जो कुछ बताया जा चुका है उन सब से स्पष्ट है कि सुलतान अब्दुल अज़ीज़ पर पवित्र स्थानों की बे हुरमती का आरोप

Www.IslamicBooks.Website

है बे सबूत और निराधार है। कुछ पक्की क़ब्रों या उनपर बने हुए गुम्बद यदि कहीं ढाए गए हैं तो इससे अभिप्राय किसी का अनादर व तिरस्कार कदापि नहीं बल्कि शरीअत इस्लामी का हुक्म समझ कर ही ऐसा किया गया है।

सुलतान अब्दुल अज़ीज़ की यह चुनौती अभी तक जवाब से महरूम है कि यदि दुनिया के इस्लामी शरीअत के उलमा और शोध कर्त्ताओं की रू से पक्की क़ब्रों और उन पर बने गुम्बद आदि बनाने की शरअी इजाज़त हमें दिखा दें तो मैं उन को दोबारा सोने चांदी से बनाने के लिए तैयार हूं।

अफ़सोस कि इस चुनौती को तो उनके धार्मिक विरोधियों ने भी स्वीकार नहीं किया और कोई उचित सबूत क़ब्रों के पक्का बनाने और उन पर कुब्बा निर्माण करने और वहां अन्य उपासना आदि करने का तो प्रस्तुत नहीं किया जा सकता लेकिन आज जबकि यह बहस कभी की समाप्त हो चुकी है इसे दोबारा उठाकर उस सऊदी हुकूमत के खिलाफ़ लोगों के ज़हनों को दूषित करने की तैयारी की जा रही है। जो इस समय अपनी कुछ कोताहियों के बावजूद मुस्लिम जगत की एक मात्र ऐसी इस्लामी रियासत है जहां इस्लामी दंड देना और न्याय का चलन है।

जिस दृष्टि से भी देखा जाए सऊदी हुकूमत के खिलाफ़ इस प्रकार का अभियान जिसका प्रर्दशन " हज सेमिनार" " अल कुदस सेमिनार" और " यौमे जन्नतुल बक़ीअ" और " हिजाज़ कान्फ्रेंस आदि में देखने में आ रहा है कोई जवाज़ नहीं है। इस लिए इस बात की सख्त आवश्यकता है कि एक ओर इस बात की जांच की जाए कि सारे ड्रामे के पीछे कौन है? इसके प्रेरक क्या हैं इसके कारण क्या हैं? और वह असल निर्देशक कौन है जिसके इशारे और कहने

Www.IslamicBooks.Website

पर यह अदाकारी व कलाकारी की जा रही है। और दूसरी ओर इस फ़ित्ने को दबाने और शिर्क व बिदअत को समाप्त करने के लिए तौहीद परस्त मुसलमानों को एक प्लेट फ़ार्म पर जमा किया जाए। तीसरे नम्बर पर जिन शाहीनों को " कव्वों की संगत" ने ख़राब कर दिया है और वे ईरानी प्रोपगंडे का शिकार होकर ईरान के नापाक इरादों को बलवान बनाने का कारण बन रहे हैं। उन्हें समझाया जाए और उनके दिलों को शिर्क व बिदअत की गन्दगियों से पाक साफ़ करके उन्हें तौहीद व सुन्नत के नूर से उज्जवल किया जाए।

Www.IslamicBooks.Website

ततहीरे यसरिब

(मौलाना ज़फ़र अली खां)

दाख़िल हुआ मदीने में इब्ने सऊद आज
फिर जोश पर है रहमते रब्बे वदूद आज
तौहीद का अरब में अलम सर बुलन्द है
क़ाइम हुई है शरअ नबी की हुदूद आज
हैं ग़ाज़ियाने नजद पयम्बर के पासबां.....
यसरिब में ख़ेमा ज़न हैं खुदा के जुनूद आज
मुन्किर बताए जाते थे जिस नामे पाक के
उस पर ये लोग भेज रहे हैं दुरूद आज
इस झूठ का कि गुम्बदे ख़िज़रा हुआ शहीद
सुलतान ने बिखेर दिया तार व पौद आज
हमको है पासे अहद कि इब्ने सऊद को?
किस को हैं याद अज़्ल के अहूद उकूद आज
कल जिसके नाम से भी न आलम था आशना
हम उसके पास लेके चले हैं वुफूद आज
रग रग में मौजे खूने सलफ़ दौड़ने लगी
मिटने लगा है तफ़रक़ा हस्त व बूद आज
क़बरस में है हुसैन [1] तो फ़ैसल [2] इराक़ में
नाबूद है हिजाज़ में उनका वजूद आज
एक रह गया अली [3] सो उसे देख देख कर

1–2–3– हुसैन, फ़ैसल और अली ये तीनों अंग्रेज के वफ़ादार थे और इसी वफ़ादारी के बदले में अरब के टुकड़े करके अंग्रेज ने उनको छोटी छोटी हुकूमतों का शासक बनाया था। यह नज़्म जिस समय लिखी गयी जद्दा उस समय अभी बिन हुसैन शरीफ़ मक्का के ही

Www.IslamicBooks.Website

याद आ रही है मुझको हदीसे समूद आज
जद्दा से रह गराए फ़लस्तीन ही तो है
जो बन रहा है जाए पनाहे यहूद आज

(बहारिसतान–282)

(पिछले पृ० का हाशिया) क़ब्ज़े में था फिर आसार साफ़ बता हरे थे कि शीघ्र ही यह जद्दा से भी भाग जाएगा। अतएव जल्द ही पूरे हिजाज़ की सफ़ाई हो गयी। नजद के शासक सुलतान अब्दुल अज़ीज़ पूरे हिजाज़ के सुलतान बन गए। यही नजद व हिजाज़ अब सऊदी अरब कहलाता है। (लेखक)

Www.IslamicBooks.Website

अमीरूल मोमिनीन इब्ने सऊद (रह0)

मौलाना ज़फ़र अली खां (मरहूम)

जब उठाता है हिजाबे आसतीन इब्ने सऊद
आंख से लाता है नज़रे गौहरी इब्ने सऊद
अपने मौला से करा लेता है नज़्र अपनी क़बूल
काबा को दहलीज़ पर रख कर जबीं इब्ने सऊद
जिसको दुनिया में लुटाया था रसूलल्लाह ने
है उसी गंजे सआदत का अमीं इब्ने सऊद
एक न एक दिन होगी ततहीर इराक़ व शाम की
हल यह मुशिकल भी करेगा बिलयक़ीं इब्ने सऊद
वक़्त जब आया कि फ़ित्नों से हो पाक अर्ज़े हिजाज़
बन गया तक़दीर रब्बुल आलमीं इब्ने सऊद
उसके क़दमों पर चलेगी सारी दुनिया एक दिन
है मुहम्मद का गुलामे कमतरीं इब्ने सऊद
दौलत उसकी है कसीर इक़बाल उसका गुलाम
सलतनत अंगुशतरी है और नगीं इब्ने सऊद
एक सफ़ में सब खड़े होकर न पढ़ सकते थे नमाज़
पर न होता साहिबे ज़ौक़े यक़ीं इब्ने सऊद
ताकती है खिदमने तातार को बर्क़े फ़िरंग
लेकिन उसकी ज़द में आ सकता नहीं इब्ने सऊद
लरज़ा बर अंदाम है बातिल कि गूंजा नजद में
बेश–ए इस्लाम से शेरे अरीं सऊद

Www.IslamicBooks.Website

तलाशे-हक़

लेखक

इर्शादुल्लाह मान

नज़्रे सानी

हाफ़िज़ अब्दुस्सलाम बिन मुहम्मद हिफ़्जुल्लाह०

मौलाना अबुल हसन मुबशिशर रब्बानी हिफ़्जुल्लाह०

प्रकाशक

अल किताब इन्टर नेशनल

बटला हाउस, जामिया नगर, नई दिल्ली.25

Www.IslamicBooks.Website

नज्द की लैला पे मर जाने लगे मजनूं नए
हिन्द का महमल है महमल नशीं इब्ने सऊद
है लिबासे काबा का पेबन्द ज़र्रीं उसकी जेब
ग़ैब में लाया है लूलूए समी इब्ने सऊद
है दिले मिल्लत पे नक़्श उसकी इरादत हर तरफ़
हुक्मरां है अज़ मराकश ता ब चीं इब्ने सऊद
लिखिए उसको हारिसे शरअे मुबीं अब्दुल अज़ीज़
कहिए उसको हामिए दीने मुबीं इब्ने सऊद
हम ज़बान फिर कुदसियों का हो के कहिए बरमला
है लक़ब उसका अमीरुल मोमिनीं इब्ने सऊद

(बहारिस्तान–273)

Www.IslamicBooks.Website

مَنْ يُّرِدِ اللّٰهُ بِهٖ خَيْرًا يُّفَقِّهْهُ فِى الدِّيْنِ (بخاری)

अल्लाह तआला जिस के साथ भलाई का इरादा फ़रमाते हैं उसे दीन में सूझ बूझ प्रदान कर देते हैं

इस्लामी तर्ज़े ज़िन्दगी से संबंधित फ़िक़्ही अहकाम व
मसाइल फ़िक़्ह की प्रख्यात किताब "अद्दुर्रुल बहिय्यह"
का अनुवाद व व्याख्या शोध सहित

फ़िक़्हुल हदीस

भाग 1

शोध कर्त्ता
मुहद्दिसुल अस्र अल्लामा नासिरुद्दीन अलबानी

सम्पादन
हाफ़िज़ इमरान अय्यूब लाहौरी

अल किताब इन्टर नेशनल
मुरादी रोड, बटला हाउस, जामिया नगर, नई दिल्ली-25
फ़ोनः 26986973,9312508762

Www.IslamicBooks.Website

इस्लाम की बेटियां

लेखक
मुहम्मद इसहाक़ भट्टी

अल किताब इन्टर नेशनल
मुरादी रोड, बटला हाउस, जामिया नगर
नई दिल्ली 25

Www.IslamicBooks.Website

सबीलुर्रसूल

लेखक

मौलाना हकीम मु० सादिक़ सियालकोटी (रहिम०)

अनुवादक

सैयद शौकत सलीम सहसवानी

प्रकाशक

अल किताब इन्टर नेश्नल

मुरादी रोड, बटला हाउस,

जामिया नगर, नई दिल्ली-२५

Www.IslamicBooks.Website

सीरत के सच्चे मोती

سیرت کے سچے موتی

मुरत्तिब

अमीर हम्ज़ा

नज़रे सानी

मौलाना जमशेद आलम सलफी

अल-किताब इन्टरनेशनल

F-50 B, मुरादी रोड, बटला हाउस, जामिया नगर नई दिल्ली - 25

फो. 9312508762, 011&26986973

E-mail: alkitabint@gmail.com

Www.IslamicBooks.Website

बरेलवियत

तारीख़ व अक़ाइद

लेखक

अल्लामा एहसान इलाही ज़हीर शहीद

अनुवाद

सै॰ शौकत सलीम सहसवानी

प्रकाशक

अलकिताब इन्टर नेशनल

F-50B, मुरादी रोड, बटला हाऊस

जामिया नगर, नई दिल्ली-110025

Www.IslamicBooks.Website

Qabrparasti

Al-Kitab International الکتاب انٹرنیشنل

Jamia Nagar, New Delhi-25

Www.IslamicBooks.Website